गोपालविलास

मूल

कार्ष्णि प्रकाशन

ॐ

✦ श्रीरमणविहारिणे नमः ✦

उदासीन शिरोवतंस श्रीमत्परमहंसावतंस

निखिलशास्त्रनिष्णात कविवर्य्य

स्वामी कार्ष्णि गोपालदासजी विरचित

गोपालविलास

(मूल)

प्रेरक :

स्वामी कार्ष्णि गुरुशरणानन्द

प्रकाशक:

कार्ष्णि प्रकाशन

श्री रमणरेती, महावन (प्रा० गोकुल)

मथुरा

प्रकाशक:

कार्ष्णि प्रकाशन

श्री रमणरेती, महावन (प्राचीन गोकुल)
मथुरा, यू. पी.

सम्पर्क :

दूरभाष : (05661) - 62225 मथुरा

विशेष :- गोपालविलास छपवाने के इच्छुक भक्तजन कार्ष्णि प्रकाशन से सम्पर्क करें।

सर्वाधिकार कार्ष्णि प्रकाशन के आधीन हैं।

षष्ठ संस्करण : 1999 | 2000 प्रतियाँ

न्यौछावर : 51.00

मुद्रण : गोपसन्स पेपर्स लि. ए-14, सेक्टर-60, नोएडा-201301

मंगलाचरण

मंगल माधव नाम धाम पुनि, मंगल प्रभु पद ध्याना।
मंगल लक्ष्मी पति लीला अथ, मंगल हरि गुण गाना॥
मंगल श्याम रूप मनमोहन, मंगल आतम ज्ञाना।
मंगलमय पुन संत समागम, मंगल वेद पुराना॥१॥

मंगल गीता गान भागवत, मंगल रूप बखाना।
मंगल श्रीमथुरा वृन्दावन, मंगल गोकुल माना॥
मंगल नन्दग्राम गोवर्धन, मंगलमय बरसाना।
मंगल श्री यमुना जल मज्जन, मंगल सब व्रज जाना॥२॥

मंगलमय गुरु के पद पंकज, मंगलमय गुरु की प्रिय बानी।
मंगलमय गुरु की दिनचर्या, मंगलमय गुरु भक्ति बखानी॥
मंगलमय श्रीगुरु के दर्शन, मंगलमय गुरु कीरति मानी।
मंगलमय गुरु की नख शिखलों, मूरति वेद पुराणन गानी॥३॥

पावन गंग तरंग महा पुन, पावन ज्यों हरिनाम अपारा।
पावन संत समागम ज्यों पुन, पावन ज्यों नित ब्रह्म विचारा॥
पावन ज्यों यमुना जल मज्जन, पावन ज्यों श्रुति पाठ उचारा।
त्यों गुरु कार्ष्णि पदाम्बुज पावन, ताहि विषे मम कोटि जुहारा॥४॥

॥ गुरो : शरणम् ॥

हरि प्रापति कर मुख यह कारण।
प्रेम सहित हरि चरित उचारण॥

परमपूज्यपाद प्रातः स्मरणीय अनन्त श्री विभूषित कार्ष्णि कलापाचार्य स्वामी कार्ष्णि गोपालदास जी महाराज कृत कार्ष्णि सर्वस्व '**गोपालविलास**' भक्ति साहित्य की एक अनुपम कृति है। आचार्यश्री ने श्रीमद्भागवत एवं गर्गसंहिता आदि ग्रन्थों का मनन एवं मन्थन करके तथा उनके यथार्थ को अपनी अनुभूति का विषय बनाकर '**गोपाल विलास**' रूपी नवनीत प्रस्तुत किया है। ज्ञान, वैराग्य एवं भक्ति से समन्वित यह ग्रन्थ आचार्यश्री की प्रौढ़तम कृति है।

प्रस्तुत ग्रन्थ संस्कृत भाषा से अनभिज्ञ रसिक भावुकों को कृष्ण कथा रसास्वादन प्रदान कराने का एक सफल प्रयोग है। श्रीकृष्ण की मधुर लीलाओं के ललित वर्णन के साथ-साथ, यत्र-तत्र कर्त्तव्याकर्त्तव्यबोध-निर्देश एवं प्रौढ़ दार्शनिक तथ्यों के निवेश-पूर्वक ज्ञान, कर्म एवं भक्तिका अद्भुत सामञ्जस्य प्रस्तुत ग्रन्थ की उल्लेखनीय विशेषता है। फलतः, सद्गृहस्थों, साधकों के साथ-साथ विद्वानों के लिए भी प्रस्तुत ग्रन्थरत्न की उपादेयता सुस्पष्ट है।

यद्यपि 'गोपालविलास' जैसे पीयूष चषक का समान्य-जन के रसास्वादन हेतु परमकारुणिक श्री सद्गुरुदेव द्वारा

विरचित 'कार्ष्णिहार्दप्रकाशनीटीका' अपनी सहजता एवं सुबोधता के लिए प्रसिद्ध है, किन्तु कार्ष्णि जन, नित्यपाठ में सुविधा की दृष्टि से श्रीमद्‌गोपालविलास मूल मात्र के संस्करण की अपेक्षा कर रहे थे। मूल मात्र का प्रकाशन कई वर्ष पूर्व हुआ था, जिसे जिज्ञासुओं ने हाथों-हाथ अपना लिया था। प्रभु की कृपा से कृष्णचरितानुरागी जनों के लाभ हेतु पुनः मूल ग्रन्थ का यह संस्करण प्रकाशित हो रहा है। इसमें मूल ग्रन्थ के रूप में सटीक प्रकाशित श्रीमद्‌गोपालविलास के मूल पाठ को ही रखा गया है।

श्री स्वामी कार्ष्णि गुरुसेवानन्द के उत्साह एवम् अनथक परिश्रम के फलस्वरूप ही यह ग्रन्थ रत्न भावुक भक्तों को उपलब्ध हो रहा है। प्रूफ संशोधन में मेरे स्नेहपात्र प्रो. रमेश कुमार पाण्डेय (निदेशक, शोध एवं प्रकाशन विभाग, श्री लाल बहादुर शास्त्री संस्कृतविद्यापीठ नई दिल्ली) तथा अत्याधुनिक लेजर टाइप सेटिंग एवं मुद्रण की व्यवस्था में श्री राधेश्याम गुप्ता (नीता प्रकाशन, नई दिल्ली) ने उल्लेखनीय योगदान किया है। इन सभी के प्रति तथा प्रत्यक्ष एवम् अप्रत्यक्ष रूप से इस अनुष्ठान से जुड़े समस्त जन हार्दिक साधुवाद एवम् आशीर्वाद के पात्र हैं।

प्रभु रमणविहारी से प्रार्थना है कि ग्रन्थ के पठन, संकीर्तन एवम् अनुशीलन कर्त्ताओं को अपने चरणों में निरन्तर वर्धमाना रति प्रदान करें।

प्रभुचरणशरण

स्वामी कार्ष्णि गुरुशरणानन्द

ॐ

श्रीरामकृष्णाभ्यां नमः

विज्ञापनपत्रम्

सर्व सज्जनों को विदित हो कि भगवद्भक्ति का माहात्म्य सकल श्रुति-स्मृति-पुराण इतिहासों में प्रसिद्ध है, और प्रत्यक्ष भी भगवज्जन अनुभव करे हैं। कलियुग में तो विशेष करके योगादिक के दुस्साध्य होने से भगवद्भक्ति ही संसार-सागर में तरणी रूप है। सो भक्ति यद्यपि अनेक प्रकार की है परन्तु उन सब में भगवान् के चरित्रों का श्रवण वा गान ही मुख्य है, क्योंकि जब तक गुण-कर्म-कीर्ति का श्रवण नहीं होवे है, तब तक यथावत् भगवान् में मन नहीं लगे है। भक्तवत्सलता आदिक गुण श्रवण किए हुए शीघ्र चित्ताकर्षण करे हैं। सो भगवान् अनेक प्रकार के अवतार धार के अनन्त चरित्र करे हैं। परन्तु तिन में श्रीकृष्णचन्द्र जी के चरित्र ऐसे अद्भुत, अलौकिक और नट-खट हैं, कि जो समाधिस्थ ज्ञानी लोगों के चित्त को भी आकर्षित करे हैं, जैसे श्रीमद्भागवत में कहा है:-

आत्मारामाश्च मुनयो निर्ग्रन्था अप्युरुक्रमे।
कुर्वन्त्यहेतुकीं भक्तिमित्थंभूतगुणो हरिः॥

अर्थ— जिन मुनीश्वरों की चित् की जड़ग्रन्थि का भेदन भी हो गया है अर्थात् उन्हें आत्मानात्मा का भिन्न-भिन्न निश्चय करा है, और जो योगाभ्यास से ब्रह्मानन्द द्वारा पूर्ण हैं; तथा किसी प्रकार की उनकी कामना नहीं है, वे भी श्रीकृष्णचरित्रों का श्रवण-गायन आदि रूप निष्काम भक्ति करे हैं। (शंका) यदि वे कृतकृत्य हैं, तो गान श्रवण में क्यों परिश्रम करे हैं? उत्तर— भगवद्गुण ही ऐसे है, जो ज्ञानी योगीजनों के चित्त को भी बलपूर्वक हरण करे हैं। सो पुराणों में देखा जावे है कि नारद सनकादिक शुकादिक कृतकृत्य हुए भी भगवान् के चरितों का गान करे हैं। सो कृष्णजी के चरित्र श्रीवेदव्यास गर्गाचार्य्यादिक सभी महर्षियों ने अनेक प्रकार से वर्णन करे हैं। परन्तु जिनकी संस्कृत में गति नहीं है, उनके ऊपर कृपा करके श्रीसूरदासादिक अनेक कवियों ने भाषा काव्य रचे हैं। परन्तु तिन सर्व गन्थों में शृंगार रस की अधिकता है, और जो बहुत से सद्गृहस्थ विरक्त संन्यस्त विद्वान् हैं, वे शृंगार रस को कम पसंद करते हैं। परन्तु श्रीकृष्णचन्द्रजी के चरित्र-गान-श्रवण करने को उनके चित्त में उत्कंठा बनी रहती है। किन्तु वे शृंगाररस-गर्भित ग्रन्थों को देख के उपराम होवे हैं। तिन सज्ज्नों के आनन्दार्थ अत्यंत सूक्ष्म शृंगार रस विस्तृत वात्सल्य वा करुणारसादि नव रसों से भूषित श्रीकृष्ण जी के

चरित्र इस गोपाल-विलास ग्रन्थ में वर्णन करे हैं। यद्यपि इस ग्रन्थ के रचने का मुख्य कारण निज चित्त का उत्साह है अर्थात् अपने चित्त के आनन्दार्थ परम प्रिय की लीला गायन करी है, तो भी परोपकार भी गौण कारण है। सो सज्जनों से यह प्रार्थना है कि सर्वज्ञ और सर्व-शक्तिमान् तो एक ईश्वर है, जीव अल्पज्ञ और अल्प शक्तिमान् प्रसिद्ध है। इसमें जो कुछ न्यूनता, काव्य-दोष आपको प्रतीत होवे, सो शोध लीजिये। परन्तु यह प्रार्थना मेरी उनसे है, जो कि संस्कृत-भाषा, काव्य-दोष, अलंकार-पिंगलादि जानते हैं, बिना जाने जो न्यून अधिक करेगा उसको यह दोष होगा :-

चौपाई—

बिन जाने जो अक्षर छेदत। कलम बाणकर कविउर बेधत॥
ता अघकर तिसकी मति नासत। ग्रंथतत्त्व तिसको नहि भासत॥

तात्पर्य यह है कि भाषा-काव्य में तीन प्रकार के शब्द होवे हैं— शुद्ध संस्कृत, अपभ्रंश संस्कृत, तथा लौकिक। ईश्वर, माया, जीव, अज्ञान, भक्ति, ज्ञान, विराग इत्यादिक शुद्ध संस्कृत हैं, और सत्य-नित्य-भृत्य-इंद्रिय-समय आदिक शब्दों के स्थान में यथाक्रम सत, नित, भृत, इंद्री, समे आदिक जो शब्द हैं, सो अपभ्रंश संस्कृत हैं अर्थात् बिगड़ी हुई संस्कृत हैं। अभिप्राय यह है कि प्राकृत भाषा काव्य में छंद- शुद्धि मुख्य है, शब्द-शुद्धि गौण है। जहाँ शुद्ध

शब्द रखने से छंद-भंग होवे तहाँ अपभ्रंश शब्द रखे जाते हैं। जहाँ छंद की हानि नहीं है वहाँ शुद्ध शब्द लिखा जाता है। किंच किसी स्थान में छंद के वास्ते मिले हुए अक्षर भिन्न-भिन्न करे जावे हैं। और यकार के स्थान में जकार लिखा जावे है, जैसे आत्मा, कार्य, आर्य, भ्रम के स्थान में आतमा, कारज, आरज, भरम इत्यादिक, तथा किसी ठिकाने ह्रस्व, दीर्घ और दीर्घ ह्रस्व किए जाते हैं, जैसे नारी, गंगा, एक शब्द के स्थान में नारि गंग, इक, तथा भक्ति, मति, नमामि ठौर भक्ती, मती, नमामी इत्यादिक शब्द भी अपभ्रंश शब्द के अवांतर भेद कहे जाते हैं। और हलवाई मिठाई रोटी, आदि लौकिक शब्द अनंत हैं। सो कहीं लकार शकार वकार के स्थान में यथा क्रम से रेफ सकार बकार लिखे जाते हैं। सो कहीं तो अनुप्रास के लिये हैं, कहीं लौकिक भाषानुसार हैं। कहा गया है-

रलयोर्डलयोश्चैव शसयोर्बवयोस्तथा।
वदन्त्येषां च सावर्ण्यमलङ्कारविदो जनाः ॥

प्राकृत भाषा काव्य की रीति जो नहीं जाने हैं, सो केवल संस्कृत का तो पण्डित इसको नहीं शोध सके हैं। आतम अनातम आदि अपभ्रंश शब्दों को शुद्ध करेंगे तो छंद भंग हो जावेंगे केवल भाषा का कवि भी नहीं शोध सके है, क्योंकि जहा छंद के लिये संधि है, वहाँ संधि अलग करने से छंद भंग होवे है, जैसे विबुधोत्तम सर्वात्मा

के स्थान में विबुध उत्तम सर्व आत्मा इत्यादिक। किंच भगवत् रसिकों से विशेष प्रार्थना है कि रासलीला आदिक चरित्र जो इसमें नहीं लिखे हैं, सो कारण है कि राजा महाराज के गोप्य अन्तःपुर के जो चरित्र हैं, सो प्रौढ़ पुत्र वा मित्र वा अनुचर नहीं देख सके हैं, न वर्णन कर सके हैं। किन्तु दासी-वर्ग का ही तिस में अधिकार है।

इस प्रकार अपनी अनधिकारता से नहीं लिखे है। अथवा पिष्ट-पेषण की न्याईं जान के नहीं लिखे। पूर्व कवियों ने बड़े जोर-शोर विस्तार से रासलीला आदि का श्री राधाजी के चरित्रों सहित वर्णन करा है, उनसे अधिक अपनी शक्ति न देख के, नहीं लिखे है। अथवा भगवच्चरित्र अनन्त हैं, श्री वेदव्यासादिक सर्वज्ञ कवियों ने भी सब नहीं लिखे। जो-जो उनको प्रिय लगे थे, सो-सो लिखे हैं। इस प्रकार जो मुझे प्रिय लगे हैं, सो मैंने लिखे हैं। यद्यपि भगवत्-चरित्र सर्व कल्याणकारी हैं, तथापि रुचि की विचित्रता है, अथवा परमहंस विरक्तों को श्रीकृष्ण चरितामृत पान कराने वास्ते नहीं लिखे, क्योंकि रासलीला में शृंगाररस अवश्य लिखना पड़े है, सो उनको प्रिय नहीं। (शंका—) शुक सनकादिकों से भी आजकल के परमहंस अधिक विरक्त हैं, जो रासलीला को वर्णन करे हैं। (उत्तर—) शुकादिक समर्थ हैं, उनके चित्त को कोई विषय विकारी नहीं कर सके हैं, सदा

उनकी स्वस्वरूप में स्थिति है। आजकल के परमहंस अशक्त हैं, समीचीन चित्त निरोधकारक योग संप्रदाय के अभाव से शुकादिकों की समता नहीं पाय सके है। इस वास्ते चित्त को सर्वथा स्थिर करने में असमर्थ हुए चित्तविक्षेप कारक शृंगार-रस-गर्भित ग्रंथ विचार से उपराम होवे हैं अथवा मेरा कुछ अपराध आप जानें, तो भी क्षमा कीजिए। जो कुछ मैंने लिखा है, सो आपके परम प्रिय श्रीकृष्णचन्द्रजी का चरित्र ही लिखा है, कुछ सांसारिक व्यवहार नहीं है। किंच यह ग्रंथ किसी एक ग्रन्थ की भाषा नहीं है किन्तु श्रीमद्भागवत, गर्गसंहिता, कृष्णखण्ड, हरिवंशादिक अनेक ग्रंथों का सार निकासा गया है।

इत्यलं विज्ञेषु च खलेषु च॥ हरिः ॐ॥

भवदीय कृपाभिलाषी,
कार्ष्णि गोपालदास,
रमणरेती-महावन, मथुरा जी

अथ श्रीमद्गोपाल विलास-विषयानुक्रमणिका

विषय | पृष्ठ संख्या

प्रथमस्तालः-१

विषय	पृष्ठ संख्या
◆ मंगलाचरण	१
◆ गर्गाचार्यजी का नैमिषारण्यगमन	२
◆ श्रीशौनकगर्गाचार्यसंवाद	२
◆ नारदजी का जनकपुरगमन	३
◆ जनक द्वारा नारदजी का सत्कार	३
◆ जनकनारदमोक्ष-विषय प्रश्नोत्तर निर्गुणसगुणप्रश्नोत्तर	३
◆ भगवान् का अवतार कब और क्यों प्रश्नोत्तर	५
◆ जनक का नारदजी से कृष्णचरित्र वर्णन हेतु प्रार्थना	६
◆ नारदजी का कृष्णलीलावर्णनप्रारम्भ	७
◆ गौ-रूप से पृथ्वी का ब्रह्मलोकगमन	७
◆ ब्रह्माजी द्वारा पृथ्वी को धैर्य देना	७
◆ देवताओं सहित ब्रह्माजी का वैकुण्ठ गमन	८
◆ ब्रह्मकृत भगवत्स्तुति	८
◆ भगवान द्वारा ब्रह्माजी के आने का कारण पूछना	९
◆ ब्रह्माजी की कंसादिक राक्षसों से रक्षानिमित्त प्रार्थना	९
◆ भगवान् के अवतार-धारण की प्रतिज्ञा तथा देवताओं को पृथ्वी में जन्म लेने की आज्ञा	१०
◆ लक्ष्मीनारायणसंवाद	११

द्वितीयस्तालः-२

विषय	पृष्ठ संख्या
◆ मंगलाचरण	१३
◆ वसुदेवदेवकीविवाहादि	१३
◆ आकाशवाणी द्वारा कंस को चेतावनी	१३
◆ देवकी पर कंस का क्रोध तथा वसुदेव द्वारा निवारण	१४
◆ देवकी का विलाप	१५

विषय	पृष्ठ संख्या
♦ देवकीषट्सुत की उत्पत्तिवधादि	१८
♦ श्री बलराम-जन्मोत्सवादि	१८
♦ वेदव्यासजी का बलरामजी के दर्शनार्थ आना	१९
♦ श्रीव्यासजी द्वारा समाधान	२०
♦ व्यासजी द्वारा बलदेव दर्शन व स्तुति	२१
♦ भगवान का देवकीगर्भ-प्रवेश व कंस को भय	२१
♦ देवताओं की गर्भस्तुति	२२
♦ ब्रह्माजी द्वारा देवकी को गर्भ से प्रभु आगमन का संकेत	२५
♦ श्रीकृष्णाविर्भाव	२५
♦ वसुदेवकृत श्रीकृष्णस्तुति	२६
♦ देवकीकृतस्तुति	२७
♦ वसुदेव-देवकी पूर्वजन्म कथा	२९
♦ श्रीकृष्णजी का गोकुलगमनादि	३०
♦ कंसकृत कन्याबध तथा पश्चात्ताप	३२
♦ कंस-मंत्री-प्रलाप	३४
♦ नन्दगृह श्रीकृष्णजन्मोत्सव	३५
♦ श्रीकृष्णदर्शन-निमित्त शंकर-पार्वती संवाद	३९
♦ शंकर का नन्दराजजी के गृह आना तथा श्रीकृष्ण दर्शन में यशोदा-शंकर जी का संवाद	४०
♦ शंकर जी को दर्शन न कराके घर से बाहर करना तथा शंकरजी का समाधिस्थ होना	४२
♦ श्रीकृष्ण जी को मूर्छित देख यशोदाजी को भय	४६
♦ यशोदाजी का शंकरजी को प्रार्थना कर घर में लाना	४६
♦ शंकरजी का श्रीकृष्ण को गोद में खिलाना आदि	४७
♦ शंकरजी का प्रसन्न होकर कैलाश-गमन	४८

विषय	पृष्ठ संख्या

तृतीयस्तालः-३

♦ मंगलाचरण	४९
♦ नन्दराजजी का मथुरागमन	४९
♦ वसुदेव नन्द संवाद	५०
♦ पूतना वध लीला	५१
♦ शकटासुर-वध	५४
♦ तृणावर्त बध	५६
♦ वसुदेवजी का गर्गाचार्य जी को गोकुल भेजना	५७
♦ नन्द द्वारा गर्गाचार्य का सत्कार करना	५८
♦ श्रीरामकृष्णनामकरण	५९
♦ श्रीरामकृष्णबालचरित्र	६१
♦ प्रभावती के घर खेलना आदि	६३
♦ प्रभावती को पातिव्रत-धर्मोपदेश	६४
♦ माखनचोरी-लीला	६५
♦ श्रीकृष्णप्रभावती-प्रेमवचन	६८
♦ उपालम्भलीलाप्रारम्भ	७१
♦ श्रीकृष्ण का श्यामासखी स्वरूप से चन्द्रानना के घर जाना	७१
♦ चन्द्राननाश्यामासखी संवाद	७१
♦ श्यामासखीयशोदा संवाद	७१
♦ चन्द्राननायशोदा संवाद	७३
♦ श्यामासखीयशोदा संवाद	७४
♦ यशोदा श्रीकृष्ण संवाद	७५
♦ श्रीराधिकाजी का योगिनी रूप धारकर	७६
♦ यशोद्रा से कृष्ण के गुणवर्णन	७७

विषय	पृष्ठ संख्या
♦ श्रीकृष्णयशोदा संवाद	८०
♦ श्री कृष्ण का गोपियों को मनाना	८०
♦ गोपियों का श्रीकृष्णप्रेम	८२

चतुर्थस्तालः-४

♦ मंगलाचरण	८३
♦ श्रीकृष्ण का मृत्तिका का भक्षण	८३
♦ यशोदा को विराटस्वरूप दिखाना	८४
♦ यशोदा का प्रेमगीत	८५
♦ श्रीकृष्ण का दुग्धपात्र तोड़ना	८७
♦ यशोदा का कोप वचनादि	८७
♦ श्रीकृष्ण का ऊखलबंधन	८९
♦ गोपी और बलराम के शोक-वचन	८९
♦ यमलार्जुन-मोचन	९०
♦ यमलार्जुनकृत श्रीकृष्ण की स्तुति	९२
♦ यमलार्जुन पूर्व-जन्मकथा, श्री कृष्ण उपदेश	९३
♦ नन्द जी द्वारा श्रीकृष्ण को ऊखल से खोलना आदि	९४
♦ मालिनीलीला	९४
♦ श्रीकृष्णजन्म-नक्षत्रोत्सव	९५
♦ मध्याह्न भोजन लीला	९६
♦ रात्रि भोजन-लीला	१००
♦ प्रातःकाल उत्थान-लीला	१००

पञ्चमस्तालः-५

♦ मंगलाचरण	१०२
♦ गोपों का गोकुल से गमनविचार	१०२

विषय	पृष्ठ संख्या
◆ वृन्दावन गमन व निवास	१०४
◆ नन्दरामकृष्ण-संवाद	१०४
◆ वत्सचारण	१०६
◆ वत्सासुरवध	१०६
◆ वत्सासुर-पूर्वजन्मकथा	१०६
◆ वकासुरवध-लीला	१०८
◆ वकासुर-पूर्वजन्म-कथा	१०८
◆ अघासुर-वधलीला	१११
◆ अघासुरपूर्वजन्मकथा	११२
◆ बालमण्डल-भोजनलीला, भोजन-गुण-दोष-कथन में हास्य	११४
◆ श्रीरामकृष्ण-स्वरूपवर्णन	११७
◆ ब्रह्म द्वारा वत्सबालकहरण लीला	११७
◆ बलरामजी का सन्देह तथा श्रीकृष्ण से पूछना	११९
◆ ब्रह्माजी का पश्चात्ताप	१२०
◆ ब्रह्माजी कृत श्रीकृष्णस्तुति	१२१
◆ बछरों को लेकर श्रीकृष्ण का आना, बालकों की प्रसन्नता	१२७
षष्ठस्तालः-६	
◆ मंगलाचरण	१२९
◆ गोचारणलीला	१२९
◆ श्रीकृष्णजी द्वारा बलरामजी की प्रशंसा	१३०
◆ श्रीकृष्णजी द्वारा बलरामजी की चरण-सेवा परस्पर स्नेह-वचन	१३२
◆ धेनुकासुर-वधलीला	१३३

विषय	पृष्ठ संख्या
♦ धेनुकासुर-पूर्वजन्म-कथा	१३४
♦ श्रीकृष्ण का कालिय कुण्ड (दह) में प्रवेश	१३६
♦ नन्द-यशोदादिकों को शोक	१३९
♦ श्रीकृष्ण का कालिय नाग पर ताण्डव नृत्य	१४०
♦ नागपत्नीद्वारा श्रीकृष्णस्तुति	१४०
♦ कालिय का यमुना-निवास का कारण वर्णन	१४४
♦ कालिय का यमुना से सागर जाना	१४५
♦ दावानल लगने से गोपों को शोक	१४६
♦ श्रीकृष्ण का दावानल-पान	१४७
♦ नाविक लीला प्रारम्भ	१४८
♦ यमुनापार निर्जनवन में गोपियों को भय, प्रभु से पुकार	१४८
♦ मल्लाह रूप से श्री कृष्ण का नौका लाना	१४९
♦ गोपी तथा मल्लाहरूप श्री कृष्णसंवाद, नाव के मिष से उपदेशादि	१४९
♦ गोपियों का शरणागतिभाव तथा पार होना	१५०
♦ ग्रन्थकार का नाविक लीला में रहस्य वर्णन	१५२
सप्तमस्तालः-७	
♦ मंगलाचरण	१५४
♦ ग्रीष्म ऋतु वर्णन	१५४
♦ भाण्डीरवन लीला	१५५
♦ श्रीकृष्ण श्रीदामा की लड़ाई	१५६
♦ प्रलम्बासुर वध	१५७
♦ प्रलम्बासुरद्वारा बलरामजी की स्तुति	१५८
♦ प्रलम्बासुर-पूर्वजन्म-कथा	१५८
♦ मुंजवनलीला	१५९

विषय	पृष्ठ संख्या
♦ मुंजाटवी-दाह बालकों की व्याकुलता	१६०
♦ श्रीकृष्ण द्वारा रक्षा	१६०
♦ वर्षा ऋतु वर्णन	१६१
♦ शरद् ऋतु वर्णन	१६३
♦ वृजनारी वर्णित श्रीकृष्ण महिमा	१६५
♦ हेमन्त-शिशिर ऋतुवर्णन	१६८
♦ होरी लीला	१७०
♦ वसंत ऋतु वर्णन	१७१
♦ व्योमासुर वध, स्तुति, पूर्वजन्म-कथा	१७२
♦ चीरहरण-लीला	१७४
♦ श्रीकृष्ण वर्णित वनवृक्ष-प्रशंसा	१७९
♦ बालकों की ब्राह्मणों से अन्न-याचना	१८०
♦ द्विज वनिताओं का अन्न सहित श्रीकृष्ण समीप गमन	१८१
♦ द्विज-वनिता श्रीकृष्ण संवाद	१८२
♦ ब्राह्मणों का पश्चात्ताप	१८३
अष्टमस्तालः-८	
♦ मंगलाचरण	१८५
♦ गोपों कृत इन्द्रयज्ञ की तैयारी	१८५
♦ श्रीकृष्णकृत इन्द्रयज्ञ निवारण	१८७
♦ गोपों द्वारा गोवर्धन-पूजन	१८९
♦ गोवर्धन-आविर्भाव, इन्द्रकोप	१८९
♦ श्रीकृष्ण द्वारा गोवर्धनधारण	१९३
♦ पुनः गोवर्धन स्थापना, श्रीकृष्ण पूजन	१९५
♦ श्री कृष्ण कर्म में गोप विस्मय गोपनन्द संवाद	१९५

विषय	पृष्ठ संख्या
♦ इन्द्रकृत श्रीकृष्ण की शरणागति एवं स्तुति	१९७
♦ श्रीकृष्ण का इन्द्र को उपदेश	१९८
♦ सुरभिकृत श्रीकृष्ण स्तुति	१९८
नवमस्तालः-९	
♦ मंगलाचरण	२०१
♦ नन्दराज को वरुण दूतों द्वारा ले जाना	२०१
♦ श्रीकृष्ण का नन्द को वरुणलोक से लाना	२०३
♦ यमुना में गोपों को वैकुण्ठ दर्शन	२०४
♦ सर्पग्रस्त नन्द का मोचन, सर्पपूर्व-जन्म-कथा	२०४
♦ शंखचूड़ दैत्य-वध	२०६
♦ अरिष्टासुर (वृषभासुर) वध-लीला	२०६
♦ वृषभासुरकृत स्तुति, पूर्व जन्मकथा	२०७
♦ नारदकृत कंस को चेतावनी	२०९
♦ कंस-कोप-धनुष यज्ञ की तैयारी	२१०
♦ कंस ने अक्रूर को वृन्दावन भेजना	२११
♦ केशीदैत्य वध-लीला	२१२
♦ केशी कृत श्रीकृष्ण-स्तुति एवं पूर्वजन्म-कथा	२१२
♦ अक्रूर का वृन्दावनगमन, मार्ग में विविधविचार	२१४
♦ अक्रूर का राम-कृष्ण से समागम	२१६
♦ अक्रूर-नन्द भेंट	२१६
♦ श्रीकृष्ण-अक्रूर-संवाद में कंस के अभिप्राय-कथन	२१७
♦ श्रीराम-कृष्ण की मथुरागमन की तैयारी	२१८
♦ यशोदा का रामकृष्ण को मथुरा जाने से रोकना तथा श्रीकृष्ण का धैर्य देना	२१९

विषय	पृष्ठ संख्या
♦ गोपियों की विरह-व्याकुलता, श्रीकृष्ण का समझाना	२२१
♦ गोप बालकों को विषाद, श्रीबलराम द्वारा निवारण	२२३
♦ यशोदा द्वारा शिक्षा	२२४
♦ श्रीरामकृष्ण मथुरागमन	२२५
♦ यशोदाविलाप	२२६
♦ अक्रूर को वैकुण्ठ दर्शन	२२७
♦ अक्रूरद्वारा भगवत्-स्तुति	२२९
♦ श्रीकृष्ण-अक्रूरसंवाद	२३१
♦ मार्गवासी द्वारा वर्णित श्रीकृष्ण-शोभा	२३२
♦ श्रीकृष्ण का मथुरा पहुँचना	२३४
♦ श्रीकृष्ण-अक्रूर संवाद	२३४
दशमस्तालः-१०	
♦ मंगलाचरण	२३६
♦ बलरामजी का नन्द से मथुरापुरी देखने की आज्ञा लेना	२३६
♦ नन्द की श्रीरामकृष्ण को शिक्षा	२३७
♦ श्री रामकृष्ण का मथुरा प्रवेश, श्रीबलराम द्वारा मथुरा की शोभा का वर्णन	२३८
♦ पुरनारी-वर्णित श्रीरामकृष्ण शोभा	२३८
♦ धोबी-वधलीला	२४०
♦ दरजी को वरदान, मालीगृह-गमन	२४०
♦ सुदामा माली द्वारा प्रीतिपंचक	२४२
♦ कुब्जा से सम्भाषण, कूबड़ सीधा करना	२४३
♦ धनुष तोड़ना	२४५

विषय	पृष्ठ संख्या
♦ कंस को अपशकुन, धनुषप्राप्ति-कथा	२४५
♦ कंस को मंत्री का धैर्य देना	२४७
♦ मल्लयुद्ध की आज्ञा व तैयारी	२४८
♦ कुवलयापीड़ हाथी का वध	२५०
♦ श्रीरामकृष्ण का सभा-प्रवेश, दस रस प्रतीति	२५०
♦ नन्द का वात्सल्य, रस-वर्णन	२५३
♦ चाणूरकृत बीभत्स रस-कथन	२५४
♦ गोपबालकों का हास्य-रसकथन	२५४
♦ दुष्टों का भयानक-रस कथन	२५५
♦ यादवों का करुण-रस कथन	२५५
♦ मध्यस्थ राजाओं का वीररस कथन	२५६
♦ पुरनारियों का श्रृंगार-रस कथन	२५६
♦ वैष्णवों का अद्‌भुत-रस कथन	२५७
♦ कंस का रौद्ररस कथन	२५७
♦ ज्ञानियों का शांतरस कथन	२५८
♦ मुष्टिक का श्रीकृष्ण को मल्लयुद्ध की प्रेरणा	२५९
♦ बलरामजी का नन्द से मल्लयुद्ध की आज्ञा लेना	२६०
♦ मल्लयुद्ध	२६१
♦ चाणूरादिमल्लों का वध	२६२
♦ कंस का भ्राताओं सहित वध	२६३
♦ कंस-नारी विलाप, कंस-पत्नियों को श्रीकृष्ण का उपदेश	२६४
♦ वसुदेव-देवकी को बंधन से छुड़ाना पुत्र को माता-पिता का ऋणी-कथन	२६४
♦ नन्दादिकों का सत्कार	२६६
♦ उग्रसेन का राजतिलक	२६६

विषय	पृष्ठ संख्या

एकादशस्तालः-११

◆ मंगलाचरण	२६८
◆ उपनयन-संस्कार की तैयारी, यशोदा- रोहिणी आदि का मथुरा से आगमन	२६८
◆ नन्दकृत कृष्ण को ब्रजगमन की प्रेरणादि	२६९
◆ नन्द-यशोदा पूर्वजन्म-कथा	२७१
◆ पूतना, शकटासुर, तृणावर्त, धोबी, दर्जी, माली, सुदामा, कुब्जा, कुवलयापीड़, चाणूरादि मल्ल, कंस, कंसानुज पूर्वजन्म-कथा	२७२
◆ वसुदेवकृत नन्द-सत्कार	२७७
◆ यशोदा का विरह, श्रीकृष्ण का समझाना ब्रज बालकों का विरह, श्रीकृष्ण का धैर्य देना	२७८
◆ नन्दादिकों का व्रज-गमन	२७९
◆ व्रज में गोप-बालकों का विरह	२७९
◆ बालकों द्वारा सम्भ्रम से वृन्दावन में रामकृष्ण की यत्र-तत्र खोज	२८१
◆ विद्याहेतु श्रीरामकृष्ण का उज्जैन-गमन, विद्या-अध्ययन	२८३
◆ शंखासुर-वध	२८६
◆ यमलोक से गुरुपुत्र लाकर देना	२८७
◆ विद्याध्ययन कर मथुरा पहुँचना	२८७
◆ श्रीकृष्ण का कुब्जा-गृहगमन	२८८
◆ श्रीकृष्ण-कुब्जा संवाद	२८८
◆ श्रीरामकृष्ण का अक्रूर-गृहगमन	२८९
◆ अक्रूर का हस्तिनापुर-गमन, पांडवों का दुःख-श्रवण	२९१
◆ अक्रूर द्वारा धृतराष्ट्र को समझाना	२९३
◆ अक्रूर का मथुरा पहुँचकर श्रीकृष्ण से पांडवों का दुःख-कथन	२९५

विषय	पृष्ठ संख्या
द्वादशस्ताल:-१२	
♦ मंगलाचरण	२९६
♦ उद्धव को वृन्दावन भेजना	२९६
♦ श्रीकृष्ण-विरह से नन्द के विषाद-वचन	२९७
♦ यशोदा के विषादवचन	२९९
♦ उद्धववर्णित नन्द-यशोदा की धन्य-भाग्यता	३०१
♦ गोपी-विरहगीत	३०२
♦ प्रभावती के प्रेम-वचन	३०४
♦ श्रीराधिका के प्रणयकोप-वचन	३०५
♦ बालकों द्वारा कृष्ण का कुशल पूछना	३०६
♦ उद्धव का सर्व को धैर्य देना	३०८
♦ उद्धव द्वारा मथुरागमन की तैयारी, यशोदा-नन्द का सन्देश	३१२
♦ उद्धव का मथुरा-गमन	३१३
♦ श्रीरामकृष्ण व्रजगमन	३१३
♦ प्रीतिविषयंक श्री दामा का प्रश्न, कृष्णोक्त उत्तर	३१४
♦ श्रीदामा का अनुभव-ज्ञान	३१७
♦ देवबरूथ का अनुभव ज्ञान	३१९
♦ श्रीकृष्ण का मथुरा गमन की तैयारी, यशोदा का रोकना	३२०
♦ मास-मास में वृजगमन की कृष्ण-प्रतिज्ञा नन्द की सम्मति, यशोदा का श्रीरामकृष्ण को विदा करना	३२१
त्रयोदशस्तान:-१३	
♦ मंगलाचरण	३२४
♦ जरासंध का मथुरा-गमन	३२४
♦ बैकुण्ठ से श्रीरामकृष्ण के प्रति रथागमन	३२५

विषय	पृष्ठ संख्या

◆ जरासंध-श्रीकृष्ण-संवाद	३२६
◆ जरासंध-यादवसंग्राम	३२७
◆ जरासंध की हार, शिशुपाल का धैर्य देना	३२८
◆ नारद से जरासंध द्वारा जीत का उपाय सोचना	३२९
◆ कालयवन का मथुरा आना	३३१
◆ द्वारका-निर्माण	३३२
◆ श्री कृष्ण का कालयवन के आगे भागना	३३३
◆ मुचकुन्द की दृष्टि से कालयवन का मरना	३३४
◆ मुचकुन्द का निज जन्म-कर्म-कथन	३३५
◆ श्रीकृष्ण का परिचय देना	३३६
◆ मुचकुन्दकृत श्रीकृष्णस्तुति	३३६
◆ जरासंध का ब्राह्मणों से मुहूर्त पूछना	३३९
◆ जरासंध के आगे श्रीरामकृष्ण का भागना	३४०
◆ रैवत का ब्रह्माजी के समीप जाना	३४०
◆ ब्रह्माजी की आज्ञा	३४१
◆ श्री बलरामविवाह	३४१

चतुर्दशस्तालः-१४

◆ मंगलाचरण	३४३
◆ भीष्मक-गृह-नारदगमन	३४३
◆ नारदोक्त श्रीकृष्ण-प्रशंसा	३४४
◆ रुक्मीकृत श्रीकृष्ण-निन्दा	३४६
◆ रुक्मिणी-प्रेरित ब्राह्मण का द्वारकागमन	३४७
◆ श्रीकृष्ण द्वारा ब्राह्मण का सत्कार करना	३४८
◆ रुक्मिणी की पत्रिका	३४९
◆ श्रीकृष्ण का कुण्डिनपुर गमन	३५१

विषय	पृष्ठ संख्या
♦ रुक्मिणी के शोकवचन	३५१
♦ श्रीकृष्ण-आगमन, ब्राह्मण का सन्देश, रुक्मिणी द्वारा ब्राह्मण का सत्कार, कृतज्ञता	३५३
♦ श्रीरामकृष्ण का कुण्डिनपुर प्रवेश, पुरवासियों के हर्ष-वचन	३५४
♦ शिशुपाल की बारात का कुण्डिनपुर आना	३५६
♦ रुक्मिणी द्वारा देवीपूजन-स्तुति	३५७
♦ श्रीकृष्ण द्वारा रुक्मिणीहरण	३५८
♦ जरासंध शोकवचन	३५८
♦ यादव-जरासंधादिकों का युद्ध	३५९
♦ श्रीकृष्ण-रुक्मीसंग्राम	३६१
♦ श्रीकृष्ण का रुक्मी को बांधना, राम द्वारा छुड़ाना	३६२
♦ रुक्मिणी-विवाहोत्सव	३६५
पंचदशस्तालः-१५	
♦ मंगलाचरण	३६६
♦ सत्राजित का सूर्य से मणि लाना	३६६
♦ श्रीकृष्ण का मणि माँगना	३६८
♦ प्रसेनवध, सत्राजित द्वारा श्री कृष्ण को कलंक लगाना	३६९
♦ श्रीकृष्ण जाम्बवन्त-युद्ध	३६९
♦ मणि और जाम्बवती सहित श्रीकृष्ण का द्वारका-गमन	३७१
♦ श्रीकृष्ण द्वारा मणि लाकर सत्राजित को देना, सत्राजित का पश्चात्ताप	३७१
♦ सत्यभामा-विवाह	३७२
♦ कालिन्दी, मित्रविन्दा-विवाह नाग्नजिती स्वयंवर	३७३
♦ श्रीकृष्ण का सप्तबैल-नथन	३७४
♦ दुष्ट राजाओं का प्रलाप, नग्नजित का समझाना	३७६

विषय	पृष्ठ संख्या
◆ अर्जुन का दुष्ट राजाओं से युद्ध	३७८
◆ नग्नजिती श्रीकृष्ण-विवाह	३७९
◆ भद्राविवाह और लक्ष्मणास्वयंवर	३७९
◆ लक्ष्मणा-श्रीकृष्ण-विवाह	३८१
◆ सत्यभामा मानलीला	३८२
◆ भौमासुर से दुःखी इन्द्र का श्रीकृष्ण की शरण में आना	३८३
◆ भौमासुर वध में १६१०० कन्याओं का विवाह, पारिजात लाना	३८४
◆ श्रीकृष्ण-सन्तानवर्णन	३८५
◆ अर्जुन द्वारा सुभद्रा हरण पर श्रीबलरामजी का कोप	३८६
◆ श्रीकृष्ण का निवारण करना	३८७
षोडशस्तालः-१६	
◆ मंगलाचरण	३८९
◆ शम्बर का प्रद्युम्न-हरण	३८९
◆ रति का प्रद्युम्न को ज्ञान कराना	३९०
◆ शम्बर वध, रतिसहित प्रद्युम्न का द्वारका गमन	३९१
◆ प्रद्युम्न और अनिरुद्ध का विवाह	३९३
◆ रुक्मी बलराम का जुआ खेलना	३९४
◆ रुक्मी-वध	३९५
◆ स्वप्न में ऊषा-अनिरुद्धसंगम	३९७
◆ चित्रलेखा का अनिरुद्ध को ले जाना	३९८
◆ यादव-बाणासुरसंग्राम	४००
◆ शिवकृत श्रीकृष्णस्तुति	४०१
◆ ऊषा-अनिरुद्धविवाह, दुर्योधन की कन्या का स्वयंवर	४०२
◆ कौरवों द्वारा साम्ब-बंधन	४०३
◆ बलराम का हस्तिनापुरगमन	४०४
◆ दुर्योधन के दुर्वचन	४०५

विषय	पृष्ठ संख्या
♦ बलरामजी का कोप	४०५
♦ भीष्म द्वारा श्रीबलरामस्तुति	४०६
♦ साम्ब-लक्ष्मणाविवाह	४०७
♦ रुक्मिणी कन्या-विवाह	४०७
♦ रुक्मिणी से श्रीकृष्ण का हास्य	४०८
♦ रुक्मिणी के उत्तर	४१०
♦ श्रीकृष्ण के रुक्मिणी के प्रति वचन	४१२
सप्तदशस्तालः-१७	
♦ मंगलाचरण	४१४
♦ राजा नृग का कूप से उद्धार	४१४
♦ नृग के स्वदान का कथन	४१५
♦ श्रीकृष्ण कृत ब्राह्मण वस्तु ग्रहण में दोष वर्णन	४१७
♦ नारद द्वारा श्रीकृष्ण का गार्हस्थ्य देखना	४१९
♦ युधिष्ठिर के यज्ञ में श्रीकृष्ण का गमन	४२१
♦ युधिष्ठिर-श्रीकृष्ण संवाद	४२२
♦ प्रथम पूज्यविचार	४२३
♦ गणेशोपासक वचन	४२४
♦ शाक्तवचन	४२४
♦ शैववचन	४२५
♦ सूर्योपासकवचन	४२६
♦ वैष्णव-सहदेव वचन	४२६
♦ श्रीकृष्ण-पूजन, शिशुपाल द्वारा निन्दा	४२८
♦ शिशुपाल-वध	४२९
♦ शिशुपाल दन्तवक्त्र पूर्व-जन्मकथा	४३०
♦ शाल्व दन्तवक्त्रादि वध	४३२

विषय	पृष्ठ संख्या

अष्टादशस्तालः-१८

- मंगलाचरण ४३३
- सुशीला सुदामा संवाद, धन-दोष गुणकथन ४३४
- सुदामा का द्वारका गमन, श्रीकृष्ण द्वारा सुदामा सत्कार ४३७
- गुरुगृह की कथा ४३८
- श्रीकृष्ण द्वारा तंदुल भक्षण करना, रुक्मिणी द्वारा निवारण करना ४४०
- श्रीकृष्ण द्वारा खाने में भक्तिवश्यता कहना ४४१
- सुदामा को विदा करना, विश्वकर्मा को सुदामापुरी रचने की आज्ञा ४४३
- सुदामापुरी की रचना, मार्ग में सुदामा-विचार ४४३
- सुदामाजी का सुदामापुरी प्रवेश, श्रीकृष्ण का अप्रत्यक्षहित-वर्णन ४४४
- सूर्यग्रहण में कुरुक्षेत्र-यात्रा, ब्रजवासियों से भेंट ४४६
- देवकी-यशोदा संवाद ४४७
- युधिष्ठिर आदिकों से भेंट ४४८
- युधिष्ठिर द्वारा श्रीकृष्णप्रशंसा ४४८
- श्रीकृष्ण द्वारा मुनि-स्तुति ४४९
- मुनि द्वारा श्रीकृष्णमहिमा ४५०
- नारद-प्रोक्त उत्तर ४५२
- वसुदेव-कृत यज्ञोत्सव ४५४
- वसुदेव-नन्द संवाद ४५४
- वसुदेव द्वारा श्रीरामकृष्ण-स्तुति ४५६
- श्रीकृष्ण द्वारा ज्ञानोपदेश ४५८
- देवकी द्वारा श्रीरामकृष्ण-स्तुति ४५९

विषय	पृष्ठ संख्या
♦ बलिराजा कृत श्रीरामकृष्ण-स्तुति	४५९
♦ देवकी के मरे ६ पुत्रों का आना जाना	४६१
♦ जनक का स्वानुभव कथन	४६२
♦ शास्त्रश्रवण का फल—भक्ति-ज्ञान वैराग्य आदि का नारद द्वारा वर्णन	४६३
एकोनविंशस्ताल:-१९	
♦ मंगलाचरण, श्रीकृष्ण का जनकपुर गमन	४६५
♦ जनकराजा द्वारा श्रीकृष्णस्तुति	४६६
♦ श्रुतदेवविप्र द्वारा श्रीकृष्णस्तुति	४६६
♦ श्रीकृष्ण वर्णित साधु-माहात्म्य	४६९
♦ शक्ति, लक्षणा, गौणी वृत्तियों का लक्षणादि निरूपण, विविध वृत्ति अविषय ब्रह्म-कथन	४७०
♦ तत्त्वमसि महावाक्य व्याख्यान	४७३
♦ जगत रचने में ब्रह्म-इच्छा वर्णन	४७४
♦ वेदोक्त भगवत्-स्तुति	४७५
विंशस्ताल:-२०	
♦ मंगलाचरण	४८५
♦ पुत्र की मृत्यु से ब्राह्मण का विलाप	४८६
♦ विप्रपुत्र-रक्षाहेतु अर्जुन की प्रतिज्ञा	४८६
♦ प्रतिज्ञा भंग से विप्र द्वारा अर्जुन की निन्दा	४८८
♦ श्रीकृष्ण द्वारा ब्राह्मण के मृत दश पुत्र लाना	४८९
♦ यदुवंश नाश हित श्रीकृष्ण-विचार	४९०
♦ यदुकुल को विप्रों का शाप	४९१
♦ देवताओं द्वारा श्रीकृष्ण-स्तुति	४९३
♦ श्रीकृष्ण पृथ्वीनिवास कालप्रमाण	४९४

विषय	पृष्ठ संख्या
♦ वैकुण्ठ साथ जाने की उद्धव की प्रार्थना	४९५
♦ श्रीकृष्ण द्वारा कलियुग लक्षण	४९७
♦ श्रीकृष्णोक्त निजधाम मार्ग, ज्ञानोपदेश	५००
♦ नवधा भक्ति-लक्षण-निरूपण	५०२
♦ सत्संग-महिमा	५०४
♦ त्रिविध भक्त-लक्षण	५०५
♦ साधु-लक्षण	५०६
♦ ज्ञानी-लक्षण	५०७
♦ यादवों को प्रभास-गमन की आज्ञा	५०७
♦ सर्वयादवों का संहार	५१०
♦ उद्धव को पुनः उपदेश	५११
♦ उद्धव का विदेह मोक्ष	५१२
♦ दारुक सारथी का श्रीकृष्ण से मिलाप	५१२
♦ श्रीकृष्ण के रथ आयुधों का वैकुण्ठ गमन	५१२
♦ दारुक सारथी को उपदेश	५१३
♦ श्रीकृष्ण का पृथ्वी त्याग	५१३
♦ स्त्रियों का सती होना	५१४
♦ वज्रनाभ को मथुरा का राजतिलक	५१५
♦ श्रीकृष्ण के पृथ्वी-त्याग में शंका	५१६
♦ गर्गाचार्य द्वारा समाधान	५१६
♦ ग्रन्थ समाप्ति काल-कथन	५१८
♦ ग्रन्थकार का निवास स्थान कथन	५१८
♦ ग्रन्थ-समाप्ति में मंगलाचरण	५२०
♦ श्रीकृष्ण बलराम नीराजनम्	५२०
♦ प्रीतिपंचकम्	५२०
♦ श्री गुरु आरती	५२२

ॐ

श्रीरामकृष्णाभ्यां नमः

श्रीस्वामिकार्ष्णिगोपालदासकृतः

गोपालविलासः

अथ प्रथमस्तालः-१

मङ्गलश्लोकाः

अजो नित्यः शुद्धो निखिलमतिसाक्षी सदमलो,
विभुः सर्वज्ञो योऽनतिशयसुखश्चिद्घनवपुः।
स्वधर्मार्थं भूमौ धरति खलु देहान् बहुविधां-
स्तथा गोभूदेवस्वजनसुररक्षाधृतमतिः ॥१॥

बन्धुना सहितं कृष्णं परप्रेमास्पदं तथा।
गुरूञ्ज्ञानप्रदान्नौमि हरिभक्तान्विमत्सरान् ॥२॥

श्रीव्यासं शङ्कराचार्य्यं वन्दे श्रीनानकं गुरुम्।
भवाब्धौ यैः कृतः सेतुः सूत्रैर्भाष्येण भाषया ॥३॥

सद्यश्चित्तविशोधिनी रतिवतां पापौघविध्वंसिनी
तूर्णं भक्तिविरक्तिकीर्तिमतिदा भुक्तिप्रदा मुक्तिदा।

सान्द्रानन्दकरी तमोभयहरी राधेव कृष्णप्रिया
वैकुण्ठालयदायिनी विजयते गोपाललीला भुवि॥४॥

दोहा

अनुज सहित रघुपति चरण, वन्दूँ हृदय लगाय।
प्रथम जास की कृपा से, प्रेम पन्थ दरसाय॥५॥

विश्वं विश्व विलास जस, वेद जास के श्वास।
सो गुपाल पूरण करे, निज गोपालविलास॥६॥

वेदवेद्यपरपुरुष भा, वसुसुरसुत यदुभूप।
वेदव्यास से वेद भा, धार भागवतरूप॥७॥

एक समय पर गर्गद्विज, तीरथ यात्रा हेत।
गये नैमिषारण्य में, विद्यातेज निकेत॥८॥

शौनक द्विज सब मुनिन युत, निरख तिसे तत्काल।
आसन दे वन्दन करा, बोला वचन रसाल॥९॥

शौनक वचन चौपाई

सन्तन का पर्यटना जोई। गृहिजन का उपकारक होई॥
नर का अन्तरतम अपहारी। विज्ञ साधु नहिं रविनभचारी॥१०॥

तुम त्रिकालदर्शी योगीशा। निरखे पुन हलधर जगदीशा॥
यदुकुल के पुन गुरू बखाने। कृष्ण चरित तुमने सब जाने॥११॥

यदपि व्यास ने बहु विधि भाखे। तदपि गुप्त तिनने कुछ राखे॥
जो हम पर मुनि कृपा तुमारी। हरि चरित्र तो करो उचारी॥१२॥

प्रभु गुण सुनत न मति तृप्तानी। इस सम और न भक्ति बखानी॥
अच्युत चरित सुनत जन जोई। ज्ञान विराग पाव द्रुत सोई॥१३॥

गर्गाचार्य वचन चौपाई

द्विज तुम हरिचरित्र सब जानो। लोक हितारथ प्रश्न बखानो॥
अति उत्तम मुनि प्रश्न तुमारा। सुन प्रसन्न भा चित्त हमारा॥१४॥

श्रीपति गुणगण गाना जोई। श्रोता वक्ता का हित होई॥
इसमें सुनो एक इतिहासा। जामें कृष्णचरित का व्यासा॥१५॥

एक समय नारद ऋषिराया। मिथिलापुर गमने कर दाया॥
परहित मति कर बीण बजावत। हृदय प्रेम धर हरि गुण गावत॥१६॥

तिसें जनक बहुलाश्व निरखकर। सभा सहित नृप उठे हर्ष धर॥
हस्तजोड़ पदवन्दन कीना। अति उत्तम आसन तब दीना॥१७॥

शीतल जल कर चरण पखारे। पूजा कर निजभाग निहारे॥
स्वस्थचित्त लख मुनि को भूपा। बोले वचन उदार अनूपा॥१८॥

जनक-वचन चौपाई

अहो नाथ मैं अति बड़भागी। जापर भये आप अनुरागी॥
मोपर भयी ईश की दाया। जाकर दर्स आपका पाया॥१९॥

मो सम विषय सक्त जन जोई। तिनें स्वप्न तव दर्स न होई॥
सतसंगति दुर्लभ श्रुति गाई। बड़े भाग कर ताको पाई॥२०॥

जो पूछत नहिं मोक्ष उपाया। ता सम मूढ़ कौन मुनिराया॥
शब्द सपर्श रूप रस गंधा। इन विषयन कीनो जग अंधा॥२१॥

इन्द्रियग्रह ग्रसियो सब लोका। किम पावै नर भगवत ओका॥
इस संसार सिंधु को नाथा। जिस विधि तरूं गुरो सुखसाथा॥२२॥

कहो मोक्ष कर सुगम उपाऊ। जो मो पर करुणा मुनिराऊ॥
तुम सम साधू पर उपकारी। लोक हितारथ निज तनुधारी॥२३॥

नारद-वचन चौपाई

भूप शिरोमणि तुम बड़भागी। जाकी मति हरिपद अनुरागी॥
श्रुति पुराण संमत वरजोई। मुक्ति उपाय कहूँ नृप सोई॥२४॥

सब इन्द्रिय गणका मन स्वामी। इन्द्रिय प्राण चित्त अनुगामी॥
सगुण स्वरूप सुखद पुन जोई। तामें लागत मानस सोई॥२५॥

सुन्दर सुखद सुगुण हरि जैसे। सुर नर आदिक में नहिं तैसे॥
कोटि जन्म का पापी जोई। हरि शरणागत आवे सोई॥२६॥

क्षमा करत ताकर अघ सारे। दीन बन्धु शरणागत प्यारे॥
प्रेम समेत नाम जो लेवत। ताको कृष्ण अभय पद देवत॥२७॥

जो अनन्य हो हरि पद सेवे। योग क्षेम हरि ताको देवे॥
इत्यादिक गुण तास अनन्ता। सहस बदन नहिं पावे अन्ता॥२८॥

जास रूप जांके उर आवे। तांको त्रिभुवन में नहीं भावे॥
जास रूप रवि तेज समाना। विषय रूप खद्योत बखाना॥२९॥

सुखस्वरूप हरि निजजनत्राता। अपक्षयरहित अमितसुखदाता॥
जो जन हरि गुण सुने सुनावे। हरि मूरत जो उर में ध्यावे॥३०॥

दुखद कुरूप अगुण सब भोगा। तब तांको लागत सम रोगा॥
याविध मन जब हरि पद लागे। इन्द्रिय गण तब विषय तियागे॥३१॥

जब मन हरि मूरति को ध्यावत। भृंग कीट सम हरि को पावत॥
नहि पुन जन्म मरण सो पावे। आनन्द सागर मांहि समावे॥३२॥

जनक वचन चौपाई

ईश्वर निर्गुण अकल अमूरति। सर्वातम सब में सो पूरति॥
निराकार को कह किम ध्यावे। निर्गुण के कैसे गुण गावे॥३३॥

नारद-वचन चौपाई

यद्यपि स्वतः अमूरति ईशा। निर्गुण निष्क्रिय श्री जगदीशा॥
तदपि स्वमायाकर तनु धारत। विविध क्रिया शुभगुण विस्तारत॥३४॥

जैसे पूरब अरणी माही। निराकार शिखि दीसत नाही॥
अरणी मथन करे जब कोई। होत सकार हवनभुक् सोई॥३५॥

जनक-वचन चौपाई

सुधा समान वचन मुनि थारा। सुन मन तृप्त न होत हमारा॥
कहिये हरि अवतार सुगाथा। जो करुणा मोपर मुनिनाथा॥३६॥

कौन समय किस कारण स्वामी। निज तनु धारत अन्तर्यामी॥
हरि के रूप कर्म गुण कैसे। सो सब कहो होत जग जैसे॥३७॥

नारद-वचन चौपाई

जब जब होत धर्म की हानी। दुखी होत गो सुर द्विज ज्ञानी॥
असुर स्वभाव भूप जब होही। करें अधर्म विप्र गुरु द्रोही॥३८॥
तब तब होत विष्णु अवतारा। निज जन रक्षक असुर संहारा॥
खेचर भूचर जलचर माहीं। हरि तनु धारत गणती नाहीं॥३९॥
कोउ अंश को कला अवेशा। तिनमें कृष्ण स्वयं हरिमेशा॥
सो अब विद्यमान अवतारा। पुरी द्वारका जन सुखकारा॥४०॥
सब अवतारन के गुण लीला। रूप विचित्र कर्म शुभ शीला॥
कह न सकत सब शारद शेषा। यथा बुद्धिकवि क़हें नरेशा॥४१॥

जनक वचन चौपाई

कहो कृष्ण कर गुण विस्तारा। जो अब विद्यमान अवतारा॥
कहाँ हेत किस प्रकटे ईशा। तास चरित पुन कहो मुनीशा॥४२॥
निज किंकर पर करिये दाया। तुम त्रिकालदर्शी मुनिराया॥
गुप्त प्रकट हरिकी सब लीला। तुम जानत हो प्रभु तपशीला॥४३॥

नारद-वचन चौपाई

सुनिये भूमिपाल मन लाई। श्रीपति कथा विचित्र सुहाई॥
जाकर सुनत चित्त चपलाई। मिटत कृष्णपद मति ठहराई॥४४॥
जिसकी मति हरिकथा न लागी। जानव सो नर परम अभागी॥
हरि प्रापति कर मुख यह कारण। प्रेम सहित हरिचरित उचारण॥४५॥

दोहा -

द्वापर युग के अन्त में, बाढ़े असुर अपार।
धर्मविमुख असुभृतन का, सह न सकी भू भार॥४६॥

निरवलोक निजशरण को, भूमी भूमि मझार।
सुरभी विग्रह धार कर, गई ब्रह्म आगार॥४७॥

पृथ्वी वचन चौपाई

नाथ नाथ मैं परम दुखारी। देव आइहूँ शरण तुमारी॥
तुम बिन और न को मम त्राता। तुमही बन्धु जनक गुरु माता॥४८॥

वेग उपाय करो सुर सांई। नहिं तो जात रसातल मांई॥
मम बिन सुरपति प्रजा तुमारी। होगी नाथ अतीव दुखारी॥४९॥

सुन्दरी-वचन सवैया

षट द्वादश भार विनास पती, गिरि मेरु हिमाचल आदिक सारे।
पुन सात समुद्र नदी सकली, जग जीव निकाय अती बल वारे॥
इति आदिक और गुरू जितने, हमको नहिं लागत हैं कुछ भारे।
द्विज वेद विनिन्दक ईश्वर से, नित बेमुख ते नहीं जात सहारे॥५०॥

ब्रह्म-वचन चौपाई

धरणि सुधीर धरो उर मांई। तव मम जगका जो सुर सांई॥
सो दुख दूर करेगा थारे। प्रभु कृपालु शरणागत प्यारे॥५१॥

जाकर नाम लेत दुखरासी। मिट है जन्म-मरण भव-फाँसी॥
ताकर दर्स करत दुख थारे। वसुधे दूर होनगे सारे॥५२॥

अनल पास जिम शीतलताई। जिम तुषार आलय उशनाई॥
तिम हरि-पाद पद्म रज लागत। विविध कलेश-शोक सब भागत॥५३॥

नारद-वचन दोहा

धीरज देकर धरणि को, बोल लिये असुरारि।
विधि के बोले देव सब, आये विरंचि अगारि॥५४॥

शेष सुरेस शिवादि सुर, निज निज शक्ति समेत।
अमर मेदिनी सहित विधि, गमने विष्णु निकेत॥५५॥

हरि पद पद्म पलाश में, कर प्रणाम सुर भूप।
हाथ जोड़ आगे खड़े, कीना स्तवन अनूप॥५६॥

ब्रह्म-वचन कवित्त

नमो नमो सुर सांई, तव पाद कंज मांई,
जाकी रज शीश धरे, तीन ताप भागे हैं।
निज पर भेद नाहीं, देव तव चित्त माहीं,
एक आतमत्व ताते, भेद सब त्यागे हैं॥
तदपि अनन्य जोई, भोग मोक्ष पावे सोई,
तांके - योग क्षेम विषे, चित्त तव लागे हैं।

तदपि न धीर धरे, जीव चित्त चिंता करे,
जीव का जीवत्व यह, स्वारथ में जागे है॥५७॥
दुखी जीव ईश ध्यावे, सुख मांहि विसरावे,
ध्यावे सुख मांहि यदि, दुखको न धारे हैं।
पूरव अनेकवार, धरकर अवतार,
किये दुःखसिन्धु पार, देव द्विज सारे हैं॥
रावण हिरण्यनैन, कुम्भकान हेमशैन,
सूर सिंह राम रूप, धरके पछारे हैं।
तैसे अब दया धरो, दुःख शोक दूर करो,
मेदिनी गो देव द्विज, शरण तुमारे हैं॥५८॥

भगवद्वचन चौपाई

कहो तात कल्याण तुमारे। किस कारण आये सुर सारे॥
जो कुछ कहो करूँगा सोई। मम दर्शन निष्फल नहिं होई॥५९॥
जन्म मरण अरु विविध कलेशा। मम पद बेमुख सहत हमेशा॥
जप तप संयम नेम सनाना। मम दर्शन कर सब अवसाना॥६०॥

ब्रह्म-वचन चौपाई

कहूँ कहा तुम जानत स्वामी। प्रभु सर्वातम अन्तर्यामी॥
तदपि नाथ आज्ञा धर शीशा। निज आगमन कहूँ जगदीशा॥६१॥
चन्द्रवंश में भा यदुराजा। धर्म धुरंधर नृपसिर ताजा॥
तिसकी कुल नृप आहुक जोऊ। तांके गृह उपजे सुत दोऊ॥६२॥

देवक उग्रसेन लघु भाई। लघु का कंस भयो दुखदाई॥
कंस अधम अतिपापि अभागी। चन्द्रवंश में उपजा आगी॥६३॥

द्विज सुर गो श्रुति साधू द्रोही। लोलुप लंपट क्रोधी मोही॥
अति बल युत सो क्रूर स्वभावू। तीन लोक को करहै दाहू॥६४॥

सुर नर आदिक जांके आगे। जांको देख दूर सब भागे॥
तैसे बकी बकादिक स्वामी। कंस दुष्ट के जे अनुगामी॥६५॥

बहुत असुर नृप के तनुधारी। करें उपद्रव भूमिमझारी॥
या विधि मरें असुर दुखदाई। विश्वनाथ सो करो उपाई॥६६॥

भगवद्-वचन चौपाई

मत भय मानो हे सुरराऊ। असुर नाश का करूँ उपाऊ॥
यदु वंशी वसुदेव सुभागी। शूर सेन सुत मम अनुरागी॥६७॥

धारूँ तिसके गृह अवतारा। तिसकी वधू देवकी द्वारा॥
शेष प्रथम तुम जावो प्यारे। वसो देवकी उदर मझारे॥६८॥

शूर तनय की दूजी नारी। बसे रोहिणी बल्लभ द्वारी॥
पुन तांकी कुखि करो प्रवेशा। असुर मोह कारण नागेशा॥६९॥

सुनो भवानी षट मुख माई। देव कर्म में होय सहाई॥
नन्द वधू यशमति के द्वारा। कन्या रूप धरो अवतारा॥७०॥

सुनो देवगण तुम सब जावो। यदुकुल में मानुष तनु पावो॥
भूकर भार उतारूँ जौं लौं। करो वास तुम महि में तौं लौं॥७१॥

लक्ष्मी-वचन चौपाई

बिन पूछे कुछ भाखूँ प्यारे। क्षमा करो अपराध हमारे॥
जो तुम गमनो महि में नाथा। ले चलिये मोको प्रिय साथा॥७२॥

जब जब तुम अवतरते स्वामी। तब तब मैं प्रभु तव अनुगामी॥
तुम बिन मम क्षण युग की न्यांई। तव पद शपथ करूँ सुरसांई॥७३॥

भगवद्-वचन चौपाई

सुनो सुमुखि तुम मत घबरावो। हमसे प्रथम भूमि में जावो॥
नृप भीष्मक के गृह में जाई। लेवो जन्म स्वजन सुखदाई॥७४॥

सुन्दरि तव दासी गण जोई। लेवो जन्म भूमि में सोई॥
भुज बल जीत महीपति झारी। तुम सबको लाऊँगा प्यारी॥७५॥

नारद-वचन दोहा

श्रीपति के सुन वचन तब, सुरगण अति हर्षाय।
निज निज शक्ति समेत तब, महि में प्रकटे आय॥७६॥

जो कोई इस ताल को, करे प्रेम से गान।
मन वांछित पूरण करें, तिस जन के भगवान॥७७॥

श्लोक—

लोकेशाद्यं शरणमगमद् भूमिगौस्तेन पाता
मन्दाक्रांता दितिसुतगणैर्धर्मविप्रारिभिः सा।

दुष्टैस्त्रस्ता मतिसुसुरभिस्तेंऽघ्रियुग्मं गतासौ
पाहि त्वं मां सुरवर हरे! मे स्वजैः कृष्ण भूमन्॥७८॥

॥ इति श्रीमत्परमहंसोदासीनशिरोवतंस-स्वामिकार्ष्णिज्ञानदासशिष्येण श्रीरामकृष्णपादाम्बुरुहचिन्मकरंद-मधुपेन कार्ष्णिगोपालदासाह्वेन विनिर्मिते गोपालविलासे पूर्वविश्रामे उपोद्घातवर्णनं नाम प्रथमस्तालः समाप्तः॥१॥

***

ॐ

श्रीवृन्दावनविहारिणे नमः।

अथ द्वितीयस्तालः-२

श्लोकः

यो देवैः सुसमर्थितः प्रकदने दैत्याधिपानां भुवि
देवक्यां वसुदेवयोषिति निजां धृत्वा तनूं श्यामलाम्।
प्राप्तोऽथो जनकेन यो मधुपुरान्नन्दालये गोकुले
यज्जन्मोत्सव एव गोपतिकृतः कृष्णाय तस्मै नमः॥१॥

नारद-वचन दोहा

एक समय वसुदेवजी, गज रथ अश्व समेत।
कर विवाह सह देवकी, चले स्वकीयनिकेत॥२॥

कंस स्वसा के नेह से, बैठ तास के यान।
हय रश्मी करग्रहण कर, चला सहित अभिमान॥३॥

आकाशवाणी-वचन चौपाई

रे रे कंस मूढ़ अभिमानी। जो तुमने निज भगिनी जानी॥
या कर अष्टम सुत हो जोई। खल मारेगा तुमको सोई॥४॥

नारद-वचन दोहा

गगन गिरा सुन कंस ने, काढ़ लिया तरवार।
भगनी मारण कारणे, तब भा हा हा कार॥५॥

वसुदेव-वचन चौपाई

शूर शलाघनीय यदुवंशा। करें तुम्हारी वीर प्रशंसा॥
यह अधर्म क्यों करो उदारे। किस जीवन हित भगनी मारे॥६॥

जो उपजत जग मरता सोई। मृत्यू नाहिं निवारण होई॥
जाको जासो मरण उचारे। निश्चय ताको सोई मारे॥७॥

वीर नारि पर हस्त उठावो। क्यों निज कुल को दाग लगावो॥
यह कन्या सम अनुजा थारी। दीन अबल अब शरण तुमारी॥८॥

या सों कहा न मरणा तेरो। जो जो सुत होवेगा मेरो॥
देवूंगा सो सो सुत थारे। जिनसे भीती होय तुमारे॥९॥

नारद-वचन दोहा

भामा के सुन वचन तब, युक्ति सहित सविचार।
मारण का संकल्प तज, कंस रखी तरवार॥१०॥

काल गाल से छूटकर, गृह गमने पतिदार।
चिन्तातुर हो देवकी, पति सों कहा पुकार॥११॥

देवकी-वचन चौपाई

पुत्र देन जो वचन उचारे। भला कौन नहिं सो तुम प्यारे॥
सुत समान जग में नहिं कोई। उभय लोक सुख देवे सोई॥१२॥

बिना पुत्र किस कारण जीना। दुखी रहत नित पुत्र विहीना॥
भले नाथ मोको खल मारे। पुत्र शोक नहिं जात सहारे॥१३॥

वसुदेव-वचन चौपाई

क्या जाने यह मारे वाको। अथवा मारेगा वो याको॥
काल गती को नहिं को जोवे। क्या जाने कल को क्या होवे॥१४॥

सन्मुख आय काल को टाला। भावी का मैं करा न ख्याला॥
जब लग वा तूँ गर्भहि धारे। तिससे प्रथम इसे यम मारे॥१५॥

नारद-वचन दोहा

पती वचन सुन देवकी, धीरज मन में धार।
समय पाय तिसके उदर, उत्पन भया कुमार॥१६॥

सुत को लेकर कष्ट से, श्री वसुदेव उदार।
झूठ वचन से डरपता, गया कंस के द्वार॥१७॥

कंस-वचन चौपाई

सुत वित आदिक जो जग माहीं। सत्य सन्ध को दुस्त्यज नाहीं॥
तुम धर्मज्ञ सत्यव्रत धामा। मैं प्रसन्न हूँ तुम पर भामा॥१८॥
इस बालक से मम मृतिनाहीं। ले जावो इस को गृह माहीं॥
बिन अपराध न इसको मारूँ। अपराधी का मूल उखारूँ॥१९॥
अष्टम उपजेगा जो बाला। तिसके कर मम होगा काला॥
तिस बैरी को निश दिन जोवूँ। तिसे मार कर निर्भय सोवूँ॥२०॥

नारद-वचन दोहा

दुष्ट वचन विश्वास के, योग्य नहीं यह मान।
अति प्रसन्न मन नहिं भया, सुन प्रिय वचन सुजान॥२१॥
पुत्र सहित वसुदेव जी, गृह गमने पश्चात्।
मथुरा पुर में मैं गया, कंस भवन में तात॥२२॥
असुर संहारे शीघ्र हरि, धर कर मानुष रूप।
यह विचार कर कंस को, मैं भाखा यह भूप॥२३॥

देवर्षि-वचन चौपाई

सुनो कंस तुम नहिं कुछ जानत। जिनको तुम बांधव कर मानत॥
वसुदेवादिक यादव जेते। नन्दादिक आभीर समेते॥२४॥
इन सबको तुम निर्जर जानो। कालनेमि अपने को मानो॥
पूरव बैरी तव यह सारे। तव मारण हित नरतनु धारे॥२५॥

पूरव जलधि मथन की वेरा। हरि से समर भया था तेरा॥
हरि ने तुमको तब हत कीया। शुक्रमंत्र कर पुन तू जीया॥२६॥

पुन तुम हरि सन समर विचारा। मन्द्राचल पर्वत इक वारा॥
विधि दर्शन हित तप तुम कीना। देव वर्ष शत दुब रस पीना॥२७॥

हो प्रसन्न विधि वाक उचारी। वर माँगो जो तुम मन धारी॥
तब तुम भाषा यह वर दीजे। हरि कर से मम मरण न कीजे॥२८॥

यदपि कठिन वर तुम यह माँगा। तदपि देव मैं तव हित लागा॥
मम दर्शन निष्फल नहिं होई। भावी में मारू हरि तोई॥२९॥

सोई तुमरा शत्रु मुरारी। मात देवकी उदर मझारी॥
अष्टम सुत होगा जगदीश्वर। मारेगा तुमको अवनीश्वर॥३०॥

नारद-वचन दोहा

क्रोध बढ़ाकर तास का, मम गमने पश्चात्।
करे उपद्रव कंस जो, सो अब सुनिये तात॥३१॥

कंस-वचन चौपाई

हे चाणूर अघासुर मुष्टिक। तृणावर्त धेनुक आरिष्टिक॥
हे प्रलंब बक केसी प्यारे। बकी यहां तुम आवो सारे॥३२॥

यह वसुदेव देवकी जोऊ। करिये कैद जेल में दोऊ॥
इनके गृह जो जो सुत होई। जीवन नहि पावे शिशु सोई॥३३॥

उग्रसेन को तखत उतारो। सब यादव को देश निकारो॥
करे सामना तुमरा जोई। तनु तज यमपुर जावे सोई॥३४॥

नारद-वचन दोहा

को मारे को भग गये, को कर लिये अधीन।
आप राज्य करने लगा, गुरु द्रोही मतिहीन॥३५॥

समय समय पर देवकी, षट सुत जाय नरेश।
सो सो मारे कंस ने, सप्तम आये शेष॥३६॥

मात देवकी गर्भ में, कर निवास कुछ मास।
निज शक्ती कर रोहिणी, उदर किया पुन वास॥३७॥

गर्भ सप्तमा स्त्रव गया, यह जानत भा लोक।
हाहाकार सबने करा, करा दम्पती शोक॥३८॥

भाद्र मास सित पक्ष में, तिथि षष्ठी बुधवार।
स्वाति ऋक्ष मध्याह्न में, शेष लिया अवतार॥३९॥

कुन्द कपूर समान तनु, सुन्दर काम समान।
देख पुत्र को रोहिणी, उर भा हर्ष महान॥४०॥

मास पारायण प्रथम विश्राम॥१॥

मित्र पुत्र को गोपपति, पुत्र आपना जान।
जात कर्म विधि से करा, दस सहस्त्र गोदान॥४१॥

करे दान भूषण वसन, बाजे बजे अपार।
देन बधाई नन्द गृह, आये सब नरदार॥४२॥

गोपी-वचन-सार छन्द

आली यशुमति भवन पधारो॥ टेक॥
मात रोहिणी ने सुत जाया, उत्सव होत अपारो।
बहु विधि बाजे बजत सुहावन, विप्र वेद ध्वनि कारो।
वन्दी जय जय शब्द उचारत, पावत धन विशुमारो।
निरखत नभ में देव निकाया, करत कुसुम आसारो॥४३॥

दे उपहार बधाई ताको, शिशु का वदन निहारो।
वृजरानी वृजराज वदन पर, रंग गुलाल सुडारो।
धन्य धन्य भा आज दिवस सखि, फलिया भाग हमारो।
बाल अलौकिक जानो प्यारी, नहिं यह प्राकृत बारो॥४४॥

नन्द यशोदा हर्ष कर, सबका कर सत्कार।
दधि कांधा करने लगे, गोपी गोप अपार॥४५॥

देव पुष्प वर्षा करें, करें अपसरा गान।
शेष जन्म उत्सव लखें, नभ में सुर सविमान॥४६॥

वेद व्यास आदिक मुनी, आये नन्द अगार।
कर प्रणाम गोपेश तब, बोले वचन विचार॥४७॥

नंद-वचन चौपाई

धन्य धन्य मैं हूँ मुनिराया। जो तव दर्शन निज गृह पाया॥
यह प्रताप इस शिशुका सांई। जो आये तुम मम गृह मांई॥४८॥
श्री वसुदेव कैद भा जब से। वसे रोहिणी मम गृह तब से॥
भया योग नहिं निजपति साथा। किम उपजा यह शिशु मुनिनाथा॥४९॥
तुम त्रिकालदर्शी तपशीला। गुप्त प्रकट जानो जग लीला॥
जो याका निर्णय नहिं होई। हमें दोष देंगे सब कोई॥५०॥

व्यास-वचन चौपाई

यह जगदंड जास फण धारा। तिसी शेष का यह अवतारा॥
हरि भक्तन के रक्षण कारण। धर्म विमुख दुष्टन के मारण॥५१॥
निज इच्छा कर प्रगटे शेषा। यह जगदीश अंश योगेशा॥
ईश अंश योगेश्वर जोई। अपने तनु धारण हित सोई॥५२॥
दंपति संगम चाहित नाहीं। स्वयं देह धारत जग मांहीं॥
ईश्वर तनु नहिं योनिज ताता। निमित्त मात्र तिनके पितुमाता॥५३॥
जाव गोपपति शिशुको लावो। योगीश्वर का दर्श करावो॥
दर्शन हित आये गृह तुमरे। पूरण करो मनोरथ हमरे॥५४॥

नारद-वचन दोहा

यशुमति लाई बाल को, पति की आज्ञा पाय।
कर प्रणाम शिशु को मुनी, करा स्तवन हर्षाय॥५५॥

व्यास-वचन सवैया

जय हो फणिनाथ अनन्त विभो, यह विश्व अमेय अधार तुम्हारे।
तुम हो दुरज्ञेय अयोगिन को, तुमको श्रुति नेति च नेति उचारे।
निज योग सुसिद्ध हितारथ को, तव पाद सुसेवत हैं मुनि सारे।
तुमरे पद पंकज वेमुख जो, तिसको नहि होवत बोध उदारे॥५६॥

भव वंद्य पदांबुज द्वन्दन की, कलिका कल सौरभ गंध सुहाई।
तव श्वास श्रुती पवमान रया कर, साथ मिली दशहूँ दिशि छाई।
विषयांडज वायस वा सरमा, सुत के मल की दुरगंध विलाई।
ललना तनु प्रेम पुरीष भरा जिस, घ्राणविषे तिसने नहिं पाई॥५७॥

नारद-वचन दोहा

कर प्रणाम पुन व्यास जी, गये मुनिन के साथ।
समय पायकर देवकी, गर्भ धरा नर नाथ॥५८॥

अष्टम आये आप हरि, देवकि उदर मझार।
तेज देखकर तास का, कर है कंस विचार॥५९॥

कंस-वचन चौपाई

अब अष्टम बैरी मम आया। रचत विष्णु जो बहु विधि माया॥
तेजवान अब देवकि जैसी। पूरव देखी कबी न तैसी॥६०॥

यांते याके जठर मझारी। निश्चय होगा हरि असुरारी॥
किस विध इसका मरणा होवे। भगिनी गर्भ मांहिं यह सोवे॥६१॥

गर्भवती को मारूँ जो अब। नष्ट होयगो मम यश श्री तब॥
जीवत जग में निन्दा पावूँ। मर कर अधम गती को जांवूँ॥६२॥
जब लग गर्भ मांहि यह सोवत। तब लग इसका मरण न होवत॥
जब जन्मेगा यह रिपु बाला। तबी करूँगा इसका काला॥६३॥

नारद-वचन दोहा

तब मुनि सुर भव सहित विधि, आये कारागार।
करा स्तवन श्रीकृष्ण का, वेद मन्त्र अनुसार॥६४॥

देव-वचन हरिगीत छन्द

जय सत्य व्रत, पुन सत्य कारण, सत्य में स्थित, श्री पते।
त्रय काल सत्य स्वरूप तव, सुर सत्य प्राप्य स्वजनगते।
जय सत्य धर्म, प्रवर्तकाच्युत, सत्य आश्रय, श्री हरे।
यह सप्त सत्य स्वरूप प्रभु, तव चरण शरणी हम परे॥६५॥

घनाक्षरी छन्द

माया एक आसरा दो, फल सुख दुःख तीन,
गुणमूल धरमादि, चार रस माने हैं।
पंच ज्ञान इन्द्रीकर, पंच हैं प्रकार जामें,
षडूर्मीस्वभाव सात धातु त्वचा माने हैं।
पंचभूत मन बुद्धि, अहंकार आठ शाखा,
बदनादि नवद्वार, कोटर बखाने हैं।

दश विध प्राण पत्ते, जीव ईश खग दोऊ,
आदि वृक्ष कर तोको, कारण ही जाने हैं॥६६॥

सुन्दरी सवैया

तुम ही इक कारण हो जग के, तुमको प्रतिपालक वेद पुकारे।
पुन अन्त समे लय होवत है, यह विश्व सबी तव धाम मझारे।
तुमरी शकती कर मोहित जो, नर सो तुम में बहु रूप निहारे।
मतिमान मुनीश सुपंडित जो, सबको इक आतमरूप विचारे॥६७॥

निज बोध स्वरूप अरूप प्रभो, तुम रूप धरो शुध सत्व उदारे।
सब स्थावर जंगम जीवन के, सुख कारण हेत सुरेश मुरारे।
खल मूड़ मती नर पामर जो, तुम से दुख पावत हैं अविचारे।
निज भक्त विरक्त उदारन को, तुम देवत मोक्ष अखण्ड खरारे॥६८॥

चन्द्रकला छन्द

प्रभु के निज सत्व स्वरूप विषे, नर जो मन को दृढ़ धारत हैं।
सतसंगति सेवन में तनु को, धन को मन को नित डारत हैं।
जलजाक्ष सुरेश्वर जो प्रभु के, पद पोत विषे स्थिति कारत हैं।
भव सागर से निज आतम को, विन खेद सुपार उतारत हैं॥६९॥

सुन्दरी सवैया

निगमागम सांग उपांग पढ़े, स्वर तीन उचारत है नर जोई।
निजको नितमुक्त बखानत है, सत लोक विषे नर जावत सोई।

तुमरे पद पंकज बेमुख सो, अविशुद्ध मती तव किंकर द्रोई।
तव प्रीतिविहीन मही गिरहै, तिससे तिसकी गति नाथ न होई॥७०॥

चन्द्रकला छन्द

कर प्रेम तवातम धाम विषे, तव प्रीतम दास कहावत है।
सब विघ्नन के सिर पाद धरे, तुमरे गुण जो नित गावत है।
यदुवंशमणे निरभै विचरे, तव धाम विषे नर जावत है।
तुम रक्षक हो जिसके तुमरे, पद से नर लौट न आवत है॥७१॥

निज धर्म सुरक्षण हेत करो, शुध सत्त्व शरीरन का तुम धारण।
सब स्थावर जंगम जीवन को, निज कर्मन के फल देवन कारण।
निज कर्म प्रवर्त्तक जान तुमें, तव दास करें तव नाम उचारण।
तब पूजन हेत पढ़ें श्रुति को, मख योग समाधि करें तप दारुण॥७२॥

मत्तगयन्द छन्द

जो तव सत्त्वस्वरूप न होवत, भेद अबोध निवर्त्तक जोई।
सत्त्व स्वरूप सुसेवन से, बिन नाथ नहीं मन सात्त्विक होई।
सात्त्विक होय बिना मनके, प्रभु बोध कबी नहि होवत सोई।
इन्द्रिय प्रेरण हेतुन से, प्रभु को अपरोक्ष न जानत कोई॥७३॥

सुन्दरी-वचन सवैया

त्रय देह अनातम को तुम जानत, विश्व प्रकाशक रूप तुमारा।
तुमको नहि जानत को हरि को, मन वाक अगोचर वेद उचारा।

इम जान तुमें तव नाम जपें, प्रिय के पद को उरधार उदारा।
तुमरे पद पंकज मांहि पुनापुन, यादव नाथ प्रणाम हमारा॥७४॥

चौपाई

परमानंद भयासुर स्वामी। हम सबको जो तव अनुगामी॥
पृथिवी तल पर उरुभर जोई। देव जन्म कर उतरा सोई॥७५॥
तब पादांकित भू को नाथा। जब हम देखेंगे सुख साथा॥
बड़भागी तव महि को माने। तव अनुकंपित निजको जाने॥७६॥

ब्रह्मवचन देवकी के प्रति-चौपाई

भया प्रमोद देवकी माता। तुमरे जठर आय जन त्राता॥
भोजपती से भय मत मानो। निज सुत को ईश्वर कर जानो॥७७॥
हम तुम सब यादव का पालक। तव सुत होगा दानव घालक॥
कंस दुष्ट को सह परिवारा। निश्चय मारेगा सुत थारा॥७८॥

नारद-वचन दोहा

याविध हरि का स्तवन कर, ब्रह्मा देव समेत।
हरि गुण गावत पंथ में, निज निज गये निकेत॥७९॥
कृष्ण पक्ष नाभस्य में, तिथि अष्टमि निर्धार।
अर्ध रात्रि सह रोहिणी, चन्द्र उदय बुधवार॥८०॥
सर्व गुणों कर युक्त जब, उदय भया शुभकाल।
पूरब दिशि से चन्द्र इव, प्रकट भये गोपाल॥८१॥

जय जय ध्वनि नभ में भई, बाजे बजे अपार।
शीतल मन्द सुगन्ध तब, चला पवन सुखकार॥८२॥

देव पुष्प वर्षा करें, करें अप्सरा गान।
मन्द मन्द वर्षें जलद, गर्जें सिन्धु समान॥८३॥

पुत्र जन्म उत्सव समय, अमित हर्ष उर धार।
दश सहस्त्र गोदान का, कर संकल्प उदार॥८४॥

परम पुरुष परमातमा, निज सुत को तब जान।
हस्त जोड़ वसुदेव ने, करा कृष्ण गुण गान॥८५॥

वसुदेव-वचन सवैया

सुख रूप असंग अखण्ड प्रभू, प्रकृती परपूरुष केवल जोई।
मति आदिक दृश्य अनातम को, तुम जानत चेतन व्यापक सोई।
त्रिगुणातम विश्व जड़ातम को, रचके परवेश करो कह कोई।
यह नाहि यथारथ है उपचारक, व्यापक का परवेश न होई॥८६॥

कलशादिक कारज के उपजे, पुनि कारण भूमि प्रवेश न होई।
निज आतम दृश्य अनातम को, निज से भिन जानत है सत जोई।
नित बाधित को सत मानन से, यदि पंडित बी नर मूरख सोई।
निज आतम से भिन दीसत जो, उपचारक सो श्रुति भाषत कोई॥८७॥

सब दृश्य प्रपंच अनातम में, तुम पूरण हो सब विश्व अधारा।
निखिलातम वास्तव वस्तु विभू, तुमसे कुछ कारज नाहिं नियारा।

करणोकर गोचर ग्राह करे, नित यद्यपि होय न ग्राह तुमारा।
रसना करके रस ग्राह करे, जिम रूप प्रबोध न होय उचारा॥८८॥

जग के उपजावन कारण को, तुमने विधि रूप रजोगुण धारे।
प्रति पालन हेत विभो तिसके, जलशायि सतोगुण देह तुमारे।
पुन अन्त समें लय हेतु धरो, तुम रुद्र तमोगुण रूप मुरारे।
अब भूकर भार उतारण को, अवतार लिया हरि धाम हमारे॥८९॥

तुमसे निज काल गती सुनके, तव ज्येष्ठ सहोदर कंस पछारे।
निज दासन से सुनके तुमरा, अवतार सहायुध सो असुरारे।
अब आय उपद्रव को करसी, खल दुष्ट मती सबको दुखकारे।
इसमें प्रभु जो कछु योग्य लखे, करिये सुर सो शरणागत प्यारे॥९०॥

नारद-वचन दोहा

देख पुत्र को देवकी, रूप राशि भगवान्।
त्रास मानकर कंस से, लगी कृष्ण गुणगान॥९१॥

देवकी-वचन कवित्त

सत्तामात्र निर्विकार, निर्विशेष निराधार,
शुद्ध ब्रह्म ज्योति विभू, वेद ने उचारा है।
आद्य विष्णू निराकार, ज्ञान रूप जो अपार,
तिसी जगदीश मम कुक्षि देह धारा है।
द्विपरार्ध अन्त माहीं, बचे कोई भूत नाहीं,
माया मांहि लीन होत नभ आदि सारा है।

तहाँ जोई शेष रहे, नेति नेति वेद कहे,
माया का आधार जोऊ सो स्वरूप थारा है॥१२॥

चंद्रकला छंद

यह मानुष काल भुजंगमसे, भय मान दशो दिशि धावत है।
विधि लोक प्रयंत गये इसको, यह काल सरीसृप खावत है।
तज मान मदादिक को जब जो, तुमरी शरणागत आवत है।
तुमरे पद पद्म दया करके, भय शून्य गती जन पावत है॥१३॥

यह भोजपती खल दुष्टमती, इससे मम चित्त अती डरपावे।
अब पाहि प्रभो हमको तुमको, शरणागत वत्सल आगम गावे।
यदुनाथ उपाय करो अब सो, जिससे प्रभु को यह जान न पावे।
तुम यद्यपि ईश्वर देव पते, मम योषित के उर धीर न आवे॥१४॥

मत्तगयंद छंद

पूरण चन्द्रवदानन की द्युति, संचय से तम दूर निवारे।
पंकजपत्रयुगाक्ष शिखी गल, श्यामतनू तनु केश तुमारे।
हीर विडूरज आदि मणीकर, युक्त किरीट धरा शिर थारे।
कौस्तुभ मौक्तिक हार सितांबुज, माल पड़ी दरकंठ मझारे॥१५॥

शंख रथांग गदा सित पंकज, चारु चतुर्भुज में असुरारे।
कानन में मकराकृत कुंडल, कांचन कंकण है कर थारे।
पीत दुकूल पुशाक अधोंशुक, पाद युगांबुज नूपुर धारे।
कांचन कांचिकलाप कटी पर, लाल मणी सम हैं नख प्यारे॥१६॥

रूप अलौकिक है तुमरा यह, ध्यान करें इसका मुनि सारे।
सो इसको हम गोचर देखत, को नहि जानत भाग हमारे।
अन्तरधान करो इसको वर, बालक रूप धरो जन प्यारे।
वाम रती तनु धाम मती नर, देखन योग्य न रूप तुमारे॥९७॥

भगवद्-वचन चौपाई

स्वायंभुव मन्वन्तर जोई। पृश्नी नाम तहाँ तू होई॥
सुतपा नाम भयो वसुदेवा। तुम दोनों मम कीनी सेवा॥९८॥

शुष्क पत्र अर पवन अहारा। द्वादश सहस वर्ष तप धारा॥
हो प्रसन्न हम दर्शन दीना। तब तुमरा तप सफला कीना॥९९॥

तुम मांगा मम सम सुत माई। निज समान कहिं खोजूं जाई॥
याविध कर हम हृदय विचारा। तुमरी कुखि लीनो अवतारा॥१००॥

पृश्नि गर्भ तब नाम हमारा। विदित होत भा सब संसारा॥
कशप अदिती भये तुममाता। तब वामन मैं भा बिख्याता॥१०१॥

अब तुमरी कुखि तीसर बारा। तव हित लीना हम अवतारा॥
पुत्र भाव करके तुम मानो। अथवा ब्रह्मभाव कर जानो॥१०२॥

जिससे बढ़े प्रेम मम माहीं। भजन सोउ मम दूसर नाहीं॥
अब तुम्हरा पुनजन्म न होऊ। परम गती पावो तुम दोऊ॥१०३॥

यदी कंस से भय तुम पावो। तो हमको गोकुल पौंचावो॥
यशमति से कन्या जो जाता। तिसें यहाँ लावों तुम ताता॥१०४॥

वसुदेव-वचन चौपाई

किम तुमको गोकुल पौंचावूं। कैसे द्वार बहिर मैं जावूं॥
द्वारे द्वारपाल सब जागे। गृह कपाट दृढ़ ताले लागे॥१०५॥
नन्द भवन को जानो तैसे। यमुना पार जाऊँगा कैसे॥
वर्षित घन मग दीखत नाहीं। पड़ी शृंखला मम पद माहीं॥१०६॥

भगवद्-वचन चौपाई

मम माया मोहित सब होई। द्वारपाल जावेंगे सोई॥
मोरे पद स्पर्श सेताता। खुले जानिये फाटक व्राता॥१०७॥
शेष नाग निज फण कर छाया। करसी मग में तोर सहाया॥
ताके फण गत मणि द्युति व्राता। ताकर मग दीखेगा ताता॥१०८॥
मम पद छूवत यमुना जोई। गुलफ प्रमाण होयगी सोई॥
गोदी ग्रहण मात्र से मेरे। तूट जाँयगे बंधन तेरे॥१०९॥

नारद-वचन दोहा

या विध तिनको भाष के, माया पति योगेश।
मात पिता के देखते, भये बाल नर वेश॥११०॥
सुत समेत वसुदेवजी, गमने जब नर भूप।
भयी नन्द के गेह में, कन्या अद्‌भुत रूप॥१११॥
हरि माया मोहित भई, भूल गया सब ज्ञान।
जगत जनक को देवकी, निज सुत करके मान॥११२॥

बालकृष्ण के विरह से, दुखित भई तब मात।
मुख चूमति निज पुत्र को, बार बार उर लात॥११३॥

देवकी-वचन चौपाई

वो दिन फिर आवेगा ताता। पुन देखेगी तव मुख माता॥
तात वत्स बल जावे माई। जावो निज जन को सुखदाई॥११४॥

मैं निज हृदय भली विधजोई। पुत्र विरह सम दुख नहिं कोई।
जो कृपालु हो सुत दे सांई। तास विरह पुन देवे नाँई॥११५॥

आज भाग यशुमति के जागे। पुत्र भाग मरे सब भागे।
बार बार बल जावे माता। निज जननी जनि भूलो ताता॥११६॥

बाल चरित का आनंद जोई। मम भागन में लिखा न सोई।
उरधर तव दर्शन की आशा। करहूँगी इस तनु में वासा॥११७॥

नारद-वचन दोहा

तनुज दिया पति गोद में, अमित कष्ट उर पाय।
गमने श्री वसुदेव जी, गणपति हृदय मनाय॥११८॥

सुत को यशुमति शयन में, धरकर अतिदुख पाय।
कन्या को निज गोद ले, मथुरा पहुँचे आय॥११९॥

पूरबवत फाटक लगे, निज पद शृंखल धार।
कन्या का रोदन सुना, जागे पहिरेदार॥१२०॥

भोजपती सुन दूत से, पहुँचा कारागार।
निज वैरी लख बाल को, मारण भया तयार॥१२१॥

देवकी-वचन चौपाई

यह कन्या नहि मारन योगू। करहैंगे तव निन्दा लोगू॥
बहुत तनुज मम तुमने मारे। ज्वलित अनलसम जो द्युतिवारे॥१२२॥
यह इक कन्या देवो ताता। मैं तुमरी अनुजा हूँ भ्राता॥
मृत तनूज मैं मन्द अभागी। मो पर वीर होव अनुरागी॥१२३॥
जो यह जीवत रही कुमारी। करहूँगी तव सुत की नारी॥
इससे काल न कहा तुमारो। बिन अपराध इसे क्यों मारो॥१२४॥

नारद-वचन दोहा

याविध कहकर कंस को, कन्या कण्ठ लगाय।
रुदन करत भयि देवकी, मुख सम दीन बनाय॥१२५॥
कंस तास की गोद से, बलकर लीनी छीन।
शिला मांहि मारत भया, सो निर्दयी मलीन॥१२६॥
छूट कंस के हाथ से, गयी गगन मंझार।
तांको यह बोलत भयी, रूप अष्टभुज धार॥१२७॥

देवी-वचन चौपाई

अरे दुष्ट जो शत्रु तुमारा। जहाँ तहाँ तिसने तनु धारा॥
मोको मारण से क्या होई। मारेगा तोको प्रभु सोई॥१२८॥

नारद-वचन दोहा

कन्या के सुन वचन तब, मन में विस्मय जान।
भगिनी भामहिं खोलकर, बोला कर सन्मान॥१२९॥

कंस-वचन चौपाई

अहो पूज्य भगिनी हे भामा। अधम नीच मैं मोह गुलामा॥
अति निर्दयी बन्धुजन द्रोही। कौन नरक मोको अब होही॥१३०॥
देव झूठ भाखें अब जाना। जिनका वचन सत्य मैं माना॥
राक्षस सम तुमरे सुत मारे। दीने कष्ट बहुत विधि थारे॥१३१॥
जीवत मृत सम जानो मोही। जाकर अपकीरति जग होही॥
क्षमा करो अपराध हमारे। तुम साधू समदृष्टी वारे॥१३२॥

नारद-वचन दोहा

या विध कहकर रुदन कर, तिनके चरण मझार।
गिरा कंस तब कहत भा, श्री वसुदेव उदार॥१३३॥

वसुदेव-वचन चौपाई

धरो धीर तुम उर नर नाहू। जन्ममरण यह देह स्वभाहू॥
सुत का शोक करें हम जोऊ। जो जग निजथिर रहना होऊ॥१३४॥
यह सब जगत काल का खाजा। बली अबल सब निर्धन राजा॥
यावत संगम लिखा विधाता। न्यून अधिक नहि होवत ताता॥१३५॥

तव अपराध नमैं मन चीना। विधि ने लिखा न तिनकर जीना॥
नहि को किसका सुतपितु माता। कर्म अधीन विश्व सब भ्राता॥१३६॥

नारद-वचन दोहा

भगिनी भामा युगल को, कर प्रसन्न असुरेश।
गृह में जा निज सचिव को, कहा स्वकीय कलेश॥१३७॥

कंस-वचन चौपाई

वृथा देवकी के सुत मारे। गगन-गिरा भी झूठ उचारे॥
मम पूरव वैरी हरि जोई। जहाँ तहाँ जन्मा जग सोई॥१३८॥

जब लग ताकी खबर न पावूं। तब लग रुचिकर अन्न न खावूं॥
करो उपाय वेग अब सोही। जाविध मरे असुर-कुलद्रोही॥१३९॥

मंत्री-वचन सवैया

महि मंडल में जन्मा हरि जो, तिसको मरिया अब जान सुरारे।
इस मास विषे उपजे शिशु जो, व्रज जंगल में पुर ग्राम मझारे।
हमरे कर दर्शन से तनु को, तज के सब जावनगे यम द्वारे।
सुर दानव मानव में अस को, नहिं जो रण गोचर होय हमारे॥१४०॥

चंन्द्रकला छंद

हरि क्षीर पयोनिधि मांहि धसे, तुमरे भुजदंड कुदंड डरे।
धर वेष कुरूप अरण्य विषे, शमशानन में हर वास करे।

तुमसे डर के निज जीवन के, हित तापस का विधि रूप धरे।
बलहीन सुरेन्द्र पुरोगम का, तुमको लख के मल-मूत्र झरे॥१४१॥

चौपाई

यद्यपि हमरे शत्रु सुरेशा। हमसे डरपत रहत हमेशा॥
तदपि उपेक्षा योग्य न वैरी। अल्प सर्प जिम होवत जहरी॥१४२॥
इनके मृति का सुगम उपाऊ। सुनो महाबल दानव राऊ॥
सब देवन का जग में जीना। नृप जानो गोविन्द अधीना॥१४३॥
जहाँ धर्म तहिं हरि को जानो। धर्म मूल श्रुति गो द्विज मानो॥
श्रुतिद्विज गोसाधू मुनि लोगा। जप तप व्रत संयम मख योगा॥१४४॥
नष्ट होनगे जब यह सारे। तब सब सुर मृत जानो प्यारे॥
जो अब रावर आज्ञा होई। धर्म मूल नहिं रहगा कोई॥१४५॥

कंस-वचन कवित्त

जाय विप्रन को मारो, निगमागम को फारो,
योग याग भंग करो, मुनिन को मारिये।
धेनुन के धाम जारो, जप तप को निबारो,
साधुन को बीन बीन देश से निकारिये।
व्रत नेम बंद करो, काल से न भूल डरो,
तिलक को चाट लेवो, यज्ञ सूत्र जारिये।
नाम कोई मत लेवे, द्विज को न दान देवे,
देवन की मूरति को सिंधु मांहि डारिये॥१४६॥

नारद-वचन दोहा

जिम भाखा था कंस ने, तैसे ही तिन कीन।
भये देव द्विज अति दुखी, जैसे जल बिन मीन॥१४७॥

कन्या ले वसुदेवजी, जब गमने भूपाल।
पुत्र जन्म सुन नन्द तब, द्विज बोले तत्काल॥१४८॥

वेद विधी से जन्म कृत, करा लक्ष गोदान।
सप्त शैल तिल रत्न बहु, दिये दान कर मान॥१४९॥

भूषण वसन अनेक विध, रस घृत आदि अपार।
दिये द्विजन को नन्द ने, मणि दींनार हजार॥१५०॥

मागध बन्दी सूत पुन, सुन सुन आये द्वार।
मन वांछित ले दान तब, आशिष करें उचार॥१५१॥

बंदी-वचन कवित्त

चिरजीवो सुत तेरो, दुख नाहि आवे नेरो,
दूध दही घृत खावो, मंचन में सोयेगो।
होवो बलवान वीर, रण माँहि अति धीर,
पुत्र पौत्रवान होवो, दानी अति होयेगो।
दिन दिन वृद्ध होवो, कण्ठ मांहि मणि सोवो,
याको रति कामदेव, देख मन मोहेगो।
होवो पण्डित सुजान, विप्र करें गुणगान,
देवदैत्य द्विज मुनी, याके पद धोयेगो॥१५२॥

सुंदरी सवैया

रविचन्द्र शिखी मणिकी द्युति जो, सब हो इकठी तुमरा सुत जाया।
नहीं दीसत है अपना पर को, इस लोक चतुर्दश में तम छाया।
निज योषित भूल जलंधर की, पतनी तनु को हरि कंठ लगाया।
हरिको युवती लखके हर ने, तनु से निज वीरज त्याग कराया॥१५३॥

पुन सागर मंथन काल विषे, हर त्याग पियूष हलाहल खाया।
निज योषित जान विधी अपनी, तनुजा सन मैथुन हेत प्रधाया।
तम आवृत हो सुरराज शशी, द्विज योषित सों मिल धर्म गँवाया।
तिनको कुछ दीसत ना जिनके, नहि नेत्रन में तव पुत्र समाया॥१५४॥

कवि-वचन सार छंद

आनन्द नन्द-भवन में छाया॥ टेक॥
नील कमल दल लोचन चंचल, यशुमति ने सुत जाया।
मरकत मणि सम श्याम मनोहर, लख शत काम लजाया।
मन्द मन्द मुस्कान चन्द्र मुख, विमलवेद यश गाया।
देन बधाई ब्रज की वनिता, बाल वृद्ध सब धाया।
मन वांछित सबको प्रिय वस्तू, देत नन्द हर्षाया।
कृष्ण चरण रज माँगन को अब, कार्ष्णि नंद घर आया॥१५५॥

गोपी-वचन सार छंद

आली यशुमति ने सुत जाया॥ टेक॥
पुष्प वृष्टि होवत है नभ से, निरखत अमर निकाया।

वन्दी वंश उचारत कोविद, वेद पढ़त हर्षाया।
याचक सकल अयाचक कीने, व्रजपति द्रविण लुटाया।
दधि मिश्रित कुंकुम कस्तूरी, बीथिन में बह आया॥१५६॥

चले जात हैं नर नारी सब, मोद न हृदय समाया।
देन बधाई यशुमति माई, गोकुल सब उठ धाया।
चलिये निरखें शिशु शुभ मुख को, अद्भुत बाल सुहाया।
नन्दराज सुत जनि उत्सव लख, सफल करो निज काया॥१५७॥

नारद-वचन दोहा

ब्रज के गोपी गोप सब, करके विविध श्रृंगार।
नाना विध कर भेंट ले, आये नन्द अगार॥१५८॥

मास-पारायण द्वितीय विश्राम॥२॥
पाक्षिक पारायण प्रथम विश्राम॥१॥

गोप-गोपी-वचन चौपाई

वर्ध वर्ध तू यशमति रानी। तव कीरति नहि जात बखानी॥
आज भयी हरि की अतिदाया। वृद्ध अवस्था में सुत जाया॥१५९॥

पुण्य कल्पद्रुम फला तुमारा। जाको लख धन भाग हमारा॥
रक्ष रक्ष सुत को बड़ भागे। जनि काऊ की दृष्टी लागे॥१६०॥

नारद-वचन दोहा

गोप गोपिका हर्ष कर, करें नित्य कल गान।
बाजे बजे अनेक विधि, को कवि करे बखान॥१६१॥

हरिगीतिका छन्द

को कवि करे सुबखान तोरण, ध्वज पताका पुर लगे।
वर विविध गंधित नीर सिंचित, पंथ प्रांगण जल बगे।
हरि चन्दनागुर तेल हल्दी, कुंकुमोदक दधि युतम्।
सब गोप गोपी परस्पर तब, डार हैं अति हर्षितम्॥१६२॥

ब्रह्मादि सुर सह अप्सरा नभ, निरख कर हर्षात हैं।
जय जय उचारत कुसुम वर्षत, विष्णु गुण गण गात हैं।
मैं क्या कहूँ भूपाल तोको, कृष्ण जन्म हुलास को।
शत शेष त्रिदश गणेश शारद, भाख सकत न जास को॥१६३॥

गोपी गण का रोहिणी, कीना अति सन्मान।
तिलक माल भूषण वसन, दिये बन्धु जन जान॥१६४॥

नन्दराज ने गोप सब, सन्माने हर्षाय।
पहिराये भूषण वसन, माला तिलक लगाय॥१६५॥

अथ श्रीशंकर-आगमन

शार्दूलविक्रीडितवृत्तम्

कैलासे गिरिजा गिरौ निजपतिं, दृष्ट्वा प्रफुल्लाननं
गन्तुं क्वापि समुत्सुकं समुदितं, हित्वा स्वकां वल्लभाम्।
पुत्रं षड्वदनं मतङ्गजमुखं, नन्दीश्वरं सेवकं,
एकं ध्यानसमुत्थितं च चकितं, पप्रच्छ नम्रानना॥१६६॥

पार्वतीवचनमुपचित्रवृत्तम्

गन्तुं क्वेच्छसि पुलकिततदेहः, कस्मिन्स्वामिन्भवतस्स्नेहः।
हर्षितहृदयः किं त्वमिदानीं, कथं करोषि ध्याने ग्लानिम्॥१६७॥

त्वत्तोऽन्यं नहि भगवञ्जाने, लोकचतुर्दशविश्वविताने।
यासि यदर्थं त्वरितं कृत्वा, तं वद मामपि पत्नीं हित्वा॥१६८॥

श्रीशंकरवचनम् सारवृत्तम्

वयमपयामो यत्र श्यामो, ह्यस्मत्प्राणाधारः
विश्वविलासः स्वयंप्रकाशः, सन्मात्रस्त्वविकारः।
विमलचरित्रः, सुस्मितवक्त्रः, कौस्तुभमणिगलहारः
अद्भुतवेशः, कुञ्चितकेशः, करुणाशोभागारः॥१६९॥

ध्याने ध्यातस्त्वनिशं प्रातस्, तदपि स नो आयाति
पुनरपि लोके स्वीयेऽशोके, वैकुण्ठे न च भाति।
वृन्दारण्ये तस्माद्धन्ये, द्रष्टुं यामो वामम्
हृतजनचित्तं यतिवरवित्तं, वल्लभभवने श्यामम्॥१७०॥

यैरपि दृष्टा परमवरिष्ठा, हरिमुखशशिनः शोभा
येषां जातस्त्वभिमतदाता, हृदि हरिदर्शनलोभः।
ते भवधन्या ये समनन्या, भक्ता भुवनललामे
नो चेन्मनुजा ज्ञेया दनुजा, अमरा असुराः श्यामे॥१७१॥

पार्वती-वचनमुपचित्रवृत्तम्

गुरुरुत् शिष्यो बंधुर्भ्राता, श्यालः श्वश्रूः श्वसुरो माता।
पुत्री पुत्रः कर्म कलत्रं, मित्रं तातः स्वजनः सत्रम्॥१७२॥

भगवत्प्राप्तौ त्वरितममायं, ये कुर्वन्ति न बंधु-सहायम्।
ये तु भवन्ति प्रत्युत विघ्नाः, स्वीयास्ते नहि शत्रुकृतघ्नाः॥१७३॥

धन्यास्ते ये भगवद्भक्ता, ऐन्द्रियभोगे परमविरक्ताः।
तेऽपि च लोके पूज्या धन्या, येषां बन्धुः कृष्णोऽनन्यः॥१७४॥

कविवचनमनुष्टुप्छन्दः

भार्य्यानुकूलतां दृष्ट्वा, शंकरो लोकशंकरः।
ययौ वृन्दावने तत्र, नन्दालयं समुत्सुकः॥१७५॥

अन्नमुष्टिं ददौ गोपी, आलक्ष्य-शब्दवादिने।
त्यक्त्वा तां शंकरो योगी, यशोदां प्रत्युवाच सः॥१७६॥

श्रीशंकरवचनम् सारवृत्तम्

व्रजपतिभार्य्ये गोपकुलार्य्ये, भैक्षमिदं न मदीयं
पुत्रं दर्शय चित्तं हर्षय, मे बहुभाग्ये स्वीयम्।
यतिसम्मानं कुरु गुरुदानं, वयमिह दूरात्प्राप्ताः
इममायासं मयि विश्वासं, कुरु सफलं त्वं त्वाप्ताः॥१७७॥

यशोदा-वचन सारछंद

स्वामिन् भाषा शब्द उचारो॥ टेक॥
हम मूढ़न के समुझ न आवत, संस्कृत वचन तुमारो।
जो चाहिये सो साधो लेवो, यह सब तोर अगारो।
भवन पवित्र करो चौके में, भोजन हेत पधारो।
दधि घृत पायस पूरी जेमो, कम्बल लीजो कारो॥१७८॥

शंकर-वचन सारछंद

सुनिये नन्दनृपति की जाये॥ टेक॥
भोजन कम्बल हम नहिं लेवें, और नहीं कुछ भाये।
अपने सुत के दर्श करा दे, जिस हित तव गृह आये।
मन वांछित देना निगमागम, दान विधी बतलाये।
जैसा सुर तैसी तस पूजा, नीती निगम बताये॥१७९॥

प्रेमी दर्स पिपासे निशिदिन, अन्न वसन न सुहाये।
निज प्यारे के दर्शन के हित, हम यह वेष बनाये।
तव सुत के संस्पर्श किये से, शोभित होवत काये।
एक भवन की कौन चलाई, भव पावन श्रुति गाये॥१८०॥

यशोदावचन दिक्पालछंद

मैं बाल नहिं दिखावूं, मुनि वचन सुन हमारे।
तव तनु कुरूप दीसे, गल मांहि नाग कारे।

डरपत तनूज मेरा, तव देह के निहारे।
सब जीव को अभयता, देनी सुधर्म थारे॥१८१॥

तुम रिक्त कर न जावो, हम बाल बचे वारे।
जिस भवन से भिखारी, यदि रिक्त कर पधारे।
तब तिस गृहस्थ को सो, देके स्वपाप सारे।
तिसके सुकर्म लेवे, इम वेद श्रुति उचारे॥१८२॥

अपराध देना मोको, यह उचित नहीं तुमारे।
तव पादपद्म बन्दूँ, तुम शांत हृदय वारे।
देवो असीस शिशु को, भिक्षा करो अगारे।
जब श्याम युवा होगा, तब दर्श करसि थारे॥१८३॥

शंकर-वचन राधिका छंद

जो प्रेम हमारा सत्य, तथ्य गुरु चेरा।
तब देगा दर्शन आप, पुत्र वो तेरा।
निज धाम न जावूं, लाउँ यहाँ पर डेरा।
व्रजरानी जी प्रण सत्य, जानिये मेरा॥१८४॥

मैं निज प्रिय दर्शन हेत, जगत सब हेरा।
नहि अबलों देखा वदन, प्राणप्रिय केरा।
तुम दिये दर्श प्रिय प्रथम, श्रवण कर टेरा।
अब भया कौन अपराध, करी अति देरा॥१८५॥

यशोदा-वचन सारछंद

बाबा क्यों तुम अति हठ धारो॥ टेक॥
पुत्र कलत्र तजे क्यों अपने, जो तोको शिशु प्यारो।
सरल गृहस्थन को दुख देना, यह नहिं धर्म तुमारो।
भिक्षा करके वन में जावो, करिये ब्रह्म विचारो।
प्रत्यक् तत्त्व विवेक लिये यह, आश्रम निगम उचारो॥१८६॥
सो आरूढ़ पतित यति, जिसने आतम नहि निर्धारो।
वेष धरे की लाज न तोको, जो तुम धरना मारो।
दंडी मुण्डी तपसी आये, तुमरे सम न निहारो।
हस्त जोड़कर तव पद बन्दूँ, और अगार पधारो॥१८७॥

शंकर-वचन सारछंद

यशुमति तोको ज्ञान न आया॥ टेक॥
माधव को मानव मति मानो, देव देव श्रुति गाया।
इनके दर्शन कारण मैंने, भगवा वेष बनाया।
यह मम इष्टदेव अति प्यारा, इतर न मोहिं सुहाया।
प्राकृत बालक सम यह शिशु नहिं, कृष्ण अलौकिक काया॥१८८॥
योगी योग करें इसके हित, शंकर ध्यान लगाया।
याके जननी जनक न भ्राता, नहिं यह डरत डराया।
इसके डर कर डरपत निशदिन, अग-जंगम समुदाया।
केशव-चरण भक्ति जिस जनमें, तिसने आतम पाया॥१८९॥

यशोदा-वचन सारछंद

मुण्डी क्यों तुम रार बढ़ाई॥ टेक॥
जननी जनक न होवे तेरे, मरन तुमारे भाई।
तुमरे इष्टदेव गुरु होवन, अपने पुत्र लुगाई।
देव दैत्य तू तात तुमारा, मनुज न तोहि सुहाई।
कौन जन्म का वैरी तू मम, तुमने बहुत दुखाई॥११०॥

पिसुन प्रमादी विग्रहकारी, चाहत मान बड़ाई।
मूढ़ दैवकर दूषित आशय, यति भी देत दिखाई।
गाली देना उचित न तुमको, योगी सब सुखदाई।
संन्यासी नहि तुम पाखंडी, जावो त्वरित पलाई॥१११॥

कवि-वचन दोहा

हर को बाहिर काढ़ि के, यशुमति गई अगार।
खिन्न हृदय हो शम्भु ने, हरि पै करी पुकार॥११२॥

शंकर-वचन सारछंद

बिन दर्श देव तुमरे, अति विकल मन हमारा।
अब मोर शरण को है, तुमने जु त्याग डारा।
यदि भक्त वश्यवर्ती, सुस्वभाव यह तुमारा।
नहिं भक्त नष्ट होवे, यह नियम सत्य थारा॥११३॥

जीवेश भेद दुखदा, यदि अनृत जगत सारा।
तत्त्वं पदैक्य बोधक, यह सत्य श्रुति उचारा।

तो दर्स त्वरित देवो, मम प्रेम जो निहारा।
मम चरण पड़ यशोदा, ले जाय निज अगारा॥१९४॥

कवि-वचन दोहा

या विध कहकर गिरिश ने, मन इन्द्रिय कर लीन।
दामोदर की व्यक्ति का, ध्यान हृदय में कीन॥१९५॥

प्रेम दाम कर श्याम का, चित खिंचा तत्काल।
हर के उर मन कर गये, तनु का रहा न ख्याल॥१९६॥

उत यशमति निज भवन में, भोजन हेत सप्रीत।
मिशरी युत निज तनय को, दिया सघन नवनीत॥१९७॥

नहिं बोलत नहिं खाय हरि, हस्त लिये लव ग्रास।
दशा देख गोपाल की, यशुमति माना त्रास॥१९८॥

शिव समीप गमनी त्वरित, उर ग्रह शंका मान।
बोली दो कर जोर के, हँसे रुद्र भगवान्॥१९९॥

यशोदा-वचन राधिका छंद

तुम बैठे जिसके हेत, दुखित सो जानो।
नहिं बोलत भोजन करत, चित्र सम मानो।
अब चलो भवन कुछ यंत्र-तंत्र वा ठानो।
मैं किया जौन अपराध, हृदय नहिं आनो॥२००॥

हरि भक्त संत विद्वान, कृपा गृह गानो।
बिन माधव हमरी टेक, न और बखानो।
अब देख दुखी गोपाल, चित्त अकुलानो।
केशव बिन कमला भवन, तुल्य उद्यानो॥२०१॥

ले गमनी निज सदन में, शिव को कर सत्कार।
दिया गोदि में गिरिश की, यशमति कृष्ण कुमार॥२०२॥

भये मुदित मन त्रिपुररिपु, हरि को पर प्रिय चीन।
लालन कर पुन पुन तदा, तत्त्व निरूपण कीन॥२०३॥

शंकरवचनं-सारवृत्तम्

यद्वाचाऽनभ्युदितं येनाऽभ्युद्यत एव च वाणी।
यन्नयनेन न पश्यति नयनं येन च सर्वः प्राणी।
ध्यायति मूर्द्धनि खलु यज्ज्योतिर्योगी प्राप्ते प्राणे।
मधुसूदन दामोदर माधव, तत्त्वमस्यमृतपाणे॥२०४॥

यन्मनसा नहि मनुते निगमा मनोमतं येनाहुः।
यच्छोत्रेण शृणोति न कोपि श्रोत्रमिदं श्रुतमाहुः।
यान्ति लयं विद्वांसो यस्मिन् ब्रह्मणि जगतस्त्राणे।
वेदपुराणं यस्य श्वासः तत्त्वमस्यमृतपाणे॥२०५॥

कवि-वचन दोहा

प्रेम देख हर का हरी, निरख तास का आस।
हँसकर दीना वदन में, माखन मिसरी ग्रास॥२०६॥

मुदित वदन तक तनय का, उपजा मन में मोद।
मात यशोदा त्वरित तब, माधव लीने गोद॥२०७॥

केशव के पद पदम में, करके दण्ड प्रणाम।
गये मुदित मन त्रिपुररिपु, रटत जात हरिनाम॥२०८॥

प्रेमी को प्रीतम बिना, परप्रिय भव नहिं आन।
मात पिता गुरु बंधु सो, इष्ट देव भगवान॥२०९॥

अनुष्टुप् छन्द

श्रीमच्छङ्करलीलां यो भिक्षु-गोपाल-निर्मिताम्।
शृणोति प्रेम-भिन्नान्तः स्वस्मिञ्छं वितनोति सः॥२१०॥

जो कोई इस ताल को, करे प्रेम से गान।
सुत होवे तिसके भवन, सुन्दर कृष्ण समान॥२११॥

इतिश्रीमत्परमहंसोदासीनशिरोवतंसश्रीस्वामिकार्ष्णिज्ञानदासशिष्येण श्रीस्वामिकार्ष्णिगोपालदासाह्वेन विनिर्मिते गोपालविलासे पूर्वविश्रामे श्रीरामकृष्ण-जन्मोत्सववर्णनं नाम द्वितीयस्तालः समाप्तः॥२॥

ॐ

श्रीवृन्दावनविहारिणे नमः।

अथ तृतीयस्ताल:-३

श्लोकः

बालघ्नी पिबता पयो निशिचरी येनाऽऽहता पूतना
सूक्ष्माङ्गोत्कचदानवोऽथ निहतो वात्याशरीरस्तथा।
आख्या यस्य कृता च गर्गगुरुणा चौर्यं चकारेह यो
गोपीनां नवगोरसस्य मखभुक् कृष्णाय तस्मै नमः॥१॥

मदिरा छंद

सिंह नखान्वित मध्य मणी मय, हार मनोहर कंठ धरे।
जानु करांबुज भार चले, नवनीत नवानन कंज करे।
देह दिगम्बर हेममयी, कटि मेखल नूपुर पाद परे।
राम मुकुन्द सहोदर सो, मम लोचन गोचर आय खरे॥२॥

नारद-वचन दोहा

एक समय मथुरा गये, नन्द स्व-भृत्य समेत।
कर देवन हित कंस को, मित्र मिलन के हेत॥३॥

गृह आये लख नन्द को, तातकाल वसुदेव।
मिले हर्ष कर कंठ लग, कीनी बहु विध सेव॥४॥

वसुदेव-वचन चौपाई

अति प्रमोद भा मित्र हमारे। वृद्ध देह में सुत भा थारे॥
मो पर कृपा करी तुम मीता। दिया दर्श निज परम पुनीता॥५॥

इस संसार चक्र में प्यारे। दुर्लभ तुम सम मित्र उचारे॥
कहो कुशल है तुमरे भाई। दुग्ध देत हैं महिषी गाई॥६॥

नीर घास है बहु वन माहीं। आधि व्याधि तो व्रज में नाहीं॥
पुत्र सहित यशुमति कुशलाता। मम सुत कुशल सहित निज माता॥७॥

तुम ही शिशु के पालक भ्राता। वो जानत तुमको पितु-माता॥
कंस दुष्ट के भय के मारे। हमरा गमन भया नहि थारे॥८॥

दो कर जोर कहूँ इक बाता। रोष मानना नहिं कुछ ताता॥
बहुत काल तुम मत ठहरावो। कारज कर जल्दी गृह जावो॥९॥

गोकुल में उत्पात महाना। होवत है मोको अनुमाना॥
कंस दुष्ट के भेजे अनुचर। इत उत करें उपद्रव निश्चर॥१०॥

नन्द-वचन चौपाई

ब्रज में कुशल क्षेम अति ताता। तव सुत कुशल सहित निज-माता॥
तव सुत मम सुत प्रिय दो नाहीं। निज सुत मैं जानूँ मन माहीं॥११॥

एक कष्ट बहु मम उर प्यारे। दुष्ट कंस जो तव सुत मारे॥
तुम सम धर्मशील दुख पावे। ईश गती कुछ कही न जावे॥१२॥

नारद-वचन दोहा

मित्र वचन से पुत्र हित, शोकित भा व्रजपाल।
हरि सुमरण कर बैठ रथ, गृह गमना तत्काल॥१३॥

भोजप प्रेरी पूतना, पुर ग्रामन के बीच।
बाल हनन हित विचरती, गोकुल आई नीच॥१४॥

सुन्दर योषित रूप धर, गयी नन्द के द्वार।
देख यशोदा रोहिणी, कीना अति सत्कार॥१५॥

यशोदा-वचन चौपाई

कह सुन्दरि तू किस की नारी। रमा रती वा हर की प्यारी॥
वामोरू तू किस की जाई। कहो सुमुखि किस कारण आई॥१६॥

पूतना-वचन चौपाई

मम पति मात पिता है जोई। यशुमति तुमको विदित न सोई॥
भगिनी तुमको देन बधाई। तव सुतका मुख देखन आई॥१७॥

यशोदा-वचन चौपाई

दोनों पुत्र रोहिणी लावो। या देवी की गोद बिठायो॥
जो असीस देगी यह नारी। होवेंगे सुत परम सुखारी॥१८॥

नारद-वचन दोहा

दोनों सुत को लाय के, दिये तास की गोद।
देख पूतना शिशुन को, माना अति मनमोद॥१९॥

श्याम शुक्ल युग सर्प को, मूढ जेवड़ी मान।
ग्रहण करे दुख पात अति, सो गति याकी जान॥२०॥

रामकृष्ण को गोद ले, बहुविध लालन कीन।
गरल युक्त कुच युग्म को, युग शिशु के मुख दीन॥२१॥

तांके प्राण समेत तिन, पान करा पय भूप।
छोड़ छोड़ कहती भयी, प्रकट करा निज रूप॥२२॥

मूसल सम तांके दशन, नाशा गुफा समान।
खुले केस गल में पड़े, फैल गये पद पानि॥२३॥

निर्भय हो तांके हृदय, खेल करें युग भ्रात।
तात काल दोनों शिशू, गोद लिये निज मात॥२४॥

रुदन करत अति विकल मन, जननी सह परिवार।
वार वार निज पुत्र को, लावत हृदय मझार॥२५॥

गो मूतर से स्नान तब, करवाये युग भ्रात।
करत भई हरिनाम से, रक्षा यशुमति मात॥२६॥

यशोदा-वचन मत्तगयन्द छंद

पातु हरी शिर को गल को, हयग्रीव नृसिंह मुखाम्बुज थारे।
दाशरथी भुजको उरको, पुन वामन अच्युत पेट मझारे।
केशव त्रातु कटी पुरुषोत्तम, जानुन माधव पाद तुमारे।
अन्तर आतम को जगदीश्वर, राम दशों दिश में धनु धारे॥२७॥

नारद-वचन दोहा

रक्षा कर पुन पुत्र को, करवाया पय पान।
सुत के मंगल हेत तब, दिये द्विजन को दान॥२८॥

इतने में तब नन्द नृप, आये भवन मझार।
देख पूतना देह को, कीना हा हा कार॥२९॥

समाचार सुन तास का पुरवासिन से तात।
वार वार युग पुत्र का, मुख चूमत उर लात॥३०॥

देह काट कर तास का, फूका विपिन मझार।
पुत्र निरामय हेत तब, विप्र जिमाय हजार॥३१॥

निज वैरिणि को कृष्ण ने, जननी की गति दीन।
अस कृपालु गोपाल को, को न भजे मति हीन॥३२॥

यशोदा-वचन चौपाई

दोनों पुत्र रोहिणी लावो। या देवी की गोद बिठायो॥
जो असीस देगी यह नारी। होवेंगे सुत परम सुखारी॥१८॥

नारद-वचन दोहा

दोनों सुत को लाय के, दिये तास की गोद।
देख पूतना शिशुन को, माना अति मनमोद॥१९॥
श्याम शुक्ल युग सर्प को, मूढ जेवड़ी मान।
ग्रहण करे दुख पात अति, सो गति याकी जान॥२०॥
रामकृष्ण को गोद ले, बहुविध लालन कीन।
गरल युक्त कुच युग्म को, युग शिशु के मुख दीन॥२१॥
तांके प्राण समेत तिन, पान करा पय भूप।
छोड़ छोड़ कहती भयी, प्रकट करा निज रूप॥२२॥
मूसल सम तांके दशन, नाशा गुफा समान।
खुले केस गल में पड़े, फैल गये पद पानि॥२३॥
निर्भय हो तांके हृदय, खेल करें युग भ्रात।
तात काल दोनों शिशू, गोद लिये निज मात॥२४॥
रुदन करत अति विकल मन, जननी सह परिवार।
वार वार निज पुत्र को, लावत हृदय मझार॥२५॥

गो मूतर से स्नान तब, करवाये युग भ्रात।
करत भई हरिनाम से, रक्षा यशुमति मात॥२६॥

यशोदा-वचन मत्तगयन्द छंद

पातु हरी शिर को गल को, हयग्रीव नृसिंह मुखाम्बुज थारे।
दाशरथी भुजको उरको, पुन वामन अच्युत पेट मझारे।
केशव त्रातु कटी पुरुषोत्तम, जानुन माधव पाद तुमारे।
अन्तर आतम को जगदीश्वर, राम दशों दिश में धनु धारे॥२७॥

नारद-वचन दोहा

रक्षा कर पुन पुत्र को, करवाया पय पान।
सुत के मंगल हेत तब, दिये द्विजन को दान॥२८॥

इतने में तब नन्द नृप, आये भवन मझार।
देख पूतना देह को, कीना हा हा कार॥२९॥

समाचार सुन तास का पुरवासिन से तात।
वार वार युग पुत्र का, मुख चूमत उर लात॥३०॥

देह काट कर तास का, फूका विपिन मझार।
पुत्र निरामय हेत तब, विप्र जिमाय हजार॥३१॥

निज वैरिणि को कृष्ण ने, जननी की गति दीन।
अस कृपालु गोपाल को, को न भजे मति हीन॥३२॥

कृष्ण जन्म नक्षत्र दिन, उत्सव भया अपार।
यशुमति ने सुत युगल का, कीना विविध शृंगार॥३३॥

राम गौर हरि श्याम तनु, नील पीत पट धार।
मध्य नखी नख़ युक्त उर, शोभित मणि गण हार॥३४॥

घुँघरारे लघु शीश कच, पद नूपुर सुविशाल।
कंज नयन कर कमल सम, उर पंकज की माल॥३५॥

कर कंकण मुख चन्द्र सम, सुषमा के पर धाम।
केहरि कटि में कौंदनी, नासा मुक्त ललाम॥३६॥

वेद मंत्र कर द्विजन ने, करा बाल स्वस्त्ययन।
यशमति देखा बालको, आलसयुत युग नयन॥३७॥

शकट अधः शुभ दोल में, शयन कराये बाल।
उत्सव कारज में लगी, रहा न शिशु का ख्याल॥३८॥

निज बांधव गृह आय जो, तिनका कर सम्मान।
बहु बाजे बजवाय के, दिये द्विजन को दान॥३९॥

दानव उत्कच नाम तब, सूक्षम तनु को धार।
शिशु मारण हित शकट को, उलटा करण विचार॥४०॥

हरि ने पद कर शकट को, दिया असुर पर डार।
तनु को तज कर दैत्य तब, गमना इन्द्र अगार॥४१॥

टूक टूक लख शकट को, नन्दादिक सब लोक।
करहैं विविध विचार तब, सुतहित उपजा शोक॥४२॥

नंद-वचन चौपाई

कैसे गिरा शकट यह भाई। अति प्रचंड आँधी नहिं आई॥
नहिं कुछ वसुधा कम्पित होई। उष्ट्र गज आया नहिं कोई॥४३॥
जा पर घृत के पात्र अपारा। अपने आप न गिरने वारा॥
भयी ईश की मो पर दाया। जो शिशु रथ नीचे नहि आया॥४४॥

बालक-वचन चौपाई

लघु शिशु क्षुधकर व्याकुल होया। दुग्ध पान करने हित रोया॥
रिस कर इसने पाद पछारा। पद प्रहार से गाड़ा डारा॥४५॥

नारद-बचन दोहा

बाल वचन को गोप सब, मिथ्या करके मान।
जननी सुत को गोद ले, दुग्ध कराया पान॥४६॥
करवाया स्वस्त्ययन तब, उर ग्रह शंका मान।
अन्न वस्त्र गो रत्न घृत, दिये द्विजन को दान॥४७॥

यशोदा-वचन चौपाई

मम प्रतिकूल दैव अब भैना। क्षण भर बालक लेत न चैना॥
विविध कलेश शिशुन पर आवें। निज भागन से ये बच जावें॥४८॥

तृण समान सब संपत तज कर। जावूं कहाँ तनुज युत भजकर॥
एक एक सुत भया हमारे। सो बी दैव न देख सहारे॥४९॥

नारद-वचन दोहा

एक समय जननी युगल, सुत को लेकर गोद।
लालन पालन कर रही, उर न समावत मोद॥५०॥
गिरि सम गुरु लख पुत्र को, महि में दिये बिठाय।
तृणावर्त इक दैत्य ने, शिशु को लिया उड़ाय॥५१॥
अंधकार कर डारिया, एक मुहूरत काल।
धूड़ उड़ा कर असुर ने, भये विकल गोपाल॥५२॥
देखा नहिं जब पुत्र को, जननी मही मझार।
मूरछ हो महि में गिरी, करके हा हा कार॥५३॥
गोपी सब रोने लगीं, नन्दादिक सब गोप।
रुदन करें अति विकल मन, देख बाल का लोप॥५४॥
तृणावर्त के कण्ठ को, पीड़ित हरि ने कीन।
शिशुन सहित नभ से गिरा, तब वो असुर मलीन॥५५॥
शिला पृष्ठ में गिरत ही, तजे दैत्य ने प्रान।
तांके गल में युगल शिशु, लिपट रहे सुख खान॥५६॥
गोप गोपिका देख कर, तुरत उठाये बाल।
दिये मात की गोद में, सुखी भये गोपाल॥५७॥

कण्ठ लगाकर शिशुन को, जननी अति हर्षान।
मानो मृतक शरीर में, उलट आय हैं प्रान॥५८॥

तिने सनान कराय के, रक्षा पुन पुन कीन।
दिये दान बहु द्विजन को, धन्य भाग निज चीन॥५९॥

यशोदा-वचन मत्तगयंदछंद

पूरव में तप दान किया कुछ, कूप तड़ाग अराम बनाया।
वा हरि पूजन कीन जपा हरि, नाम निरन्तर वा हरि ध्याया।
वा शशि सूरज ग्राह समें कुरुक्षेत्र विषे तुलदान कराया।
कालमुखानल में पड़ के पुनि, जो मम बालक जीवत आया॥६०॥

नारद-वचन दोहा

मणी कनक मय प्रेंख में, युग शिशु दिये लुटाय।
पवन करत भइ सुतन को, निज कर से हर्षाय॥६१॥

जो कोई इस चरित को, करे प्रेम से गान।
रोग भूत से तास के, रक्षक हैं भगवान॥६२॥

मास-पारायण तृतीय विश्राम॥३॥

एक दिवस वसुदेव ने, गर्गाचारज नाम।
उपरोहित निज वंश का, बोल लिया निज धाम॥६३॥

कर प्रणाम गुरु चरण में, आसन दीन बिछाय।
कहा मनोरथ आपना, निरजन ठौर बिठाय॥६४॥

वसुदेव-वचन मत्तगयंद छंद

जानत हो द्विज नायक जी, तुमको जिस कारज हेत बुलाया।
योग प्रभाव प्रभाकर से, कुछ गोप्य नहीं तुमको मुनिराया॥
गोकुल में मम बालक हैं, युग नन्द नृपालय मांहि छिपाया।
नाम रखो तिनके विधि से, व्रज जाकर ज्योतिष में जिमि गाया॥६५॥

नारद-वचन दोहा

सत्य वचन कह गर्ग गुरु, गया नंद के द्वार।
अर्घ-पाद्य से नन्द ने, कीना अति सत्कार॥६६॥

नंद-वचन किरीट छंद

दीन गृहस्थन के गृह में, द्विज वैष्णव संतन का पद धारण।
मोक्ष महोदय को विस्तारत, सो कर है त्रयताप निवारण।
मोह मदादिक दूर करे, सुभ सम्पत का जग में मुख कारण।
भक्ति विराग प्रबोध बढ़ावत, संसृति सागर से द्रुत तारण॥६७॥

भये भाग्य द्विज आज हमारे। जो मम गृह तुमने पद धारे॥
तुम सबविध पूरण मुनिराई। कहा करूँ तुमरी सिवकाई॥६८॥

यह दो सुत हमरे गृह माहीं। और अलम्बन जग में नाहीं॥
धरहूँ तुमरे पद निज माथा। शिशु को आशिष देवो नाथा॥६९॥

नाम धरो इनके मुनिराया। ज्योतिष आगम में जिम गाया॥
ब्रह्म वंश में जन्मत जोई। चार वर्ण कर गुरु जग सोई॥७०॥

गर्ग-वचन चौपाई

तुम सब लायक गोकुल राई। गुप्त बात सुनिये मन लाई।
यदुकुल गुरु सब मोको जानत। तुमको शौरि मित्र कर मानत॥७१॥
देवकि का सप्तम सुत जोई। स्त्रवने योग्य कदापि न होई॥
पुन अष्टम सुत तांका जोऊ। कन्या होन योग्य नहिं सोऊ॥७२॥
या विध कंस न इनको जाने। देवकि सुत करके नहिं माने॥
गुप्त बैठ कर नाम रखावो। बहुविध बाजे जनि बजवावो॥७३॥

नारद-वचन दोहा

सत्य वचन कह नन्द तब, युग सुत को ले साथ।
गमन करा गोशाल में, साथ लिये मुनि नाथ॥७४॥
स्वस्ती वाचन कर प्रथम, गर्ग गणेश मनाय।
नाम धरा युग शिशुन का, वास्तव अर्थ छिपाय॥७५॥

गर्गवचन-कवित्त

रोहिणी का सुत जोई, निज गुणों कर सोई,
स्वजन रमावने से राम नाम जानिये।
बल की अधिकता से, बल आदि नाम याको,
कान्ति मद मोदता से, बलदेव मानिये।
रोष युत यादवों के, एकी भाव करने से,
सङ्करषण याके, नाम को बखानिये।

रोहिणी को सुत याँते, रौहिणेय नाम ताँते,

हल कर धारणे से, हली नाम जानिये ॥७६॥

गो गण प्रपालने ते, आह्वय गोपाल याको,

श्याम तनु धारणे से कृष्ण नाम ख्यात है।

प्राक कबी कर दया, वसुदेव सुत भया,

वासुदेव नाम यह, यांते कहा जात है।

मुकती के देने कर, नाम है मुकुन्द याको,

लक्ष्मी का पति तांते, माधव कहात है।

जनी गुण क्रिया कर, नाम हैं अनन्त याके,

तिनको न जाने लोक, हमें सब ज्ञात है ॥७७॥

सुंदरी सवैया

मणि मौक्तिक गो गज आदिक जो, तुमरे गृह वैभव दीसत जोई।
ब्रज गोकुल में शुभ आनन्द जो, इनकी करुणा कर जानब सोई।
इनके नित लालन पालन से, तुमरे ढिग संकट आय न कोई।
दुख शोक कलेशन को तरके, पुन अन्त समे तुमरी गति होई ॥७८॥

यह बालक प्राक्रम तेज विषे, गुण कीरति में हरि के सम होई।
तज दम्भ छलादिक दोषन को, इनमें नित प्रीति करे नर जोई।
बलवंत अनन्त अरी यम के, भृत जो तिसको भय देत न कोई।
इन बालन की करुणा जिसमें, सुर मानव में नित पूजित सोई ॥७९॥

नारद-वचन दोहा

या विधि कहकर गर्ग द्विज, गये स्वकीय अगार।
राम-कृष्ण की सुभग छबि, निज मानस में धार॥८०॥

सुत के गुन सुन नन्द के, उर नहिं हर्ष समाय।
नाम रखे जो जो मुनी, सब को दिये सुनाय॥८१॥

अथ कुछ दिन बीते जबी, राम-कृष्ण नर भूप।
घुंटरन से चलने लगे, शुक्ल श्याम वर रूप॥८२॥

पद नूपुर का शब्द सुन, उर में भीती मान।
लौट आय पुन मात पै, करन लगे पय पान॥८३॥

क्षण मुख देखें मात का, क्षण करहैं पय पान।
कर जानू भर चलत पुन, हरि शिशु सम भगवान॥८४॥

खेलत खेलत होत जब, धूली धूसर गात।
मात सनान कराय के, विविध सुगंध लगात॥८५॥

अल्प दशन मुसकान युत, पूरण शशि सम गोल।
चंचल नयन चकोर सम, मधुर तोतरे बोल॥८६॥

ऐसे वदन सरोज को, देख देख युग मात।
कण्ठ लगावें शिशुन को, मोद न हृदय समात॥८७॥

चाकू अनल भुजंग को, जब पकड़त हैं बाल।
करें निवारण मात तब, निशदिन राखें ख्याल॥८८॥

अति चंचल बालक जबी, गृह से बाहिर जात।
गृह कारज तज झटिति तब, ढूँढ़ लिआवत मात॥८९॥

हस्त पकड़ कर शिशुन का, चलन शिखावत मात।
कबि चालें कबि गिर पड़ें, या विध जब थक जात॥९०॥

तुरति गोद ले मात युग, दुग्ध करा कर पान।
गह कर सुत का पाणि पुन, सिखवावें पद जान॥९१॥

खेल करत गो वत्स का, पुछ पकड़त जब बाल।
भाग जात हैं वत्स तब, देख हँसत गोपाल॥९२॥

कृत्रिम हरि को देख के, डर कर दोनों भ्रात।
भाग जाय कर मात को, दृढ़ कर कण्ठ लगात॥९३॥

पुन कुछ दिन बीते जबी, जाकर यमुना तीर।
श्रीदामादिक सखन युत, खेल करें यदुवीर॥९४॥

रमणरेति में जायके, लोटें सब ब्रज बार।
शिखि का रव सुन तास सम, करहैं शब्द उचार॥९५॥

कवि-वचन दोहा

रमणरेति लोट्यो नहीं, कियो न यमुना पान।
रे नर तो जान्यो नहीं, ब्रज कौ तत्त्व महान॥९६॥

को कवि वरणन कर सके, रमणरेति को मूल।
जाके कण-कण में मिली, युगल चरण की धूल॥९७॥
मंगल धाम विचार कर, सन्तन किया निवास।
गुरु चरणन की कृपा से, ब्रजरज पाई दास॥९८॥

नारद-वचन दोहा

ब्रज वनितों के मोद हित, राम कृष्ण सह मीत।
तिनके गृह में जाय के, खेलत खेल सप्रीत॥९९॥
प्रभावती उपनन्द क़ी, पत्नी तांके गेह।
एक दिवस गमने हरी, उर धर परम सनेह॥१००॥
प्रभावती निज भाग्य को, सर्वोत्तम कर जान।
मन विनोद हित तिनों से, कहन लगी मति मान॥१०१॥

प्रभावती-वचन चौपाई

मूढ़ा लाय दीजिये मोको। कृष्ण दियोंगी लडुवा तोको॥
लावो राम खड़ावों मेरी। चुटिया गूँथूँगी मैं तेरी॥१०२॥
जो तुम दोनों नृत्य दिखावो। माखन मिसरी कुखि भर खावो॥
सुन्दर गीत सुनावो मोको। हेम बंसरी द्योंगी तोको॥१०३॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

देवो प्रथम कहा तुम जोई। तुमरा वचन करें सब कोई॥
जो तुमने नहिं पाछे दीया। वृथा जायगो हमरा कीया॥१०४॥

प्रभावती-वचन चौपाई

सत्य कहूँ देवूँगी ताता। मोको तनक न झूठ सुहाता॥
जो मैं कहा न देवूँ जोई। मन भावत करियो तुम सोई॥१०५॥

श्री रामकृष्ण-वचन सारछंद

गोपी सुनिये गीत हमारी॥टेक॥
निज पति में जो प्रेम करे है, पतिव्रतवन्ती नारी।
वृद्ध बधिर जड पंगू पति को, सेवत धर्म विचारी।
पति ही पतनी का गुरु होवत, पति को जान खरारी।
जो युवती निज पति को सेवत, जान हृदय त्रिपुरारी॥१०६॥
मात पिता पति के युत सो, जावत स्वर्ग मझारी।
जो योषित पर पुरुषन के संग, मूरख लावत जारी।
सो पापिनि निज मात पिता युत, जावत यम पुर द्वारी।
निगमागम का सार धर्म यह, राम गुपाल उचारी॥१०७॥

नारद-वचन चौपाई

जैसे तिसने कहा था, तैसे ही तिन कीन।
कृष्ण खिजावन कारणे, तिसने नहिं कछु दीन॥१०८॥

प्रभावती-वचन चौपाई

हाटन से मिशरी मँगवावूँ। दधि मथकर नवनीत खवाऊँ॥
वंशी बनवावूँ अब जाई। कल लेना बल जावे माई॥१०९॥

नारद-वचन दोहा

प्रभावती के वचन सुन, हृदय धारकर कोप।
गमने निज निज गेह में, राम कृष्ण सब गोप॥११०॥

नवाह्न पारायण प्रथम विश्राम॥१॥

प्रभावती इक दिवस में, सोय रही निज द्वार।
गये तास के गेह में, कृष्णादिक ब्रज बार॥१११॥
दूध दधी नवनीत को, गृह में दिया फिलाय।
कुछ खाया कुछ कपिन को, पटका हृदय रिसाय॥११२॥
तांके सुत को पीटके, बछरे दीने खोल।
भाग गये जब सुन लिया, प्रभावती का बोल॥११३॥
तात काल उठ गोपिका, गृह की दशा निहार।
प्रणय कोपकर कृष्ण पर, गयी नन्द के द्वार॥११४॥
उर उत्कंठा कृष्ण के, मुख देखन की तात।
उपालम्भ का मिष करा, उर निज भाग्य सरात॥११५॥
जिनके नयनन ने लखे, राम कृष्ण युग भ्रात।
तिनको तृणसम लगत हैं, सुत वित पति पितु मात॥११६॥

प्रभावती-वचन कवित्त

सुनो यशमति रानी, निज सुत की कहानी,
दूध दधी माखन की चोरी से न डरे है।

पातरों को फोड़ डारे, ऊंचे छिक्य से उतारे,
जो न पौंचे हाथ तापै, मूड़ा नीचे धरे है।
कंठ मणी तेज कर, देख लेत सब घर,
करे जो पुकार जोई, ताँसो पुन लरे है।
कुछ आप बाल जेवें, कुछ वानरों को देवें,
कुछ भूमि में फिलावें, उतपात करे है॥११७॥

पादों का प्रहार कर, भूमि मांहि डार कर,
मंच सोये बालन को, रुदन करावे है।
लीपे पोते चौके झरे, मूतर पुरीष करे,
बछरों को खोलकर, धेनु को चुखावे है।
होके व्रजराज बार, सुन्दर शरीर धार,
ऐसे बुरे करमों से, नैक न लजावे है।
द्वार जाय ढीठ होवे, टेढ़ी आँखन सों जोवे,
तुमरे समीप बैठा, साधु दरसावे है॥११८॥

यशोदा-वचन चौपाई

शिशु नुकसान करा तव जोई। लेवो दुगुना हमसे सोई॥
ईश दिया सब कुछ घर मांहीं। कोउ चीज का टोटा नाहीं॥११९॥

गृह में यत्न करूं नहिं खावे। चोरी को कह कैसे जावे॥
चोरी करत लांयगी जबही। याको दण्ड दियोंगी तबही॥१२०॥

नारद-वचन दोहा

यशमति के सुन वचन तब, गयी प्रभावति तात।
नित प्रति मग देखत रहे, कब आवें युग भ्रात॥१२१॥

पुन बालन को साथ ले, माधव परम प्रवीन।
गये तास के गेह में, पूरववत सब कीन॥१२२॥

प्रभावती का बोल सुन, भाग गये सब बाल।
भागत भागत तास ने, पकड़ लिये गोपाल॥१२३॥

गह कर करसे कृष्ण को, चली यशोमति द्वार।
मग में चलते वदन पै, अंचल लीना डार॥१२४॥

जननी का डर मान कर, योगीश्वर जगदीश।
तांके सुत का रूप तब, धार लिया अवनीश॥१२५॥

प्रभावती-वचन चौपाई

ले निज सुत को यशमति रानी। अब लग तुम साची नहिं जानी॥
यह चोरी कर है नित जाई। दूध दधी घृत देत बहाई॥१२६॥

आज हाथ आया यह मेरे। अब विश्वास आयगो तेरे॥
चोरी करते पकड़ लिआई। सत्य कहूँ जाने रघुराई॥१२७॥

यशोदा-वचन चौपाई

यह मम सुत वा तव सुत बौरी। वृथा लाय मम सुत को चौरी॥
नैक नयन से वसन उतारो। तो पुन ऐसा वचन उचारो॥१२८॥

निज सुत कृत मम तनय लगावो। मम ब्रज तज देशान्तर जावो॥
अन्याये गोकुल में जैसा। देखा सुना न अब तक ऐसा॥१२९॥

नारद-वचन दोहा

यशमति के सुन वचन तब, देखा नयन उघार।
निज सुत को लख हस्त में, दीनी सुत को गार॥१३०॥
नन्द यशोदा रोहिणी, गोप गोपिका राम।
वा वा कर हँसने लगे, ले ले तांका नाम॥१३१॥
प्रभावती सुत साथ ले, अति लज्जित हो भूप।
गयी आपने धाम में, बोले श्याम सरूप॥१३२॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

सुन गोपी तू परम सुजाना। निपट बाल कर मोको माना॥
पकड़ेगी पुन हमको तू जब। रूप धरूँगा तव पति का तब॥१३३॥

नारद-वचन दोहा॥

वचनामृत सुन कृष्ण के, मुसका कर ब्रज दार।
हरि के वदन सरोज को, इक टक रही निहार॥१३४॥

प्रभावती-वचन चौपाई

गो गोरस धन धाम समेता। मम तनु तनुजादिक है जेता॥
बल जावूँ यह सबी तुमारे। क्षमा करो अपराध हमारे॥१३५॥

मैं नित तव दर्शन की प्यासी। तब विनोद हित कीनी हासी॥
बिन तुमरे नहिं और सुहाता। नित प्रति मम गृह आवो ताता॥१३६॥

नारद-वचन दोहा

यावधि कह कर रुदन कर, हरि को कंठ लगाय।
गिर गद्गद् रोमांच तनु, तनु की सुध बिसराय॥१३७॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

तव सम मम प्रेमी जन जोई। निश दिन मम उर बस है सोई॥
धरो धीर मन में महतारी। तुमरे हित मैं नर-तनु धारी॥१३८॥
मोमें जैसे प्रेम तुमारा। तैसे ही तुम मांहि हमारा॥
मम प्रिय उर में चितवत जोई। सत्य कहूँ ऋत करहूँ सोई॥१३९॥

सार छन्द

प्यारी मैं निज हाल सुनावूं॥ टेक॥
जप तप युत योगीश विरागी, इनके कर नहिं आवूं।
भुक्ति मुक्ति कुछ सम्पद देकर, तिन से वसन छुडावूं।
जो इनको नहिं स्वीकृत कर है, ताके हाथ बिकावूं।
प्रेमा भक्ती जो जन कर है, तिसकी टहल कमावूं॥१४०॥

प्रेमी का ऋणियां हूँ निश दिन, तिसे नाहिं बिसरावूं।
निज आतम मैं मानूं वाको, ताके पीछे धावूं।
जो मम प्रेमी बिछड़ जाय तो, वाका ध्यान लगावूं।
मम प्रेमी जो जो मुख भाखे, सो सो कर दिखलावूं॥१४१॥

जो मम प्यारा मान करे तो, गहकर चरण मनावूं।
योग क्षेम मैं तिसका कर हूँ, अपने धाम पुचावूं।
जो मम प्रिय नहिं भोजन कर है, निज कर ताहि जिमावूं।
जननी जनक बन्धु नहिं ता सम, वासे बल बल जावूं॥१४२॥

नारद-वचन दोहा

या विध ताको धीर दे, गये कृष्ण निज धााम।
प्रेम विकल भयि गोपिका, जपन लगी हरि नाम॥१४३॥

तनु गृह में मन कृष्ण में, कौन करे गृह काज।
जिनके उर हरि लगन है, ते तज हैं जग लाज॥१४४॥

रेखता छन्द

जिनने निहारी श्याम की, मुख मन्द मृदु मुस्कान। टेक।
तिन लोक लज्ञा त्याग के, तज दीन कुल की कान।
प्रिय श्यामसुन्दर दर्श से, बिन प्रिय न भोजन पान।
श्रीकृष्ण के मुखकंज में, षट्चरण तिनको जान॥१४५॥

गुरु शिष्य जननी जनक धन तनु, का न तिनको ज्ञान।
केशव की मुकुट लटक छवि से, वार हैं निज प्रान।
श्रीनन्दनन्दन वदन विधु अमि, करत दृग से पान।
गोपाल तिनको प्राण के सम, जान हैं भगवान॥१४६॥

नारद-वचन दोहा

प्रभावती सम ब्रज विषे, अखिल गोपिका जान।
कृष्ण विरह कर विकल मन, जोउ तजत निज प्रान॥१४७॥

अथोपाम्भलीला शार्दूलविक्रीडितवृत्तम्

घोषे काचन गोपिका रतिवती, नाम्ना च चन्द्रानना
कृष्णेऽभूत् पृथुकात्मके कलरवे, पुत्रत्वसम्भाविते।
नित्यं दर्शनलालसापि न ययौ, नन्दालयं लज्जिता
भूत्वा तद्भवनं गतोऽथ वनिता, विज्ञाय हार्दं हरिः॥१४८॥

अनुष्टुप् श्लोकः

चन्द्राननाथ तां दृष्ट्वा, हर्षितहृदया सती।
आदरेणासनं दत्त्वा, तस्मै पप्रच्छ कामिनी॥१४९॥

चन्द्राननावचनमुपचित्रवृत्तम्

कासि कुतोऽत्रायाता श्यामे, दृष्ट्वा वदनमहो तव वामे।
माधवविरहशिखी लघुशान्तः, यदा समभवा मे त्वं प्रान्तः॥१५०॥

आह्वा का तव वद विधुवदने, निवस गृहे मम शोभा-सदने॥
हर्षितहृदयं तव किं भाति, किं ते भवने हरिरुपयाति॥१५१॥

श्यामावचनमुपचित्रवृत्तम्

सदनं मे सखि वृन्दाविपिने, श्यामा नाम निशाकरलपने।
अस्मत्प्राङ्गणमनिशं याति, नन्दयशोदा-सुत उत्पाती॥१५२॥

कुरुत उपद्रवमनु वनमाली, कुपितां दृष्ट्वा रोदित्यालि!
तदुपालम्भं दातुं यामि, माधवमात्रे त्वां प्रवदामि॥१५३॥
गच्छ मया सह युवति ललामे, ह्येकाहं प्रबिभेमि श्यामे!
प्रतिभाषणमिह चेन्न वदामः, दास्यति दुःखं विविधं श्यामः॥१५४॥

चन्द्राननावचनमुपचित्रवृत्तम्

धन्यासि त्वं वीणावाणि, मधुसूदन-हरिपङ्कजपाणिः।
यस्माद्गच्छति भवती सदनं, पश्यसि केशवसरसिजवदनम्॥१५५॥
पश्यति शौरेर्दूक्पन्थानं, ध्यायति चेतः खगपतियानम्।
तदपि न दर्शनमद्य ददाति, चातकमिव घनबिन्दुः स्वातिः॥१५६॥
मिथ्यावादो यद्यपि पापः, वदति पुराणं वेदकलापः।
हरिणा कृता न किञ्चिद्धानिरनृतजल्पने भवति ग्लानिः॥१५७॥
पश्यति कृष्णं नीरजनयनं, येन तमाहुर्धर्मसमयनम्।
भवती प्रोक्तं कुर्वेऽनुचितं, चल सखि शीघ्रं मम हितयुक्तम्॥१५८॥

कविवचनमनुष्टुप्श्लोकः

आहूय गोपिकाः श्यामा, गोविन्द-दर्शनोत्सुकाः।
गन्तुं नन्दालयं ताभिः, प्रोवाच नृगिरा तदा॥१५९॥

श्यामावचन सार छंद

आली चलिये यशमति द्वारी॥ टेक॥
वाके सुत मैं बहुत दुखाई, आई शरण तुमारी।

सास ससुर ने अपने घर से, मैं कर दीनी न्यारी।
और न नारी धाम हमारे, कौन करे रखवारी।
मैं जब गृह की कृत में लागत, सूने भवन मझारी॥१६०॥

नन्द तनय उत्पात करे है, फोड़त बासन प्यारी।
देन उराह्नें मैं अब जावूँ, तुम होवो सहकारी।
तुम सबका नुकसान करेगो, जोउ उपेक्षा धारी।
जानूँगी उपकार तुमारा, गमनो द्रुत ब्रजनारी॥१६१॥

कविवचनमनुष्टप्-श्लोकः

गोपाल-दर्शनार्थाय, ह्युत्सुका व्रजदारिकाः।
उपालम्भमिषेणैव, ययुस्ता नन्दमन्दिरम्॥१६२॥

श्यामावचनं सारवृत्तम्

माधवमातस्तव तनु-जातस्, सोऽसभ्यं च करोति।
मम गृहे याति हरिरुत्पाती, गलगतरत्नज्योतिः।
पीठे स्थित्वा लगुडं धृत्वा, भाण्डं तत्र भिनत्ति।
शून्ये सदने शशधरवदने, कृष्णो गोरसमत्ति॥१६३॥

कपिपुत्रेभ्यो निजमित्रेभ्यो, नवनीतं प्रददाति।
वत्सान् मुञ्चन् केशाँल्लुञ्चन्, बालानामपयाति।
सदनं प्रशपति गालिं जल्पति, गव्यालाभे श्यामः।
वयमपयामस्त्विह न वसामस् तिष्ठतु भवती-ग्रामः॥१६४॥

यशोदा-वचनमुपचित्रा वृत्तम्

कथमिह जल्पसि भामिनि मिथ्या, कापि न दृष्टा घोषे तथ्या।
भवनं त्यक्त्वा कापि न याति, वदसि किमित्थं हरिरुत्पाती॥१६५॥

रोदिति दृष्ट्वा कीशं श्यामः, क्रीडति सदने साग्रजरामः।
अत्ति गृहे नहि किञ्चिद्दुग्धं, निन्दसि मिथ्या बालं मुग्धम्॥१६६॥

क्रन्दति दृष्ट्वा स्वतनूछायां, स कथं तनुते विविधां मायाम्।
गच्छतु तिष्ठतु कापि ग्रामे, किं वयमत्र वदामो वामे॥१६७॥

चन्द्रानना-वचन राधिका छंद

सुन निजसुत की करतूत, श्याम महतारी।
हम जावत यमुना तीर, भरन जब वारी।
तब आय अचानक झटिति, कृष्ण गिरिधारी।
मग रोकत खैंचत चीर, चुंदरिया फारी॥१६८॥

घट फोड़ पुकारत चोर, हसत दे तारी।
इस लाज उतारी मोर, भिगोई सारी।
तू झूंठि हमें बतात, आप सचयारी।
जो साँच न आवे तोहि, पूछ ब्रज नारी॥१६९॥

यशोदा-वचन दिक्पालछंद

क्यों झूठ बात बोलो, तुम सकल घोष नारी।
रोटी न तुटत यासे, किम चीर तोर फारी।

नहिं फोड़ सकत मोदक, किम कलश फुटत दारी।
तुम आय आय नित प्रति, मम भवन सब उखारी॥१७०॥
नहिं काम और तुमरा, इम कटत दिवस थारी।
बिन काम फिरत व्रज में, तुम लाज सकल डारी।
अब जाव जाव निज गृह, नहिं तो सुनाऊँ गारी।
सुन सुन तुमारि बातें, आश्चर्य लगत भारी॥१७१॥

श्यामावचन सारछंद

यशुमति बात सुनो अब मोरी॥टेक॥
निज सुत को सिखला कर भामिनि, तुम करवावत चोरी।
सुत के चरित सकल तू जानत, बन बैठी अब भोरी।
तुमरे ढिग यह निर्बल दीसत, पंथ मचावत होरी।
मग जाते को छेड़त माधव, कर है जोरा जोरी॥१७२॥
जो तुम ऐसी करन विचारी, कौन बसे ब्रज तोरी।
जाय बसेंगी और नगर में, हम सब गोप किसोरी।
एक दिवस की बात नहीं जो, सहन करें ब्रजगोरी।
अपने सुत को नहिं समुझावो, करहो हमसे खोरी॥१७३॥

यशोदावचनं सारवृत्तम्

अस्मत्तनुजो हलिनस्त्वनुजो, यद्यपि दोषविहीनः।
शुभगुणजलधिर्दीप्तेरवधिर्निजपदभक्ताधीनः ॥
तदपि ददामि श्रेष्ठां शिक्षां, गोपालं प्रति वामे।
याचे भिक्षां, त्वत्सुतरक्षां, भव तुष्टा त्वं श्यामे॥१७४॥

कैरपि भाग्यैर्भवदनुरागैर्जातममुं जानामि ।
कोटिगुणितं युष्मद्‌भणितं, द्रव्यं वः प्रददामि॥
पुत्रं लालय सखि परिपालय, कृष्णं प्रेमागारे।
कुरु मम तनुजे त्वतिगुणमनुजे, माऽसूयां चोदारे॥१७५॥

कविवचनमनुष्टुप्श्लोकः

इत्थं श्रुत्वा सखी श्यामा, ह्यन्तर्धानाभवत्तदा ।
बालरूपमथो कृत्वा, जननी सन्निधिं ययौ॥१७६॥

कृष्णमङ्के समारोप्य, यशोदा प्रेमविह्वला।
तस्मै शिक्षां ददौ देवी, गोपीभिरभिनोदिता॥१७७॥

यशोदा-वचन सारछन्द

लाला पुन नहिं परगृह जाना॥टेक॥
दधि माखन मिशरी सब घर में, जो चाहो सो खाना।
चोरी की यह टेव न चहिये, क्यों कुल दाग लगाना।
जो तव तात सुनेगा तोको, पीटेगा रिससाना।
मैया मैया भले पुकारो, मैंने नाहिं छुड़ाना॥१७८॥

दुख पाकर नित तुमसे मोको, गोपी देत उराना।
सुनकर दुरकरतूत तुमारी, मम मन बहुत लजाना।
होकर ब्रज भूपति का सुत पुन, चोरी कर्म कमाना।
सुत गोपाल सुनो मम शिक्षा, चोर न लोक कहाना॥१७९॥

श्रीकृष्ण-वचन सार छन्द

मैया गोपी मोहि खिझावें॥ टेक॥
जो मैं जात न तिनके घर में, गह कर गृह ले जावें।
कोई भाखत गीत सुनावो, कोई नाच नचावें।
घर का काम करावें हमसे, हठकर माखन ख्वावें।
जो मैं रिस कर भाग जात हूँ, हँसकर कंठ लगावें॥१८०॥
बाहिर जान न देवें मम मुख, चूमत गोदि बिठावें।
निज घर का यह ख्याल न राखत, मोसे हँस बतरावें।
तब तिनके मन्दिर के भीतर, हरि सेना धस जावें।
गोरस खावत यह पुनि मोको, झूँठा दोष लगावें॥१८१॥

कवि-वचन दोहा

माता सुन सीदे सरस, मीठे माधव बैन।
क्रोध त्याग सुत कंठ लग, जल भर लाई नैन॥१८२॥

अनुष्टुप् श्लोकः

राधिका योगिनीरूपं, धृत्वा तत्र तदा सती।
आप्राप्य प्रेमभिन्नान्तःकरणोवाच सुव्रता ॥१८३॥

योगिनीवचन सार छन्द

अब मैं नहिं मानूँ तव बाता॥ टेक॥
सुत सरलाई जो तुम गाई, तुम नहिं जानति माता।

इसकी करणी मोसे सुनिये, नारद का यह ताता।
बहुत भवन बरबाद करे इस, उत्पाती यह ख्याता।
सो जानत इसकी चतुराई, जाको यह दिखलाता॥१८४॥

हमरे गृह में नित प्रति जावत, छीन-छीन दधि खाता।
घर घर चोरी कर यह खावे, अबलों नाहिं अघाता।
बैठ इकाँत ठौर यह गुरु बन, मोको ज्ञान सुनाता।
गृह आश्रम में मुक्ति न होवत, विविध वेदना दाता॥१८५॥

मन्दिर त्याग विपिन चल बसिये, ईश भजो जनत्राता।
मानुष जनम वृथा मत खोवो, पुन पुन यह नहिं पाता।
याविध मोको श्याम सिखाकर, त्याग कराये भ्राता।
बन्धु जनक जननी सब बिछड़े, तूट गये सब नाता॥१८६॥

अब नहिं सार लेत यह हमरी, मोसे भीख मँगाता।
बसते गृह प्रिय लगत न इसको, करत फिरत उत्पाता।
मन्द सुगंधित शीतसमीरे, यमुना तीरे प्राता।
पर्णकुटीरे कूजित कीरे, मम आश्रम यह जाता॥१८७॥

एक ठौर में बास करे नहिं, योगी आगम गाता।
देश देश में सैल करो तुम, याविध यह बहकाता।
उत्पाती को सुख से बैठा, मानव नाहिं सुहाता।
पर्णकुटी में जो कुछ पावत, सो सब कृष्ण लुटाता॥१८८॥

क्या करिये हम जाँय कहाँ अब, तव सुत अति दुख दाता।
मम मन मोती यह हर लाया, तब से कर नहिं आता।
तुमरी गोदि छिपा अब आकर, नहिं निज वदन दिखाता।
ऐसा नटखट सुत तुम जाया, इससे रखत विधाता॥१८९॥
गृह से बाहिर आवेगा जब, याद करेगा माता।
बदला अपना सब अब ल्योंगी, मम मन बहुत रिसाता।
चलिये आली अपने गृह को, यहाँ न कछू बसाता।
मम दो बातें अब होंगी, केशव क्यों घबराता॥१९०॥

कविवचनम् अनुष्टुप् श्लोक:

प्रेमकोपसमायुक्ता, वनिता विगतास्तदा ।
चिन्ता-समन्विता गोपी, यशोदोवाच माधवम्॥१९१॥

यशोदावचन सार छन्द

लाला गोपी बहुत रिसाई॥टेक॥
अब नहिं बाहिर तुमने जाना, पीटेंगी दुख पाई।
कौन प्रकार मनावूं इनको, ब्रज तज वनिता जाई।
घर-घर निंदेंगी यह तुमको, होगी तव न सगाई।
जग में हाँसी होगी हमरी, हमरा धर्म पलाई॥१९२॥

श्रीकृष्णवचन सार छन्द

मैया सुन तू हमरी बाता॥टेक॥
तुमसे नहि मानेंगी गोपी, सोच करें मत माता।
मो में प्रेम करत सम जननी, और न इनहि सुहाता।

अब जा उनको फेर लिआवो, पड़कर पद जलजाता।
भव सुख त्यागी अनुरागी का, मोहि मनावन आता॥१९३॥

कवि-वचन दोहा

गह कर तिनके चरण को, ले आई निज धाम।
हस्त जोड़कर विनय से, बोले तब घनश्याम॥१९४॥

श्रीकृष्णवचन दिक्पालछंद

ब्रज त्याग तुम न जावो, सुन गोप की कुमारी।
तुमरे बिना न मोको, ब्रज लगत पलक प्यारी।
निज जन प्रमोद कारण, मैं मनुज देह धारी।
मम मन अधीर होवत, नित निरख रति तुमारी॥१९५॥

मैं मात तात बन्धू, ब्रज गोपिका विचारी।
किस हेत तुम रिसा के, अब करत मोहिं न्यारी।
जो अस तुमारि मरजी, क्यों प्रीति जाल डारी।
युग चरण कमल तुमरे, यह सीस है हमारी॥१९६॥

कवि-वचन दोहा

निज जन वत्सल श्याम के, सुनकर वचन विशाल।
गोपी जनने कृष्ण को, गोदि लिया तत्काल॥१९७॥

भक्त विवशता श्याम की, देख देख व्रज दार।
रोमांचित गद्गद गिरा, बोलीं प्रेमागार॥१९८॥

गोपीवचन ककुभ्छंद

हे गोविन्द भक्त प्रियमाधव, करुणा सिन्धु मुरारी जी।
तुमरी महिमा को कवि भाखे, निगम न पावे पारी जी।
तनुज तनूरति दूषण दूषित, मूढमती व्रजनारी जी।
निज पद-पद्म प्रीति दे तुमने, हम कीनी अधिकारी जी॥१९९॥

जन्म जन्म में तव पद प्रीती, माँगें गोद पसारी जी।
हम तव दर्श पिपासी तड़फत, जिम मछीरी बिन वारी जी।
तात उरान्हे मिस कर हमने, तव मुखकांति निहारी जी।
जरो जीव यह हमरी माधव, जो हम दीनी गारी जी॥२००॥

विरह विकल हो प्रणय कोप से, वचन कठोर पुकारी जी।
आरत कौन कुकर्म न कर है, लोभी अघ न विचारी जी।
अनृत उपालंभ हमने दीने, क्या गति होय हमारी जी।
क्षमा करो अपराध हमारे, अपनी ओर निहारी जी॥२०१॥

कवि-वचनम् अनुष्टुप्श्लोकः

अङ्कस्थं केशवं गोप्यो, लालयित्वा पुनः पुनः।
रोमाञ्चिताश्च सिद्धार्थाः, प्रययुः सदनं स्वकम्॥२०२॥

कृतकृत्यो निरीहोऽपि, करोति विविधाः क्रियाः।
कृष्णः स्वानां प्रमोदार्थं, भक्तच्छन्दानुकृद्यतः॥२०३॥

सारवृत्तम्

मधुरालापं वृत्तकलापं, हरिजनगण-गल-हारम्।
भावागाधं निर्गतबाधं, ह्यकरोदीशविहारम्॥
सदुपालम्भं वचनकदम्बं, रत्नं सुषमाधारम्।
दशविधदिक्षु व्रजरतिभिक्षुः, कवि-गोपालउदारम्॥२०४॥

जो कोई इस ताल को, करे प्रेम से गान।
तांको दर्शन देनगे, गृह जाकर भगवान॥२०५॥

मास-पारायण चतुर्थ विश्राम॥ ४॥
पाक्षिक पारायण द्वितीय विश्राम॥ २॥

इति श्रीमत्परमहंसोदासीनशिरोवतंसश्रीस्वामिकार्ष्णिज्ञानदासशिष्येण श्रीस्वामिना कार्ष्णिगोपालदासाह्वेन विनिर्मिते गोपालविलासे पूर्वविश्रामे बालचरित्र-वर्णनं नाम तृतीयस्तालः समाप्तः॥३॥

❀ ❀ ❀

ॐ

श्रीवृन्दावनविहारिणे नमः।

अथ चतुर्थस्तालः-४

श्लोकः

विश्वं येन सुदर्शितं निजमुखे मात्रे च मृद्भक्षिता
दाम्नोलूखलके बबन्ध जननी चोत्पाटितौ येन यम्।
कौबेर्यौ यमलार्जुनौ चरणपावाम्रांश्च यः क्रीतवान्
भ्रात्राभीरयुतश्चकार निघसं कृष्णाय तस्मै नमः॥१॥

नारद-वचन दोहा

एक समय श्रीकृष्णजी, करके बाल विलास।
रज खाई लख राम ने, कहा यशोदा पास॥२॥

श्री बलदेव-वचन चौपाई

सुनो वचन मम यशमति माई। आज कृष्ण ने माटी खाई॥
हम बहु वध याको समझावत। हम सबसे यह छिपकर खावत॥३॥

नारद-वचन दोहा

रौहिणेय के वचन सुन, बोली यशमति मात।
निज भयभीत तनूजका, गहकर कर-जलजात॥४॥

यशोदा-वचन चौपाई

कह कैसे तुम माटी खाई। निडर भया तू मात भुलाई॥
भाखत यह सब सखा तुमारे। पुन तव अग्रज राम उचारे॥५॥

श्रीकृष्ण-वचन सार छंद

मैया नेक न माटी खाई॥ टेक॥
यह सब बालक झूठ पुकारत, मिथ्या दोष लगाई।
मैं नवनीत दधी सों पूरण, रज की कहां समाई।
मैं तो खेलूं एका एकी, इन भ्रम देत दिखाई।
समुझ सोच देखो तुम मन में, बालक तूं बैकाई।
अपने सम यह मोको जानत, मति इनकी बौराई।
नहि निश्चय तो मम मुख देखो, क्या रज देत दिखाई॥६॥

नारद-वचन चौपाई

या विध कह कर कृष्ण ने, निज मुख दिया पसार।
यशमति हरि के वदन में, देखा सब संसार॥७॥

रवि शशि गिरि सागर नदी, निज समेत व्रजराज।
लोक चतुर्दश अनिल नभ, स्थिर चर जीव समाज॥८॥

या विध हरि के वदन में, लखकर सब संसार।
शंकित मन हो गोपिका, कर है विविध विचार॥९॥

यशोदा-वचन चौपाई

क्या यह मोको स्वपना आया। अथवा ईश्वर की यह माया॥
अथवा मम मति बौरी होई। मम सुत की शक्ती या कोई॥१०॥

सुन्दरी सवैया

मन इन्द्रिय वाक अगोचर जो, अवितर्क्य गती सब विश्व अधारा।
जिसकी प्रकृती कर मोहित मैं, यह लोक. चराचर प्राकृत सारा।
तनु पुत्र पती धन धाम विषे, अपना लख के दृढ़ मोह पसारा।
अब सो जगदीश गती मम है, तिसके पद पद्म प्रणाम हमारा॥११॥

नारद-वचन दोहा

देख बोध युत मात को, माया पति जगदीश।
निज माया डारत भये, हँस करके अवनीश॥१२॥
नष्ट बोध यशमति भयी, पूरववत सुत जान।
प्रेम पयोनिधि मग्न हो, गोद लिये भगवान॥१३॥
जो कोई इस चरित को, करे प्रेम से गान।
विश्व रूप दर्शन तिसें, देवेंगे भगवान्॥१४॥

साप्ताहिक पारायण प्रथम विश्राम॥१॥

एक दिवस दासी निकर, लगी और कुछ काम।
स्वयं दुग्ध मथने लगी, नन्दराज की वाम॥१५॥

सुत सनेह कर कुचों से, दुग्ध स्त्रवत भा तास।
पय पीवन हित कृष्णजी, गये यशोदा पास॥१६॥

मथन न देवें दुग्ध को, पकड़ लिया मंथान।
तब यशमति सुत गोद ले, दुग्ध कराया पान॥१७॥

क्षण-क्षण देखत तनुज का, वदन श्याम जलजात।
सुत गुण गावत मथत पय, हर्ष न हृदय समात॥१८॥

यशोदा-वचन सार छंद

लाला पीवो पय रुचि धारी॥टेक॥
तुमरे मुख पंकज की छवि से, मैं जावूँ बलहारी।
शिशु गौ द्विज की वैरिणि पापिनि, तात बकी तुम मारी।
घोर निशाचर ले गमना पुन, तुमको व्योम मझारी।
तांको मार करे सब सुखिया, बंधु जनक महतारी॥१९॥

मृतका भक्षण करके माधव, तुमने वदन उघारी।
तव मुख में मैंने तब देखी, विधि की सृष्टी सारी।
विस्मय युत मम ऊपर तुमने, पुन निज माया डारी।
जिम मरजी होवे तिम करिये, सब विध मैं हूँ थारी॥२०॥

नारद-वचन दोहा

चूले पर पय तप रहा, तिसका देख उफान।
गयी उतारण दुग्ध को, कोपित भा भगवान॥२१॥

दधि वासन को फोड़ के, पुन गृह अन्तर जाय।
कुछ माखन खाया कछू, गृह में दिया फिलाय॥२२॥

सुत के कृत को देख के, लेकर यष्टी हाथ।
चली यशोदा पकड़ने, भाग गये ब्रजनाथ॥२३॥

जांको योगी यत्न कर, ध्यान करत रहिजात।
तांहि अतीन्द्रिय कृष्ण को, ग्रहण करे किम मात॥२४॥

जब हरि जाना थक पड़ी, जननी अति अकुलान।
कर में आये तास के, जन-वत्सल भगवान्॥२५॥

रुदन करत भयभीत निज, सुत को लखकर मात।
तज कर यष्टी हस्त से, लगी पूछने बात॥२६॥

यशोदा-वचन सारछंद

लाला कैसे दूध बिगारी॥टेक॥
क्या मैं तोको खान न देती, क्यों तुम भवन उजारी।
साची भाखत हैं ब्रज गोपी, दुर करतूत तुमारी।
लाल निरंकुश तूं निजतंतर, नयनन लाज उतारी।
सब बालक पुन बंधुजनों से, तुमरी कृत अति न्यारी॥२७॥

मैं नवनीत तुमारे कारण, राखा छीक मझारी।
सो सब तुमने भूमि मिलाया, गति नहि जानूं थारी।

देखन को तुम अल्प दिखावो, उत्पाती अति भारी।
श्री गोपाल कहूँ मैं तोको, मत हो स्वजन दुखारी॥२८॥

श्रीकृष्ण-वचन सारछन्द

मैया मैं हूँ पर उपकारी॥टेक॥
यह गोरस सब श्याम सर्प ने, मुख से कीन जुठारी।
जो खावत या गोरस को सो, जावत यमपुर द्वारी।
याके देखत जहिर चढ़े हैं, मति तक नयन उघारी।
देखन को यह सुधा दिखावत, कपटि मित्र कृत कारी॥२९॥

नहि विश्वास दिखावूँ तोको, कोटिन चैंटी मारी।
याको झटिती धरणि दबावो, देगा दुख यह भारी।
शपथ तुमारी झूठ न बोलूँ, साक्षी हैं हलधारी।
कह गोपाल सुनो मम माता, मैं तुमरा हितकारी॥३०॥

नारद-वचन दोहा

चतुराई के वचन सुन, सुत के यशमति मात।
कुप्त होय बाँधन लगी, डोर न्यून हो जात॥३१॥

और और पुन लायके, गाँठी डोर अनेक।
दो अंगुलि सब न्यून रहि, पूरण होत न एक॥३२॥

देशकाल परिछेद से, रहित विभू भगवान।
सो आवें किम बंध में, मुक्त त्रिकाल अमान॥३३॥

जब हरि जाना हृदय में, दुखित भयी अति मात।
बंधन में आये प्रभू, निज इच्छा कर तात॥३४॥

ऊखल में सुत बांधके, आप लगी गृह काम।
देख दुखित भा राम पुन, गोकुलपुर की वाम॥३५॥

गोपी-वचन चौपाई

री यशमति तू कस महतारी। सुत सनेह नहि हृदय मझारी॥
अति कठोर तव उर दरसावे। सुत को बाँधत दया न आवे॥३६॥

ऐसा सुत नहि लायक थारे। दुग्ध हेत तू इसको मारे॥
हमरे गृह नित दूध बिगाड़त। हम तो इसको नैक न ताड़त॥३७॥

श्रीबलदेव-वचन कवित्त

याको छोड़ बाँध मोको, राम की दुहाई तोको,
सहा नही जात मोसे, दुःख लघुभ्रात का।
तन धन धाम जावो, कृष्ण मत दुःख पावो,
याके हेत त्याग करूँ, मात गुरु तात का।
मैंने भली भाँत जोई, याकी तू न मात कोई,
होत न कठोर ऐसा, हीया सगी मात का।
ऐसी जग मात कौन, ऐसे सुत बाँधे जौन,
क्या तू आज भई बौरी, लगा रोग वात का॥३८॥

यशोदा-वचन चौपाई

खड़ा रहो अब बाँधूँ तोको। सदा खिझावो दोनों मोको॥
जो तुम सुत इतना दुंख पावो। क्यों नहिं भ्राता को समुझावो॥३९॥

नारद-वचन दोहा

जननी के सुन वचन तब, राम सहित यदुवीर।
ऊखल खैंचत ले चले, गये नदी के तीर॥४०॥

यमलार्जुन दो वृक्ष थे, मग में परम विशाल।
निकसे तिनके बीच से, ऊखल युत गोपाल॥४१॥

ऊखल के संसर्ग से, गिरे विटपि जब भूप।
तिन वृक्षन से पुरुष दो, निकसे अद्भुत रूप॥४२॥

दामोदर भगवान को, परमब्रह्म कर जान।
कर प्रणाम कर जोर के, लगे कृष्ण गुण गान॥४३॥

नलकूबर-मणिग्रीव-वचन सवैया

तुम आदि नरायण ईश्वर हो, सब विश्व चराचर रूप तुमारा।
प्रकृती मन इन्द्रिय प्राणन का, तनुका तुम हो नित प्रेरण वारा।
मति की वृति आदि अनातम को, तुम ही परमातम जानन हारा।
नहि ज्ञेय बखानत है तुमको, श्रुति कृष्ण प्रभो तव रूप अपारा॥४४॥

अपनी प्रकृती कर छादित हो, घन मंडल से जिमि सूर तमारी।
जन तारण दुष्ट निवारण को, तुम धारत हो अवतार मुरारी।

तनु धार अलौकिक काम करो, तव देह अलौकिक वेद उचारी।
यदुनंदन माधव गोपपते, तुमरे पद-कंज प्रणाम हमारी॥४५॥

गुणगान करे रसना हमरी, पुन कान सुनें यश प्राक्रम थारा।
कर सेव करें तुमरे पद की, तव ध्यान करे नित चित्त हमारा।
युग नेत्र तकें तिन संतन को, जग जो पुरुषोत्तम रूप तुमारा।
पुन सीस निवें तुमरे पद में, जिसको हर ने उर में नित धारा॥४६॥

धन्य धन्य अति भाग्य हमारे। हमरे सम को जगत मझारे॥
यह सब नारद मुनि की दाया। जो यह तव दर्शन हम पाया॥४७॥

धनद-तनुज हम नाम हमारा। नलकूबर मणिग्रीव उचारा॥
एक समय हम दोनों भाई। मदिरा-पान कीन यदुराई॥४८॥

युवतिन सहित नदी जल अन्तर। क्रीड़ा करत रहे निज तंतर॥
तब नारद ऋषि तहाँ पधारे। नारिन ने अंबर तनु डारे॥४९॥

हम मदमत्त मूढ़ अभिमानी। नारद से नहिं लज्झा ठानी॥
नग्न देख कर देह हमारा। देवऋषी तब शाप उचारा॥५०॥

तुम मूरख जड़ मति हो जोऊ। जावो जड़ तनु पावो दोऊ॥
शाप श्रवण कर हम भय माना। मुनि के पद युग वंदन ठाना॥५१॥

तब मुनि करुणा कर यदुराई। स्वीय शाप की अवधि सुनाई॥
वर्ष शतक जावेगा जबही। हरि अवतार लेनगे तबही॥५२॥

मुक्त करेंगे तुमरी सोई। पतित उधारक केशव जोई॥
लेवो वर तुम एक हमारा। ज्ञान नष्ट नहिं होगा थारा॥५३॥

जो यह वृक्ष देह मुनि दीना। सो तिनने हमरा हित कीना॥
जो शिक्षा नहिं देवें साधू। मूरख करें संत अपराधू॥५४॥

सो अपराध तुमारा होई। हरि हरिजन का भेद न कोई॥
अब आज्ञा होवे हम जावें। मात-पिता के दर्शन पावें॥५५॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

राजराजसुत निज गृह जावो। पुन ऐसा मत कर्म कमावो॥
संत अवज्ञा करहै जोई। जन्म-जन्म दुख पावत सोई॥५६॥

धन यौवन मदिरा मद जांके। साधु असाधु विवेक न तांके॥
सब पापन कर यह त्रय मूला। विविध कलेश देत सम शूला॥५७॥

यह त्रय मद तुमने उर धारे। वर्षातप दुख विविध सहारे॥
पंडित चतुर विवेकी सोई। यह त्रय मद जाके नहि होई॥५८॥

अब तुम हूए भक्त हमारे। नष्ट भये तुमरे दुख सारे॥
मम भक्ती जांके उर आवत। सो जन पुन पुन जन्म न पावत॥५९॥

नारद-वचन दोहा

दामोदर के वचन सुन, करके दण्ड प्रणाम।
कर प्रदक्षिणा यक्ष सुत, गये जनक के धाम॥६०॥

पतित द्रुमों का शब्द सुन, नन्दादिक आभीर।
वज्रपात का मान भय, गये नदी के तीर॥६१॥

गिरे नगन को देखके, देख कृष्ण को तात।
बालन से पूछत भये, दुखितेन्द्रिय मन गात॥६२॥

नन्द-वचन चौपाई

कहो तात किस विटप गिराये। बिना प्रचंड पवन के आये॥
किस बांधे प्रिय पुत्र हमारे। जाना चाहित सो यमद्वारे॥६३॥

बालक-वचन चौपाई

दुग्धपात्र फोड़ा है याने। याते इसको बांधा मां ने॥
द्रुमन बीच जबही यह गयऊ। तिरछा ऊखल तबही भयऊ॥६४॥
इसने बल कर खैंचा जबही। पतित भये यह युग द्रुम तबही॥
तिनसे दो नर उत्पन भय हैं। याकी स्तुति प्रणाम कर गय हैं॥६५॥

नारद-वचन दोहा

बालक के सुन बचन तब, तिनके हृदय न आय।
नन्द तनुज को खोल कर, निज उर लिया लगाय॥६६॥
मुख चूमत कर फेर सिर, उपजा प्रेम महान।
यशमति को फटकार दे, दिये द्विजन को दान॥६७॥

नंद-वचन चौपाई

कोपिन तोमें मति नहिं राई। सुंतको बांधत दया न आई॥
गो गोरस गृह सब लुट जावो। पर मत सुत पर हाथ उठावो॥६८॥

ऐसा कौन पुना तुम जबही। देश-निकाला द्योंगा तब ही॥
ले प्रिय सुत को गोद खिलावो। भूखा होगा दुग्ध पिवावो॥६९॥

नारद-वचन दोहा

यशमति लज्जित होय के, लिया पुत्र को गोद।
मन में बहु पछतावती, उपजा निजपर क्रोध॥७०॥
प्रेम पयोनिधि गोपिका, पर प्रिय श्री भगवान।
कहां कठोर स्वभाव यह, हरि इच्छा बलवान॥७१॥
जो कोई इस चरित को, करे प्रेम से गान।
सब बंधन से छूटकर, पावत गति निर्वान॥७२॥
एक समय में मालिनी, नन्द द्वार में जाय।
बोली दोनों भ्रात को, तिन का नाम बुलाय॥७३॥

मालिनी-वचन चौपाई

हे माधव हे राम उदारे। आँब लाई हूँ हेत तुमारे॥
बहुत पके मीठे अति लाला। सुन्दर कलमी पाल रसाला॥७४॥
आवो बेग लीजिये भैया। ठाड़ी हूँ बल जावे मैया॥
हुकम होय तो अन्दर आवूँ। हुकम होय ठाड़ी रह जावूँ॥७५॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

ठाड़ी रह हम दोनों आवें। आज तुमारे फल को खावें॥
बोनी कर तूं आज हमारी। उत्तम विक्री होगी थारी॥७६॥

नारद-वचन दोहा

फल परदाता सर्व के, नित्य तृप्त सुख रास।
गोदी भर कर धान की, गमने मालिनि पास॥७७॥

तिसने ले अँन आँब से, भरदी तिनकी गोद।
घर जा देखा धान्य सब, रत्न भये भा मोद॥७८॥

एक काल हरि कर रहे, यमुना तीर विहार।
यशमति भेजी रोहिणी, बोलन हेत कुमार॥७९॥

रोहिणी-वचन चौपाई

आवो सुत बल जावे मैया। जन्म नक्षत्र आज तव भैया॥
घर आये कर करो सनाना। विप्रन को देवो गोदाना॥८०॥

निज मित्रन को देखो आये। भूषण वसन मात पहराये॥
भोजन करके तुम दो भाई। कर शृंगार खेलो यदुराई॥८१॥

नारद-वचन दोहा

क्रीड़ा में मन लग रहा, गये न जब विबुधेश।
गयी यशोदा आप तब, बोलन हेत नरेश॥८२॥

यशोदा-वचन चौपाई

रे कुल नन्दन माधव आवो। खेलन में बहु मन नहिं लावो॥
भूख लगी होगी सुत प्यारे। क्रीड़ा करत बहुत तुम हारे॥८३॥

प्राता काल अल्प दधि खाया। अब लग भोजन नहिं तुम पाया॥
तात राम भ्राता को लावो। जो चाहो सो भोजन पावो॥८४॥
भोजन करते तात तुमारा। देख रहा अब मारग थारा॥
सखा तुमारे घर को जावें। क्षुधित होंयगे भोजन पावें॥८५॥

नारद-वचन दोहा

कहने से जब नहिं चले, बल कर पकड़े मात।
भाग गये कर से पुना, ग्रहण करे दृढ़ तात॥८६॥
संकर्षण कर एक में, एक हाथ गोपाल।
चली यशोदा बीच में, शोभा बनी विशाल॥८७॥
अनह्वाये पहराय के, विप्रन को दे दान।
थाल परोसा मात ने, विविध भाँत पकवान॥८८॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

तात साथ हम खावें मैया। अलग बैठ खावो यह भैया॥
हमरा कर नोंचत है दाऊ। याका साथ न हमें सुहाऊ॥८९॥

श्री बलदेव-वचन चौपाई

हम नहिं अलग बैठ के खावें। तात साथ हम भोजन पावें॥
याका साथ न मोको भावत। उगल उगल के पुन यह खावत॥९०॥

यशोदा-वचन चौपाई

अलग अलग तुम दोनों खावो। आपस में नहिं बैर कमावो॥
लीजो थाल न करिये देरी। लगी होयगी भूख घनेरी॥११॥

नारद-वचन दोहा

य्यों नहि य्यों नहि भाख के, भाग चले युग भ्रात।
तात काल उठ तिनों का, कर गह लाई मात॥१२॥

नन्द-वचन चौपाई

मोर संग तुम दोनों खावो। रिस कर मत भूखे रह जावो॥
सुन मुकुन्द मत उगलत खाना। सुत संकर्षण मत नोंचाना॥१३॥

नारद-वचन दोहा

दोनों को समुझाय के, नन्द बिठाये साथ।
किंचित् मुख में पायके, पुन बोले अहिनाथ॥१४॥

श्रीबलदेव-वचन चौपाई

क्षीर अधिक मीठी है माता। अन्न सलोना नाहिं सुहाता॥
पय से मीठा निकसे जबही। भोजन करहूँगा मैं तबही॥१५॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

मैया मोको क्षीर न भावत। पूरी साग न हमें सुहावत॥
माखन मिसरी दधि प्रिय लागत। और अन्न से मम मन भागत॥१६॥

माखन दधि दीना तुम जोई। मोको खाटा लागत सोई॥
ताजा गोरस देंगी जब ही। अन्न पाउंगा जननी तबही॥९७॥

यशोदा-वचन चौपाई

सुत संकर्षण भोजन जेंवो। बिन मीठे का पय तुम लेवो॥
जेम श्याम बल जावे मैया। ताजा गोरस लेवो भैया॥९८॥

जलदी भोजन करिये लाला। बाहिर खेलत हैं ब्रज बाला॥
भोजन कर लेवोगे जबही। सुभग खिलोना द्योंगी तबही॥९९॥

नारद-वचन दोहा

सोई दीना दूध दधि, तिनकी दृष्टि बचाय।
प्रेम देख कर मात का, खान लगे युग भाय॥१००॥

निज प्रिय पुत्र जिमावते, जो सुख पाया मात।
जो सुख पाया नन्द ने, सो सुख कहा न जात॥१०१॥

जो सर्वज्ञ अभोगता, पूरण सब सुख रास।
निज भक्तों के मोद हित, सो यह करत विलास॥१०२॥

मास-पारायण पाँचवाँ विश्राम॥५॥

चपलाई से जेम कर, संकषर्ण गोपाल।
ब्रज बालों का बोल सुन, भाग गये तज थाल॥१०३॥

भोजन करके नन्द नृप, गये करन नृप नीत।
खेलत खेलत कृष्ण ने, कीना दिवस वितीत॥१०४॥

नन्द राज गृह आय के, नहि देखे जब बाल।
यशमति भेजी सुतन के, बोलन हेत नृपाल॥१०५॥

यशोदा-वचन चौपाई

हे मुकुन्द संकर्षण ताता। गृह आवो बल जावे माता॥
सूर अस्तभा भया अंधेरा। लाल न यह खेलन की बेरा॥१०६॥

आवेगा कोई हत्यारा। छीन लेवगा जेवर थारा॥
बैल बजाड़ आयगा कोई। मारेगा तुमको सुत सोई॥१०७॥

नारद-वचन दोहा

माता के सुन वचन तब, मन में भीती मान।
गह कर कर निज मात का, ठुमक चले भगवान॥१०८॥

गृह में जाकर मंच में, लोट गये युग भ्रात।
निश भोजन हित सुतन को, लगी उठावन मात॥१०९॥

यशोदा-वचन चौपाई

ब्यारू करके सोवो ताता। नहिं तो भूख लगेगी प्राता॥
ब्रज पति मग देखत हैं तेरी। उठो तात मत करिये देरी॥११०॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

देना कहा खिलौना जोई। देवेंगी जननी जब सोई॥
तब पावेंगे ब्यारू माता। नहि तो सोवत है युग भ्राता॥१११॥

नारद-वचन दोहा

सुभग खिलोना बहुत विध, दिखलाये तब मात।
यह नहिं यह नहिं भाखके, लोट गये पुन तात॥११२॥

पुन यशमति ने काच दो, दिखलाये मिथिलेश।
निज प्रतिछाया देखके, भये प्रसन्न सुरेश॥११३॥

भोजन कर पय पान कर, शयन कराये मात।
पुनर उठाये तास ने, जब भा काल प्रभात॥११४॥

यशोदा-वचन चौपाई

उठो लाल जननी बलिहारी। उदय भया अब सूर तमारी॥
तुमरे मुख पंकज की शोभा। देख प्रभाकर का मन लोभा॥११५॥

निश में तव वियोगकर सोही। रहा विकल मन कुमुदिनि द्रोही॥
याते मंद तेज अब हंसा। तेजस्विन में जो अवतंसा॥११६॥

प्रिय वियोग आधी उर जांके। तुष्टी पुष्टी होत न तांके॥
तांते निज मुखकंज दिखाकर। करिये पूरण तेज विभाकर॥११७॥

नारद-वचन दोहा

रति साना रव मात का, सुनकर बल-गोपाल।
नयन मींडते बैठके, बोले वचन रसाल॥११८॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

भूख लगी है मैया मोको। झूठ न भाखूँ जननी तोको॥
माखन मिसरी जल्दी लावो। हम दोनों को बैठ खवावो॥११९॥

यशोदा-वचन चौपाई

उठिये प्रथम सनान करावूं। पाछे गोरस लाल खवावूं॥
बिना सनान करे जो खाई। ता शिशु की नहिं होत सगाई॥१२०॥

नारद-वचन दोहा

या विध कहकरमात ने, राम श्याम युग भाय।
अनह्वाये पहराय के, गोरस दिया खवाय॥१२१॥
जो कोई इस ताल को, करे प्रेम से गान।
रत्न अन्न बहु तास को, देवेंगे भगवान॥१२२॥

इति श्रीमत्परमहंसोदासीनशिरोवतंसश्रीस्वामिकार्ष्णिज्ञानदा-
सशिष्येण श्रीस्वामिकार्ष्णिगोपालदासाह्वेन विनिर्मिते
गोपालविलासे पूर्वविश्रामे विश्वरूपदर्शनदामोदरलीलादि-
वर्णनं नाम चतुर्थस्तालः समाप्तः ॥४॥

—***—

ॐ

श्रीवृन्दावनविहारिणे नमः।

अथ पञ्चमस्तालः-५

श्लोकः

श्रीवृन्दावनकुञ्जगह्वरतटे वत्सश्च कह्वासुरः
नागो गोदुहवत्सपेन निहता येनेन्द्रलोकं गताः।
मध्यस्थश्च चखाद गोपतनयैरन्नं चतुर्धा सह
स्तोत्रं यस्य कृतं त्रिलोकपतिना कृष्णाय तस्मै नमः॥१॥

नारद-वचन दोहा

एक समय में नन्द नृप, विविध अरिष्ट निहार।
इकठे कर ब्रज गोप सब, बोला वचन विचार॥२॥

नन्द-वचन चौपाई

विविध वेदना हम पर आई। सो सब तुमने देखी भाई॥
बकी शकट से पुत्र हमारे। निज भागन से बचे बिचारे॥३॥
तृणावर्त द्रुमपतन कराला। इनसे जिम किम छूटे बाला॥
हमरे यह दो शिशु सम प्राना। इन बिन मम आलम्ब न आना॥४॥

सो यह यहाँ विविध दुख पावत। मम मन कुछ विचार नहिं आवत॥
अब क्या करना चहिये भाई। यह महि मम अब नाहिं सुहाई॥५॥

नारद-वचन दोहा

सब गोपन में गोप इक, हरिजन वृद्ध सुजान।
तास नाम उपनन्द नृप, बोला वचन प्रमान॥६॥

उपनन्द-वचन चौपाई

नन्दराज तुम भाखा जोई। समीचीन हम जाना सोई॥
मेरे मन तो अब यह आई। योग्य यहाँ से चलना भाई॥७॥
चतुर्विंशती क्रोश प्रमाना। वृन्दावन वरु विपिन बखाना॥
अति समीप कालिन्दी जामें। सुन्दर घास प्रचुर अति तामें॥८॥
नन्दीश्वर गहवर गोवर्धन। जामें पर्वत अघगणमर्दन ॥
जो तुमको प्रिय लागे भाई। तहाँ वास सब विध सुखदाई॥९॥

नारद-वचन दोहा

हितकारी ता गोप के, सुनकर वचन विशाल।
बहुत ठीक बहु ठीक कह, बोले सब गोपाल॥१०॥
सबकी सम्मति जानके, नन्दगोप गोपेश।
निज दासन को बोलकर, हुकम दिया मिथिलेश॥११॥

नन्द-वचन चौपाई

हे शत्रूजित हे अरिमर्दन। हे सहस्रजित तस्कर अर्दन॥
जलदी स्यंदन जोत लिआवो। अबला बाल वृद्ध बइठावो॥१२॥
सब वस्तू शकटन में धरिये। गो आदिक पशु आगे करिये॥
तुम सब चलिये प्राक पिछारी। धनुअसि आदिक आयुधधारी॥१३॥

नारद-वचन दोहा

नन्दराज का वचन सुन, तैसे ही तिन कीन।
निज निज स्यन्दन जोड़ के, सबी अभीर प्रवीन॥१४॥

शंख तुरी का घोष कर, निज-निज इष्ट मनाय।
नाचत गावत सब चले, विविध शृंगार बनाय॥१५॥

मात यशोदा रोहिणी, निज-निज सुत ले गोद।
एक यान में बैठ कर, चली अमित मन मोद॥१६॥

वृन्दाकानन पहुँच कर, सुन्दर यमुना तीर।
निज निज धाम बनाय के, बसत भये आभीर॥१७॥

एक समय अति हर्ष कर, संकर्षण गोपाल।
गोद बैठ कर नन्द की, बोले वचन रसाल॥१८॥

श्रीरामकृष्ण-वचन चौपाई

जनक तात हम दोनों भाई। वत्स चावेंगे वन जाई॥
सखा हमारे बालक जोई। वत्स चरावन जावत सोई॥१९॥

हम भी बालन के संग जावें। वत्स चराय साँज गृह आवें॥
बालक पुर में रहत न कोई।हम दोनों सँग खेले जोई॥२०॥

नन्द-वचन चौपाई

तात वत्स तुम क्यों वन जावो। कुश कंटक में क्यों दुख पावो॥
तुमरे वेशम अनुचर जोई। नितप्रति वत्स चरावत सोई॥२१॥
सर्प शृगाल आदि वनचारी। तुमको दुख देंगे मनुजारी॥
अति अधीर सुत चित्त हमारा। तव वियोग नहिं जात समारा॥२२॥

श्रीरामकृष्ण-वचन चौपाई

पहर उपानह पद में ताता। वन जावेंगे दोनों भ्राता॥
तब असीसकर वनचर जोई। सन्मुख नहि आवेगा कोई॥२३॥
जो सन्मुख होगा वनचारी। हानी क्या कर सकत हमारी॥
भयी पूतना की गति जोई। वनचर गति पावेगा सोई॥२४॥

नन्द-वचन चौपाई

जो नहिं मानत हो तुम ताता। भोजन करके जाना प्राता॥
वत्स लाल प्रिय दूर न जाना। गृह समीप अति वत्स चराना॥२५॥
साथ साथ रहना युग भाई। वन में करना नहिं चपलाई॥
जो वनचर दुख देवें तोको। सपदी बोल लेवना मोको॥२६॥

नारद-वचन दोहा

सर्व विश्व पालक प्रभू, मात जिमाये प्रात।
व्रजबालन को साथ ले, वत्स चराने जात॥२७॥

वंशी शंख बजावते, गये नदी के तीर।
खेल करतभा बहुत विध, शिशुन साथ यदुवीर॥२८॥

खग छाया के साथ कबि, भागत सो व्रज वार।
युद्ध करत पुन परस्पर, कबी सुनीर विहार॥२९॥

एक समय में असुर इक, वत्स रूप को धार।
सब बछड़ों में जा मिला, मारन हेत कुमार॥३०॥

तांके छलको जान के, माया पति नित बोध।
पश्चिम पद से पकड़कर, पूँछ युक्त कर क्रोध॥३१॥

मारा वृक्ष कपित्थ पर, घूम घुमा भगवान।
वृक्ष टूट महि में गिरा, तांके निकसे प्रान॥३२॥

विबुध पुष्प वर्षा करें, भये मुदित व्रज बाल।
देव देह धर दैत्य ने, कहा आपना हाल॥३३॥

वत्सासुर-वचन सवैया

शुभ सर्वगुणाकर श्री यदुनन्दन, देवन देव दयालु स्वभाऊ।
वसुदेव सुनन्दन श्री रघुनन्दन, नन्दसुनन्दन हो तुम दाऊ।
तुमरे बिन दूसर दीसत ना, तुम भूसुर हो तुम हो नर नाहू।
तुमरे पद द्वन्द्व सरोजविषे, प्रणमों हम माधव गोकुलराऊ॥३४॥

वत्सासुर-वचन चौपाई

भगवन् तुम सब जानो स्वामी। प्रभु भव द्रष्टा अन्तरयामी॥
मैं मुरतनुज विदित सब काऊ। नाम प्रमील नृशंसस्वभाऊ॥३५॥

मुनि वशिष्ठ के आश्रम गयआ। नंदिनिगो को देखत भयआ॥
धेनु हेतु मैं द्विज तनु धरिया। मुनि से गो का याचन करिया॥३६॥

मौन रहा मुनि उतर न दीना। मोर कपट नन्दिनि ने चीना॥
खल मुरसुत तू कर निजमाया। द्विज की गो हरने को आया॥३७॥

धेनु. वत्स तुम होवो जाई। जब लग प्रकट होय यदुराई॥
हरि अवतार धारकर थारी। मुक्ति करेंगे सो असुरारी॥३८॥

सत्यकरी तुम सुरभी वानी। मोपर परम अनुग्रह ठानी॥
होय निदेश सोउ अब करहूँ। बार बार तव पद सिर धरहूँ॥३९॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

जन्म जन्म के तव अघ जोई। मम सपर्श कर क्षय सब होई॥
अब तुम नाक लोक में जावो। मम करुणा कर सब सुख पावो॥४०॥

नारद-वचन दोहा

कृष्णचन्द्र बलदेव को, करके दण्ड प्रणाम।
व्योमयान में बैठकर, गया इन्द्र के धाम॥४१॥

एक काल में असुर इक, सखा कंस को भूप।
वृन्दावन जावत भया, बगुले का धर रूप॥४२॥

श्वेत शैलसम देह सो, तीक्षण तुण्ड कराल।
देख तास के रूप को, भाग गये सब बाल॥४३॥

कृष्णाचन्द्र को तास ने, ग्रास लिया मिथिलेश।
देख बाल रोवत भये, विकल भये विबुधेश॥४४॥

निज तनु को श्रीकृष्ण ने, कीना अनल समान।
दग्ध कंठ भा तास का, उगल दिये भगवान॥४५॥

पुनर्ग्रसन के हेत सो, आया तुंड पसार।
युगल चुँच से पकड़ कर, करा देह दोफार॥४६॥

जय जय कर त्रिदशेश ने, दिये पुष्प वर्षाय।
रामादिक सब शिशुन ने, कृष्ण लिये उर लाय॥४७॥

संकर्षण निज अनुज को, वार वार उर लात।
गद गद उर रोमांच तनु, सजल नयन जलजात॥४८॥

बकतनु तज कर दैत्य ने, दिव्य देह को धार।
कर प्रणाम गोपाल पद, बोला वचन उदार॥४९॥

बकासुर-वचन सवैया

तुम नाथ अनाथन के भव में, तुमरे पद वन्दन होय हमारा।
हमरे सम जो पतिताधम हैं, तिनके हित आप धरो अवतारा।
अरि को सुर धाम पुचावत हो, तुमरे सम नाथ न और उदारा।
यह मूढमती जड़जीव प्रभो, नहि जानत हैं उपकार तुमारा॥५०॥

बकासुर-वचन चौपाई

देव देव तुम सब तनुवासी। पूरण अमल अमित सुखरासी॥
स्थावर जंगम देह तुमारे। जो खल इनसे द्रोह विचारे॥५१॥

ता नर की गति होवत ऐसी। मैं मूरख की हूई जैसी॥
अश्वग्रीव दानव पति जोई। जनक हमारा जानो सोई॥५२॥

उत्कल नाम प्रसिद्ध हमारा। जीव मात्र को भक्षण वारा॥
एक काल गंगांबु मझारे। बडिश डारकर जलचर मारे॥५३॥

जाजिल मुनि ने बहुत निवारा। तांका वचन न मैं मन धारा॥
शाप दिया तब तिसने मोको। बक होवो आमिष प्रिय तोको॥५४॥

सुनकर शाप भया भयभारा। तब मैं विप्र चरण शिर धारा॥
तब मुनिके उर करुणा आई। शाप अवधि की वाक सुनाई॥५५॥

ब्रज में हरि जब नरतनु धारी। मुक्त करेंगे सोउ तुमारी॥
जाजिल मुनि जो कीनी दाया। सो अब परम लाभ मैं पाया॥५६॥

सत संगति क्षण होवे जोई। परम अर्थ का दाता सोई॥
अब तव करुणाकर सुर नाथा। जावूँ सुरपुर मैं सुख साथा॥५७॥

नारद-वचन दोहा

कर प्रणाम गोपाल पद, गया इन्द्र के लोक।
गोग्वालन के सहित हरि, गमन किया निज ओक॥५८॥

पृथुकन ने हरि कर्म सो, सबसे किया बखान।
सुन विस्मय हो नन्द ने, करा कृष्ण गुणगान॥५९॥

नन्द-वचन चौपाई

अति आश्चर्य देखिये भाई।बालन की बहुविध मृति आई॥
इनका रोम भंग नहि हूआ।आप असुरगण सोई मूआ॥६०॥
जिम प्रज्वलित अनल में जावत।पतित पतंग मृत्यु को पावत॥
गर्ग गुरू ने भाखी जोई।तांकी वाक मृषा नहि होई॥६१॥
साधु साधुता से बच जावत।दुष्ट दुष्टता से दुख पावत॥
जैसा करत जगत में जोई।तैसा ही फल पावत सोई॥६२॥

नारद-वचन दोहा

एक समय साग्रज हरी, उठ कर प्राता काल।
वंशी शुभग बजाय के, करे एकठे बाल॥६३॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

निज निज गृह से भोजन लेवो।सबी विपिन में चल के जेवो॥
हम भी चल हैं अन्न लिवाई।खावेंगे सब मिलकर भाई॥६४॥

नारद-वचन दोहा

अनुशासन सुन कृष्ण का, लेकर विविध अहार।
बछरों को ले साथ सब, गमने विपिन मझार॥६५॥

भोजन रख कर द्रुमन पर, खेल लगे ब्रज बाल।
पूँछ पकड़ कर कपिन की, कोउ चढ़े द्रुम डाल॥६६॥
मृग मोरन के साथ पुन, कोई भागत बाल।
कोई नाचत गावते, कोई दें करताल॥६७॥
नाम अघासुर सर्प तब, आया विपिन मझार।
राम कृष्ण को देख के, करने लगा विचार॥६८॥

अघासुर-वचन चौपाई

मम बक बकी सहोदंर जोई। इसी बाल ने मारे सोई॥
इनको जब भक्षण कर लेवूँ। तब निज बंधु तिलांजलि देवूँ॥६९॥
मधुपुर भोजप हमरा राजा। इने मार तिसका कर काजा॥
निर्भय हो मथुरा में जावूँ। कंस अनुचरों में यश पावूँ॥७०॥

नारद-वचन दोहा

यह विचार कर सर्प ने, योजन भर विस्तार।
गिरि सम मोटा देह कर, निज मुख दिया पसार॥७१॥
बालक तांके वदन को, अचल कन्दरा जान।
निज कर ताली पीटते, धसे बिना भगवान॥७२॥
तिनके रक्षण हेत पुन, राम-कृष्ण युग भ्रात।
कर प्रवेश तांके वदन, विपुल करा निज गात॥७३॥

प्राणरोध से सर्प का, फूटा सीस नृपाल।
बाहिर आये वदन से, राम-कृष्ण सब बाल॥७४॥

सुर प्रसून वर्षन लगे, करत सुजय-जयकार।
देव देह धर सर्प ने, हरि पद करा जुहार॥७५॥

अघासुर-वचन कवित्त

व्यापक अनीह जोई, सोदर समेत सोई,
मम मुख आये आपे, भाग्य को हमारे हैं।
मुनि जाको नित ध्यावें, तदपि न उर आवें,
फल-फूल खाय कर, मन वश कारे हैं।
कृपासिंधु सम तेरे, आया नहीं दृष्टि मेरे,
जोऊ निज शत्रु के भी, हित को विचारे है।
राम-श्याम भ्रात दोऊ, मम उर बसो सोऊ,
वन्दना अनेक बार, मम पद थारे है॥७६॥

चौपाई

यद्यपि तुम सब में सम सांई।सर्वातम पूरण नभ न्यांई॥
तदपि देह अभिमानी जोई।नहि पावत तुमको प्रभु सोई॥७७॥

तनु अभिमान जोउ मन लावत।मम सम सो दुर्गति को पावत॥
शंखासुर का सुत अघ नामा।युवा काम सम मैं अभिरामा॥७८॥

अष्टवक्र मुनि को मैं देखा। मम मन गर्व भया अविशेषा॥
देखो क्या यह वक्रशरीरा।तदपि धरत है उर अतिधीरा॥७९॥

सुनकर कोप करा मुनिराई।भुजग भयंकर हो तू जाई॥
या विध सुनकर द्विज की वानी।मैं तब मुनि पद वंदन ठानी॥८०॥

विप्र हृदय तब करुणा आई।शाप शांति की अवधि सुनाई॥
कृष्ण प्रवेश करेंगे जब ही।तव मुख में गति होगी तब ही॥८१॥

मुनि के वाक सत्य तुम कीनी।मैं पापी को शुभ गति दीनी॥
तव पद वन्दूँ बारम्बारा।जो प्रभु ने मम करा उधारा॥८२॥

नारद-वचन दोहा

या विध कहकर कृष्ण को, करके दण्ड प्रणाम।
सब लोकन के देखते, गया इन्द्र के धाम॥८३॥

जो कोई इस चरित को, करे प्रेम से गान।
ताँके पशु खग भुजग से, रक्षक हैं भगवान॥८४॥

हरि बालन को साथ ले, गये नदी के तीर।
सीतल मंद सुगन्ध युत, बहती जहाँ समीर॥८५॥

सुन्दर कोमल तृणों कर, शोभित भूमि प्रदेश।
भोजन हित सब सखन को, कहत भये अखिलेश॥८६॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

यह भोजन को उत्तम ठौरा।या सम भूमि न दीसत औरा॥
भूखे होवोगे तुम ताता।एक प्रहर दिन है अब भ्राता॥८७॥

निज निज छीके लावो जाई। सुखसों भोजन करिये भाई॥
नीर पान कर बछरे सारे। निर्भय घास चरनगे प्यारे॥८८॥

नारद-वचन दोहा

भोजन लाये बाल सब, बैठ मंडलाकार।
राम-कृष्ण युग मध्य में, चारों तरफ कुमार॥८९॥
सबका मुख श्री कृष्ण के, तरफ रहा मिथिलेश।
तारा गण के सहित जिम, शोभित मध्य निशेश॥९०॥

मास पारायण छठा विश्राम॥६॥
पाक्षिक पारायण तृतीय विश्राम॥३॥

कर पट पतल पषाण पुन, पद्म-पत्र पर बाल।
निज निज भोजन राख के, जेमन लगे गुपाल॥९१॥
अपने अपने अन्न को, देत परस्पर तात।
भोजन का गुण दोष कह, सब मिल हसत हसात॥९२॥

श्रीदामा-वचन चौपाई

मम भोजन को चाखो भाई। लेवो राम कृष्ण यदुराई॥
रत्न सुदामन् सुबल पयारे। लेवो सखे बरूथ हमारे॥९३॥

नारद-वचन दोहा

तांका भोजन चाखके, भये प्रसन्न गुपाल।
वाह वाह सबने कहा, मीठा सुभग रसाल॥९४॥

सुबल-वचन चौपाई

हमरा भी तुम चाखो भ्राता। राम-कृष्ण श्रीदामन् ताता॥
रत्न बरूथ लीजिये भाई। कुलदीपक कुलमणि सुखदाई॥९५॥

नारद-वचन दोहा

या विध कह कर तास ने, सबी जिमाये बाल।
तांका भोजन चाखके, हस बोले सब ग्वाल॥९६॥

बालक-वचन चौपाई

वाह वाह याकी महतारी। करत रसोई नयन उघारी॥
पायस में जिस सैंधव डाला। दाल साग में मीठा घाला॥९७॥
दाल सुपेद क्षीर पुन कारी। काचे चावल रोटी जारी॥
याके अकल निजीक न आई। क्षीर मांहि जिस मिरच मिलाई॥९८॥

सुदामा-वचन चौपाई

तात हमारा भी सब लेवो। संकर्षण श्यामल प्रिय जेवो॥
पुरुषोत्तम गोवर्धन भाई। कहो सखे कस हमरी माई॥९९॥

बालक-वचन चौपाई

तव जननी हम नीकी चीनी। बिन पानी जिस रोटी कीनी॥
जांका क्षीर मधुर प्रिय भूरी। करी जासने पय की पूरी॥१००॥

बरूथ-वचन चौपाई

सखे सबी हमरा बी खावो। जैसा हो सो सत्य सुनावो॥
माधव यादव नन्दन भ्राता। लेवो लाल नरोत्तम ताता॥१०१॥

नारद-वचन दोहा

भोजन चखकर तासका, देख परस्पर बाल।
नाक सकोड़ मरोड़ के, बोले वचन गुपाल॥१०२॥

बालक-वचन चौपाई

सुबल मात याकी महतारी। दोनों भगनी होंगी प्यारी॥
जैसा भोजन कीना वाने। तैसा ही पुन करिया याने॥१०३॥
निज भोजन करवावन लीये। विधि यह दो तनु उत्पन कीये॥
वाह वाह जावें बलिहारी। ऐसी मिले कहाँ महतारी॥१०४॥

नारद-वचन दोहा

पुन निज भोजन पतल में, सुधा सुदृष्टि निहार।
जनक जिमाये कृष्ण ने, सब ब्रज गोप कुमार॥१०५॥
ता भोजन के करत ही, मग्न भये सब बाल।
वाह यशोदे रोहिणी, कहकर इम ब्रज ग्वाल॥१०६॥
भोजन सब करने लगे, शोभा बनी अनूप।
सुषमा राम गुपाल की, को कवि वरणे भूप॥१०७॥

घनाक्षरी छन्द

सीस में किरीट सोहे, जामें मोती लाल पोए,
मणि मोती हार गल, वनमाला धारी है।
नाक मोती छबि छाई, छड़ी काँख में दबाई,
कटि काँची काछनी की, सुषमा अपारी है।
काँचन के कंकणों की, छबि कर ग्रास लिया,
नील पीत पट केरी, तनु शोभा न्यारी है।
कटि कसे पट विषे, बंसरी फसाय राखी,
इस युगल जोड़ी पर दास बलिहारी है॥१०८॥

बालक भोजन में लगे, रहा न कुछ तब ख्याल।
घास चरत बछरा सकल, दूर गये भूपाल॥१०९॥
वत्स अगोचर देखके, भये विकल मन बाल।
तिनको धीरज देन हित, बोले कृष्ण दयाल॥११०॥

श्रीकृष्णवचन चौपाई

चिन्ता मत करिये तुम ताता। निर्भय भोजन कीजो भ्राता॥
मैं जावत हूँ विपिन मझारे। ढूँढ लाँउगा बछरा सारे॥१११॥

नारद-वचन दोहा

याविध सब बालन प्रती, देकर नृप तब धीर।
ग्रास लिया कर कमल में, विपिन गये यदुवीर॥११२॥

बहुत देर तक कृष्ण के, नहि आये पुन राम।
बालन को दे धीर वन, गमने करुणा धाम॥११३॥

प्राकृत शिशु सम श्याम के, चरिंत देख लोकेश।
संशय कर ईशत्व में, आया महि मिथिलेश॥११४॥

हेत परीक्षा कृष्ण की, गिरी गुफा में जाय।
वत्स वत्सपालक सबी, विधि ने दिये छिपाय॥११५॥

ब्रह्मा की कृत जानकर, विश्वकार गोपाल।
वत्स वत्स-पालक सकल, आप भये तत्काल॥११६॥

जैसा जास स्वभाव था, जैसा जांका रूप।
जैसा जास अकार पुन, तैसा भा यदुभूप॥११७॥

सब बछरों को साथ ले, तहाँ आय घनश्याम।
पुन आये बलदेव जी, गये सभी निज धाम॥११८॥

तब बालक बछरा सकल, निज निज गये अगार।
ता दिन से तिनमें सकल, करत सुप्रेम अपार॥११९॥

गो गोपी गोपाल सब, तब निज पर का नेम।
वत्स वत्सपालन विषे, करें अधिक अति प्रेम॥१२०॥

पुन प्रसूत हो धेनुबी, अधिक प्रेम कर तात।
कृष्ण रूप वत्सन प्रती, दूध चुखावत मात॥१२१॥

परम प्रेम भगवान जो, सर्वातम सब रूप।
भये पुत्र सो सर्व के, क्यों न बढ़े रति भूप॥१२२॥
ब्रजवासिन का सहित निज, अधिक प्रेम लख राम।
सब बालक बछरों विषे, सोचत भा मतिधाम॥१२३॥

श्रीबलदेव-वचन कवित्त

पर प्रिय श्याम भाई, स्वजनों के सुखदाई,
आतम स्वरूप मेरा, जिम मोको भावे है।
बछरे हमारे सारे, बालग्वाल सखा प्यारे,
इन सब माँहि प्रेम, तैसा दरसावे है।
असुर मनुष्य कोई, देव दैत्य यक्ष होई,
कौन काज हेत निज, माया दिखलावे है।
प्राणप्रिय भ्रात केरी, जोऊ माया नित्य चेरी,
सोऊ यह होव जोऊ, मोको भरमावे है॥१२४॥

नारद-वचन दोहा

हरि माया यह और नहिं, मन में कर अनुमान।
दृढ निश्चय हित राम ने, पुन पूछे भगवान्॥१२५॥

श्रीबलदेव-वचन चौपाई

कहो तात यह किसकी माया। जिसने सब ब्रज को भरमाया॥
हमको तो दीसत प्रिय थारी। भरमाई जिस बुद्धि हमारी॥१२६॥

नारद-वचन दोहा

ब्रह्मा की करतूत तब, भाखी सब विश्वेश।
एक वर्ष पूरण भये, पुन आये लोकेश॥१२७॥

वत्स वत्सपालक सकल, पूरब तुल्य निहार।
चकित होय कर चित्त में, कीना विविध विचार॥१२८॥

ब्रह्म वचन चौपाई

प्रथम चुराये मैंने जोई। मम माया कर सोवत सोई॥
यह अब और कहाँ से आये। क्या इनने यह नये बनाये॥१२९॥

इनमें कौन सत्य कर मानूँ। किनको कल्पित कर के जानूँ॥
इनमें उनमें भेद न कोऊ। सम स्वरूप दीसत हैं दोऊ॥१३०॥

नारद-वचन दोहा

या विध तिसके सोचते, हरि निज शक्ति फिलाय।
श्यामल सायुध चतुर्भुज, बालक सब दरसाय॥१३१॥

एक एक के अग्र में, निज समेत मुनिदेव।
हाथ जोड़ अस्तुति करें, बहुविध कर हैं सेव॥१३२॥

अमित सुमहिमा देख के, विधि उर में घबराय।
जड़ पुतली सम हो गया, तनु की सुध विसराय॥१३३॥

पुन तिसने अति कष्ट कर, देखा नयन पसार।
नहि को देव न ऋषि मुनी, चतुर्भुजी न कुमार॥१३४॥

एका एकी कृष्णजी, वृन्दारण्य मझार।
बछरों को ढूँडत फिरत, अन्न ग्रास कर धार॥१३५॥

या विध लख कर कृष्ण को, मनमें भीती मान।
दंड समान प्रणाम कर, लगा कृष्ण गुणगान॥१३६॥

ब्रह्मस्तुति-वचन सवैया

सजलांबुद श्याम शरीर विषे, बिजरी सम पीत दुकूल सुहाई।
सिर मांहि किरीट सुकोण विषे, शिखि पंख विचित्रित की झलकाई।
वनमाल गले कर ग्रास धरा, मुरली कटि काँख छड़ी छबि छाई।
ब्रजराज तनूज पदांबुज में, प्रणमो निज उत्तम अंग निवाई॥१३७॥

निज काम स्वरूप न भौतिक है, सगुणातम जो यह देह तुमारा।
निज दास मनोरथ पूरक जो, हमरे पर जो करुणा कर धारा।
इसकी महिमा रतनाकर का, मुनिदेव यती नहिं पावत पारा।
स्वसुखानुभवातम मात्रविभू, तिसका पुन को जन जाननवारा॥१३८॥

अमलांतर रुद्धमतीजन जो, निज इन्द्रिय को वश राखत जोई।
श्रुतिसार विचार करे नित जो, जिसकी मतिवृत्ति चिदातम होई।
निज बोध स्वरूप अविक्रिय जो, स्वप्रकाश अखंड न छादक कोई।
तव ईदृश आतम को तुमरी, करुणाकर जानत है जन सोई॥१३९॥

बहुकाल प्रयासकरे सुमती, वसुधा कणके गणले नर जोई।
घनशीकर की गणती कर ले, रवि की किरणा गिनले पुन कोई।
तुमरे अवतारन के गुण जो, तिनकी गणना तु कदापि न होई।
इससे सगुणातम की महिमा, अगुणातम से पुरुहू हम जोई॥१४०॥

मत्तगयन्द छन्द

बोध सुधारस के शम आदिक, साधन को तजके जन जोई।
गेह विषे स्थित होकर के, तुमरे यश को सुन है नित कोई।
वाक तनू मन से तुमरे पद, वन्दन को कर है पुन सोई।
सज्जन सेवन से तिसकी इस, संसृति सागर से गति होई॥१४१॥

किरीट छन्द

आतम बोध शिशूकर कारण, माधवभक्तिबधू श्रुति गावत।
त्याग तिसे पुनज्ञान लिये नर, योगशमादिक में मन लावत।
सो जन केवल कष्ट सहे नित, भक्ति बिना नर ज्ञान न पावत।
धानन को तज कूटत जो तुष, ता नर के कछु हाथ न आवत॥१४२॥

मत्तगयन्द छन्द

पूरबकाल भये मुनि जो, तिनने तुमरे यश में मन लाये।
भक्ति महामणि को मुनि पाकर, के तिससे निज आतम पाये।
आतमज्ञान अनन्तर सो, तुमरे पद में पुन जाय समाये।
ब्रह्मस्वरूप भये मुनि सो, तिस से भव में पुन लौट न आये॥१४३॥

कुन्दलता सवैया

तव ध्यान प्रणाम करे नित जो, तुमरे गुणगान विषे मन लावत।
तुमरे अनुकम्पन को नित देखत, दर्शन की नित चाह बढ़ावत।
निज कर्मनका फल भोगत है, दुख काल विषे नहिं जो घबरावत।
इस रीति वितीत करे दिन जो, जन सो तव मोक्ष पदामृत पावत॥१४४॥

मत्तगयन्द छन्द

यद्यपि लोक चतुर्दश मायिक, आतम सत्य त्रिकाल अकाया।
बोध अबोध उभे यह मायिक, मृत्यु जनी नरकादिक माया।
बन्ध न मोक्ष न वास्तव है कुछ, सूरज में जिम धूप न छाया।
मायिकता अपरोक्ष करी तुम, विश्व सबी मुख में दरसाया॥१४५॥

घनाक्षरी छन्द

मन वाक दृश्य जोई, मायारूप भासे सोई,
ध्याता ध्यान ध्येय सबी, मायिक बखाने हैं।
ईश जीव भेद जोऊ, मायाकर दीसे सोऊ,
यावत अकारवान, माया कर जाने हैं।
तीन भेद तीन छेद, जहाँ परतीत होत,
सोऊ सब माया कृत, सत्य नहीं माने हैं।
चेतन अखण्ड जोई, नित सुख रूप सोई,
तासों भिन्न झूठ सबी, दुःख कर साने हैं॥१४६॥

रज्जु विषे नाग जैसे, विश्व सब झूठ तैसे,
स्वपन समान जग, बिन होए भासे है।
जनि मृत्यु बार बार, दुःख देत है अपार,
आतम प्रबोध बिना, तदपि न नासे है।
शुद्ध रुद्ध बुद्धि जोई, तामें अधिकारी सोई,
वेद के विचार कर, ज्ञान परकासे है।
भजन तुमारे बिना, शुद्ध रुद्ध बुद्धि नाहीं,
याही ते अभक्तन को, यम नित त्रासे है॥१४७॥

सुन्दरी सवैया

तुमरे पद पंकज की करुणा, करके जिसका उर पूरण होई।
तव प्रेम पयोधि प्रवाह विषे, नित डूबत जावत है जन जोई।
त्रयदेह अनातम को तजके, तुमको निज आतम जानत सोई।
घटव्योम महानभ की समता, तुमरा तिसका तिम भेद न कोई॥१४८॥

कुन्दलता सवैया

तव भक्ति विहीन नराधम जो, चिर वेद विचार विषे मन लावत।
नित प्रापत आतम को नर वो, शतकोटि तनू धर कें नहिं पावत।
बहु काल मलावृत अम्बर का, बिन क्षार लगे निज रंग न आवत।
तव पाद कुशेशय बेमुख जो, जग ऊर्ध्व अधोगति सो नर धावत॥१४९॥

मत्तगयन्द छन्द

लूटत हैं इसको तब लो, नित राग मदादिक तस्कर जोई।
शोक अगार गृहाश्रम तावत, जेल समान भयानक होई।

शृंखल के सम बाँधत तावत, मोह महाभट आतम द्रोई।
माधव विश्वपते जबलों, तुमरी शरणागत होत न कोई॥१५०॥

सुन्दरी सवैया

शरणागत वत्सलता तुमने, इन गोपन में जगदीश दिखाई।
मन आदि सबी जड़ चेतन के, तुम आप पिता जननी यदुराई।
पशुपालन को तुम तात कहो, सुरनाथ अहीरिणि को पुन माई।
त्रयभेदन से तुम शून्य भये, ब्रजबालन को तुम भाखत भाई॥१५१॥

ब्रजधेनु पशूपति योषित जो, यह धन्य अती पुन धन्य मुरारी।
जिनका पयपान किया तुमने, ब्रजवत्सप वत्सन का तनु धारी।
सुकृती यह वत्सप वत्स सभी, जिनके नित पालक मित्र अघारी।
यह भूमि सुरेन्द्र सुपूज्य जहाँ, विचरे जग पावन पाद बकारी॥१५२॥

घनाक्षरी छन्द

देखो मम मूढ़ताई, रजो गुण मति छाई,
मायापति ईश पर, निज माया डारी है।
सोऊ, सब वृथा होई, क़ारज न करा कोई,
जैसे बह्नी मांहि डारी, तनक चंगारी है।
देव देव यदुराई, बिना जाने प्रभुताई,
करा मैं कसूर यह, जड़ता हमारी है।
दास जान माफ करो, चित्त में न कुछ धरो,
ब्रजनाथ मोको अब, शरण तुमारी है॥१५३॥

जठर में बाल जोई, पाद को पछारे सोई,
जननी न कोप करे, तैसे मोको जानिये।
शतकोटि जगदण्ड, तव कुक्षि में सखंड,
तामें एक कीट सम, नाथ मोको मानिये।
नाभि कंज माँहि तेरी भयी उतपति मेरी,
यांते मोको निज सुत, माधव बखानिये।
करे अपराध कोऊ, बड़े सहें सीस सोऊ,
बड़े का बड़त्व जान, मोद मन ठानिये॥१५४॥

यदुकुल जल जात, धरम पखण्ड रात,
निशिचर खल सूर सम तनू थारी है।
मही महीदेव सुर, धेनु सिंधु शशी सम,
अभिलाष एक मम, मानस मझारी है।
जोई कोई तनु धरूँ, ब्रज भूमि वास करूँ,
तव पाद रज सिर, धरूँ यही प्यारी है।
ब्रज भूमि ब्रजबाल, ब्रजगोपी धेनुपाल,
युत तव पादकंज, वन्दना हमारी है॥१५५॥

नारद-वचन दोहा

स्तुति वर कर लोकेश ने, करे प्रसन्न गुपाल।
प्रथम जहाँ से ले गया, तहाँ पुचाये बाल॥१५६॥

वत्स लाय आगे दिये, पुन कर दंड प्रणाम।
करके चार प्रदक्षिणा, गया द्रुहिण निज धाम॥१५७॥

वत्सन को ले साथ हरि, गमने पुलिन मझार।
यदुनन्दन को देख के, बोले गोप कुमार॥१५८॥

बालक-वचन चौपाई

हे ब्रजनन्दन माधव ताता। अति झटिती आये तुम भ्राता॥
हमने एक कवल नहि खाये। वत्सन को तुम ढूँढ लिआये॥१५९॥
बैठ जेमिये तुम भी प्यारे। हमरे हित तुम कष्ट सहारे॥
तुम बिन हमको अन्न न भावत। तव वियोग कर मन दुख पावत॥१६०॥

नारद-वचन दोहा

सुनकर पृथुकन का वचन, हँसके तब घनश्याम।
तिनसे मिल भोजन करा, पुन गमने निज धाम॥१६१॥

गृह में जाकर बाल सब, कहत भये नर भूप।
आज कृष्ण ने सर्प इक, मारा विपुल सरूप॥१६२॥

हरि माया मोहित भये, बाल तिरोहित राज।
प्रथम वर्ष के कर्म को, यह जाना भा आज॥१६३॥

जो कोई विधि स्तोत्र को, करे प्रेम से गान।
तांको ज्ञान विराग रति, देवेंगे भगवान॥१६४॥

इति श्रीमत्परमहंसोदासीनशिरोवतंसश्रीस्वामिकार्ष्णिज्ञान-दासशिष्येण श्रीस्वामिकार्ष्णिगोपालदासाह्वेन विनिर्मिते गोपालविलासे पूर्वविश्रामे अघासुरवधादिवर्णनं नाम पंचमस्तालः समाप्तः ॥५ ॥

—***—

ॐ

श्रीवृन्दावनविहारिणे नमः।

अथ षष्ठस्तालः-६

श्लोकः

यः सेवां विपिने चकार हलिनो येनाऽऽहतो धेनुकः
कालिन्द्याः ससुहृत्कलत्र उरगो निस्सारितो येन च।
गोपा येन सुरक्षिता हुतभुजो दावाच्च गावो वृषा
नन्दो दानमथो यदर्थमकरोत्कृष्णाय तस्मै नमः॥१॥

नारद-वचन दोहा

सप्त वर्ष के भये जब, राम सहित निज भ्रात।
नमस्कार कर नंद को, बोले वचन सुहात॥२॥

श्री रामकृष्ण-वचन चौपाई

जनक अर्थना एक हमारी। रावर सन्मुख करें उचारी।
भये पुगंड दोउ हम भ्राता। धेनु चरावेंगे अब ताता॥३॥
हमरे मित्र बाल ब्रज जोई। धेनु चरावेंगे अब सोई॥
बिन तिनके हम दोनों भाई। वत्स चरावें किम वनजाई॥४॥

नन्द-वचन चोपाई

तुम सब विध लायक हो ताता। पुरुषसिंह तुम दोनों भ्राता॥
खुशी रहो जामें तुम दोउ। सब प्रकार प्रिय हमको सोऊ॥५॥

युगल भ्रात तुम मम युग नयना। तुम बिन पल भर परत न चयना॥
तुम प्राणन से अति प्रिय मोको। दूर जान हित किम कहुँ तोको॥६॥

नारद-वचन दोहा

आज्ञा लेकर तात की, मित्रन को ले साथ।
धेनु चरावन हेत वन, गमने श्री यदुनाथ॥७॥

को शोभा वर्णन करे, वृन्दावन की भूप।
पद्माकर सर जास में, निर्मल नीर अनूप॥८॥

फल पुष्पों के भार कर, झुके देख द्रुम ग्राम।
अग्रज को कहते भये, अति आदर कर श्याम॥९॥

श्रीकृष्ण-वचन कवित्त

देव पूज्य देव वर, चरण तुमारे पर,
करत प्रणाम यह, पादप विचारे हैं।
फलफूल भेंट निज, शाखा कर मांहि सज,
तव हेत झुक रहे मेदिनी मझारे हैं।

निज अघगण जोऊ, तिनका विनाश चाहें,
जिन अघ कर ये, तरु तनु धारे हैं।
नाचत मयूर पुन, मृगीगण देखें तुमे,
गोपियों के सम यह, प्रियकृत थारे हैं॥१०॥
भ्रमरों का रूप धरें, तव यश गान करें,
ऋषि मुनि गण जोऊ, किंकर तुमारे हैं।
वन मांहि छिपे तोको, तदपि न त्याग करें,
पर प्रिय तुमे यह, चित्त में विचारे हैं।
कोकिलों का गण प्रिय, वाणी बोल करे प्रिय,
अपना अतिथी यह, प्रभु को निहारे हैं।
धन्य वनवासी यह, साधु गृही लोकन के,
सुन्दर स्वभाव नाथ, इनने ही धारे हैं॥११॥

सुन्दरी सवैया

वसुधा तृण धन्य भये अब जो, यह छूवत हैं पदकंज तुमारे।
मृग अंडज पर्वत धन्य नदी, सदया जिनको तुम देखत प्यारे।
यह वृक्षलता पुन धन्य भये, जिनको अब छूवत हैं कर थारे।
यह गोप सबी विध धन्य भये, जिनके गृह रावर पाद पधारे॥१२॥

नारद-वचन दोहा

याविध वृन्दाविपिन की, सुषमा श्याम निहार।
धेनुन को चारत भये, सहित राम ब्रजवार॥१३॥

नवाह्न पारायण द्वितीय विश्राम॥२॥

फिरत फिरत जब थक परे, देख विटपि सुविशाल।
तांके नीचे पर्ण पर, सोवत भये सबाल॥१४॥
शयन करा कर राम को, कृष्ण चन्द्र सु-दयाल।
आप चरण दाबन लगे, पवन करत ब्रजबाल॥१५॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

आज हमारे सम को देवा। जो आरज की कर हैं सेवा॥
आज दिवस भा उत्तम भाई। जो तनु जेष्ठ अर्थ में आई॥१६॥
पिता समान न सेवत जोई। निज अग्रज को मूरख सोई॥
जिस-जिस योनि मांहि सो जावत। मात-पिता बिन शिशु दुख पावत॥१७॥

नारद-वचन दोहा

अनुज वचन सुन राम तब, हँस करके अवनीश।
केशव का कर पकड़कर, बोले वचन फणीश॥१८॥

श्री बलदेव-वचन चौपाई

तव कर कमल सुकोमल ताता। हार गये होवेंगे भ्राता॥
वत्स शयन करिये अब भाई। तुम सम अनुज कौन सुखदाई॥१९॥
सुत से अधिक अनुज को जोऊ। नहि जानत मूरखमति सोऊ॥
तांको यम नरकन में डारत। पुनरकल्प में नर तनु धारत॥२०॥

जहँ जहँ जन्म लेत जग सोई। शत उपाय कर तनुज न होई॥
कोटि तनय बान्धव भव माहीं। अनुज सहोदर के सम नाहीं॥२१॥

नारद-वचन दोहा

अग्रज के सुन वचन तब, तांकी कृपा निहार।
श्याम शयन करते भये, दाबत चरण कुमार॥२२॥
ब्रज बालन के सहित पुन, उठे राम गोपाल।
क्षुधा युक्त हो बाल तब, बोले वचन रसाल॥२३॥

बालक-वचन चौपाई

विपुल बाहु संकर्षण भ्राता। हे मुकुन्द अरि सूदन ताता॥
किंचित दूर यहाँ से प्यारे। ताल विपिन है नन्ददुलारे॥२४॥
ता कानन में फल बहु होई। पर धेनुक कर रक्षित सोई॥
सोउ असुर खरतनु बलवाना। तांके बांधव तास समाना॥२५॥
पशु पक्षी नर तहाँ न जावत। मनुजादन से अति डर पावत॥
मधुर सुगन्धित फल प्रिय जामें। इच्छा हो तो चलिये तामें॥२६॥

श्रीबलदेव-वचन चौपाई

जो तुमरे मन में अस प्यारे। कुछ यह दुर्घट नाहि हमारे॥
तुम हमको अतिप्रिय हो ताता। जो तुम कहो करें हम भ्राता॥२७॥
चलो तालवन प्रिय फल खावो। धेनुक से डर जनि उर पावो॥
विघ्न करेगा धेनुक जोई। बक अघ की गति लेगा सोई॥२८॥

नारद-वचन दोहा

अनुग अनुज युत राम तब, गये ताल वन तात।
निज भुज बल कर द्रुमन को, संकर्षण कंपात॥२९॥
पतित तरुन का शब्द सुन, आया असुर मलीन।
पश्चम पद को राम उर, मारत हीं हीं कीन॥३०॥
खरको पिछले पदन से, गह करके बलधाम।
घूम घुमाकर द्रुमन पर, मारत भा बलराम॥३१॥
तांके लगते बहुत तरु, गिरे धरित्रि मझार।
धेनुक खर तनु त्याग के, दिव्य देह को धार॥३२॥
तांके बांधव क्रोध कर, आये रण के हेत।
राम श्याम ने तास सम, मारे सब रण खेत॥३३॥
निज परिवार समेत तब, रामकृष्ण के पाद।
वंदन कर धेनुक असुर, बोला वचन हलाद॥३४॥

धेनुक-वचन सवैया

जय हो सुर नायक नागपते, जय हो यदुनन्दन विश्व अधारा।
पतिताधम जीव उधार लिये, महि में तुम धारत हो अवतारा।
तुम पूरण आनन्द रूप विभो, अनथा तनु धारण होत न थारा।
करुणानिधि दोउ सहोदर के, पद-पंकज होय प्रणाम हमारा॥३५॥

देव देव भृत भव भय भंजन। निज शरणागत जन मन रंजन॥
तव वर यश गावत जग जोई। जगत सिंधु को तरहै सोइ॥३६॥

विषय विलास गीत जो गावत। हम समान सो दुर्गति पावत॥
बलिसुत साहिस नाम हमारा। लौकिक गीतगान अति प्यारा॥३७॥

एक काल नारी गण साथा। गँधमादन पर्वत में नाथा॥
विषय-विलास गीत हम गाये। दुर्वासा सुन अति दुख पाये॥३८॥

भजन-विक्षेप जान मुनिनायक। बोले वचन दुष्ट भय दायक॥
दुर्मति सब तुम खर तनु धारो। नित प्रति हीं हीं शब्द उचारो॥३९॥

शाप श्रवण कर हम भय माना। मुनि के पद में वंदन ठाना॥
शाप अवधि कहिये मुनि राया। मैं अपराधि शरण तब आया॥४०॥

यदुकुल में जबही जगदीश्वर। तनु धारेंगे सहित फणीश्वर॥
मुक्त करेंगे तब युग भ्राता। पतित उधारक जो विख्याता॥४१॥

दुर्वासा मुनि भाखा जोई। कृपानिधान करा तुम सोई।
बांधव सहित स्वर्ग में जावूँ। अब तो तव यश को नित गावूँ॥४२॥

नारद-वचन दोहा

राम कृष्ण के चरण में, परम प्रेम तब धार।
कर प्रणाम पुन पुन सभी, गमने स्वर्ग मझार॥४३॥

मन भावत फल खायके, राम श्याम व्रजवार।
गोगण को ले साथ तब, गये स्वकीय अगार॥४४॥

दिवस विरह कर विकल मन, गोपी जननी तात।
राम कृष्ण के दर्स कर, भये प्रफुल्लित गात॥४५॥

रात्र यशोदा रोहिणी, करे विविध पकवान।
राम श्याम ने जेम कर, शयन करा मंचान॥४६॥

मास-पारायण सातवां विश्राम॥७॥

एक दिवस में राम बिन, वन में श्री गोपाल।
गोगण के चारण गये, साथ लिये व्रजबाल॥४७॥

यमुना के इक कुण्ड में, काली नाग निवास।
तांके विष युत कुण्ड जल, छूवत करत विनाश॥४८॥

आतप कर पीड़ित भये, ता जल को कर पान।
अबुध बाल पुन धेनु सब, हूये मृतक समान॥४९॥

निज पियूषवरवर्षिणी, दृष्टी कर गोपाल।
धेनु धेनुपालक सकल, जीवाये तत्काल॥५०॥

ता जल की निर्दूषता, कारण नन्द कुमार।
चढ़ कदम्ब पर कुण्ड में, कूद पड़े दुष्टारि॥५१॥

निज शत फण कर नाग ने, घेर लिये भगवान।
धेनू धेनुप देख कर, मूर्च्छित भये अजान॥५२॥

अपशगुनन को निरखके, नन्दादिक व्रजलोक।
प्राणनाथ गोपाल हित, करत भये अति शोक॥५३॥

नन्द-वचन चौपाई

प्राण परमप्रिय मम घनश्यामू। गोचारण गमने बिन रामू॥
तांको कष्ट भया कुछ आजू। यह अपशगुन जनात अकाजू॥५४॥
मोरे मन सुधीर नहि आवत। प्राण विकलभा तनु घबरावत॥
दाह हेत मम त्वक् में भाई। बिन सुत मम जीवन दुखदाई॥५५॥
जो जीवत निज सुत के पावूँ। दश सहस्त्र भूदेव जिमावूँ॥
दो सहस्त्र देवूँ गोदाना। कांचन देवूँ तनय समाना॥५६॥

नारद-वचन दोहा

नन्द यशोदा रोहिणी, गोपी गोप सराम।
गये निम्नगा तीर में, रुदन करत हित श्याम॥५७॥
धेनू धेनुप कृष्ण की, ब्रज जन दशा निहार।
उर ताड़न कर सर्वने, कीना हा हा कार॥५८॥

यशोदा-वचन चौपाई

कहाँ गये जननी तज ताता। तुम बिन किम जीवेगी माता।
वत्स लाल बल जावे मैया। बाहिर आवो सपदी भैया॥५९॥
नहि तो सहब्रज तव महतारी। डूबत अब इस कुण्ड मझारी॥
ऐसा खेल लाल किस काजा। जाकर मरत स्वबंधु समाजा॥६०॥

तुम बिन तव भ्राता दुखपावत। याके ढिग तुम क्यों नहि आवत॥
हे जगदीश्वर अन्तर्यामी। रक्ष रक्ष मम सुत को स्वामी॥६१॥

आरत भय भंजन भगवाना। तुम बिन मम रक्षक नहि आना॥
निज शरणागत जानो मोको। करूँ प्रणाम कोटिशत तोको॥६२॥

जो जीवत सुत को उर लाऊँ। तो भगवन् मन्दिर बनवाऊँ॥
तामें रुक्ममयी हरि मूरति। करहूँ स्थापन भूषण पूरति॥६३॥

नारद-वचन दोहा

प्रभु प्रताप को जानके, लौकिक मत अनुसार।
बोले अहिपति रुदन कर, जैसे प्राकृत बार॥६४॥

श्रीबलदेव-वचन चौपाई

हे मुकुन्द प्रिय आतम मेरे। मम बिन भोजन प्रिय नहि तेरे॥
अब क्यों भागो नहि बतरावत। वत्स लाल क्या हमें खिजावत॥६५॥

आज हमारे बिन तुम आये। माधव प्रिय इतने दुख पाये।
जो मैं जानत ऐसी ताता। क्षण भर तोको तजत न भ्राता॥६६॥

क्या करिये कुछ वश नहि मेरी। दुष्ट दैव ने मम मति फेरी॥
मत भय मानो कुमर कनाई। करूँ टूक शत अहि के आई॥६७॥

नारद-वचन दोहा

कर विलाप रामादि सब, करन लगे परवेश।
अहि सर में वृध गोप ने, रोके कर उपदेश॥६८॥

वृद्धगोप-वचन चौपाई

राम रोहिणी यशमति रानी। नन्दराज सुनिये मम बानी॥
मत डूबो धीरज उर धारो। जीवत आवेगा सुत थारो॥६९॥

उत्तम शगुन होत अब मोही। तुमरे सुत को भय नहि कोही॥
तृणावर्त अघ बकी बकासुर। तव सुत ने मारा वत्सासुर॥७०॥

इनसे अधिक बली नहि काली। जीतेगा इससे वनमाली॥
गुणकर हरि सम तव सुत होई। याको जीत सके नहिं कोई॥७१॥

गर्ग विप्र यह वचन उचारा। सो नहि मिथ्या होवन हारा॥
बिन विचार कृत कर है जोई। पाछे पछतावत जन सोई॥७२॥

तांते तुम उर धीरज धरिये। मोह विवश हो क्षिप्र न करिये॥
कुछक काल तुम देखो सारे। जो नहि आवें माधव प्यारे॥७३॥

तब कुछ मरणा दूर न होई। मन भावत करिये पुन सोई॥
सबको तव सुत असु सम प्यारे। या विधि प्राण तजेंगे सारे॥७४॥

नारद-वचन दोहा

वृद्ध गोप के वचन सुन, उर में धरकर धीर।
हरि मुख चन्द्र चकोर इव, देखत भये अभीर॥७५॥

बांधव गण को दुखित लख, करुणा निधि घनश्याम।
अहि के फण से निकस कर, अखिल कला के धाम॥७६॥

तांडव नृत करने लगे, तिनके फणन मझारि।
जो जो सीस उठात तब, तिसहि दबात अघारि॥७७॥

नृत्य देखकर श्याम का, नभ में सुर महिपाल।
बाजे विविध बजावते, भये देत स्वरताल॥७८॥

विश्वरूप के भार कर, पीडित भया भुजंग।
रुधिर तजत भा वदन से, शिथिल भये सब अंग॥७९॥

निज पति का दुख देख के, नागिनियाँ सह बाल।
नाग क्षेम हित कृष्ण के, चरण गिरी तत्काल॥८०॥

प्रभु के दर्श प्रभाव से, खुले हृदय के नैन।
मोह पटल सब दूर भा, बोली सुन्दर बैन॥८१॥

नागपत्नी-वचन हरिगीत छन्द

हम नमत तुमरे चरण भगवन्, पुरुष तुम परमातमा।
व्योमादि भूत अधार कारण, आदि रूप चिदातमा।
तुम ज्ञान पुन विज्ञान निधि, परब्रह्म शक्ति अपार हो।
तुम प्रेम हो निज प्रकृति को प्रभु, अगुण तुम अविकार हो॥८२॥

सृष्ट्यादि काल सुविज्ञ काल, स्वरूप काल अधार हो।
तुम विश्व द्रष्टा विश्व कर्ता, विश्व रूप अपार हो।
युग चार कारक रूप हो तुम, भूत इन्द्रिय-प्राण हो।
शब्दादि मात्रा चित्त मन मति, सर्व के तुम त्राण हो॥८३॥

नित त्रिविधगुण अभिमानकर जड़, जगत को आतम वरा।
इस जीव ने प्रभु याहि ते विज्ञान, तुम छादन करा।
सर्वज्ञ पुन कूटस्थ सूक्षम, अंत से हरि रहित हैं।
सर्वज्ञ किंचिद् विज्ञ आदिक, वादि तुमको कहत हैं॥८४॥

तुम निखिलवादी जनों के सब, वाद को परकाश हो।
जग नाम नामी भेद कर प्रभु, बहुत रूप प्रभास हो।
नयनादि करण प्रमाण जो, तुमरी अपेक्षा सब करें।
निरपेक्ष ज्ञानी आपको, तव श्वास श्रुतियां ऊचरें॥८५॥

मति वृत्ति कर उपलक्ष्य हो नहि, वस्तु तो तुम गोचरम्।
तुम चित्त साक्षी मति प्रकाशक, आपसे नहि को परम्।
अवितर्क्य महिमा नाथ तव सुर, सिद्ध योगी को कहे।
हम नमत प्रभु के पाद युग विधि, आदि मुनि ने जो गहे॥८६॥

निश्चेष्ट बी इस जगत के जनि, आदि को तुम करत हो।
निज दृष्टि करके प्रकृति गुण से, काल शक्ती धरत हो।
सब जन्यवर्ग स्वभाव के, अनुसार सृष्टी विस्तरो।
तुमरा अमोघ विहार हरि, निज तंत्र जग क्रीड़ा करो॥८७॥

यह शांत घोर अशांत तनु, त्रैलोक में जो भास है।
सो सर्व तुमरे देह स्वामी, अखिल में तव वास है।
प्रभु तदपि तुम को शांत प्रिय है, रज तमो नहि भावते।
अब संत रक्षा हेतु तुम तनु, धार धर्म बढ़ावते॥८८॥

चौपाई

इस अपराधी को जो दीना। दण्ड आपने सो भल कीना॥
खल निग्रह हित तव अवतारा। रिपु सुत में नहि भेद तुमारा॥८९॥
तदपि कर्म के फलहि विचारी। खलका दमन करो असुरारी॥
सो हम कृपा आपकी जोवत। दण्ड दुष्ट के कल्मष धोवत॥९०॥
जास कर्म कर अहि तनु पाई। छूटा यह तासों यदुराई॥
सत्पुरुषन का ताडन जोई। सोउ अनुग्रह के सम होई॥९१॥
इसने पूरव को तप कीना। आप अमान मान पर दीना॥
सब पर दया धर्म वा कीया। जाकर भा प्रसन्न जग पीया॥९२॥
तव पद रेणु सपर्शन जोऊ। नहि जाने किसका फल सोऊ॥
जाकी बांछा कमला करहै। त्याग काम चिर व्रत तप धर है॥९३॥
तव पद रज को पावत जोऊ। चहे स्वर्ग अपवर्ग न सोऊ॥
भू पाताल विधि लोक न लेवे। योग सिद्धि को नहि पुन सेवे॥९४॥
क्रोधी तमजनि यह अहि नाथा। पर दुराप रज पाई माथा॥
भ्रमत शरीरी इस संसारे। वांछित विभव जास कर धारे॥९५॥
जो अपराध दास से होई। एक बार सह स्वामी सोई॥
यह मूरख प्रभु को नहि जाने। शांतातम क्षिमिये अपमाने॥९६॥
करो अनुग्रह अन्तर्यामी। प्राण तजत है पन्नग स्वामी॥
हम अबला करुणा के लायक। पती प्राण देवो सुरनायक॥९७॥
हम पर आज्ञा हो सो करिये। निज दासी कर हमको वरिये॥
तव अनुशासन करहै जोई। मुक्त होत सब भय से सोई॥९८॥

नारद-वचन दोहा

नाग नारिका स्तवन सुन, याविध हरि मिथिलेश।
पद प्रहार कर भग्न शिर, अहि को तजा सुरेश॥९९॥

लब्ध प्राण इन्द्रिय उरग, कष्ट श्वास ले दीन।
हस्त जोड़ कर कहत भा, हरि को वचन प्रवीन॥१००॥

कालियनाग-वचन चौपाई

हम स्वभाव से दुष्ट गुसांई। तामस दीरघ क्रोध करांई॥
दुस्त्यज नाथ स्वभाव बखाना। जाकर जगको तनु अभिमाना॥१०१॥

तव कर रचित विश्व यह धाता। गुणकर विविध रूप दिखलाता॥
बीजाशय वीरज आकारा। ओज स्वभाव योनि विस्तारा॥१०२॥

हम भगवन् तिस सृष्टि मझारी। भुजग जाति कर क्रोधी भारी॥
हम दुस्त्यज माया कर मोहे। कैसे तिसका त्यागन होए॥१०३॥

तामें तुमही कारण स्वामी। जगदीश्वर सर्वान्तर्यामी॥
करो अनुग्रह निग्रह कोई। जो प्रभु के मन भावत होई॥१०४॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

तुमको यहाँ निवास न योगू। यह जल पीवत गो मृग लोगू॥
निज ज्ञाती सुत दार समेता। सपदि सिन्धु में करो निकेता॥१०५॥

तुमको मम अनुशासन जोई। इस गाथा को सुनहै कोई॥
उभ संध्या में पढहै यांको। भय नहि देना तुमने तांको॥१०६॥

स्नान करेगा यामें जोई। जल कर तर्पण कर है कोई॥
व्रतधर जो मम पूजन करहै। सर्व पाप से सो निस्तरहै॥१०७॥

कालियनाग-वचन चौपाई

कैसे गमनूं जलधि मझारी। मैं हूँ खगपति का अपकारी॥
सरसे बाहिर जावूँ जोई। वैनतेय खावेगा मोई॥१०८॥
एक समय तिस अहि बहु खाये। तब हम तिसको वचन सुनाये॥
उरग खायगो याविधि जोई। भुजग जगत में रहे न कोई॥१०९॥
तब तिस करुणा कर यदुराई। मास मास पर बलि ठहराई॥
निज निज अवसर सब बलि देवें। गरुत्मान तिस बलि को जेवें॥११०॥
जब बलिकी मम बारी आई। तब मैं तिससे करी ढिठाई॥
विष वीरजका मैं अभिमानी। पन्नगारि की भय नहि मानी॥१११॥
सो तिसकी बलि मैं सब खाई। मोपर कुपित भये खगराई॥
तब तिसने मोसे मृदु ठाटा। दशनन से तिसको मैं काटा॥११२॥
तहाँ क्रोध कर वाहन थारा। वाम पक्ष कर मोको मारा॥
विह्वल हो तब मैं उठ धाया। कालिन्दी के ह्रद में आया॥११३॥
यहाँ न आवत शकुनी राया। सौभरि मुनि के शाप डराया॥
यहाँ एक दिन तिसने मारा। जलचर को मुनि बहुत निवारा॥११४॥
द्विज का कहा न तिसने कीना। झटिती झष भक्षण कर लीना॥
जल जीवन के देख दुखारा। सौभरि ऋषि ने शाप उचारा॥११५॥

यहाँ आयगो हरि रथ जोई। सत्य कहूँ तांकी मृति होई॥
मैं जानूँ यह नाथ प्रसंगा। जाने नहि जग और भुजंगा॥११६॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

रमणक दीप जास भय त्यागा। इस सर में तू बसने लागा॥
मम पद लांछित लखकर तोही। नहि खावेगा अहिभुक् सोई॥११७॥
निर्भयता हम देवें जाँको। दे न सके भय सुरपति तांको॥
वात चलत नित मम भय मानी। तपत दिनेश अनल भय ठानी॥११८॥
चन्द्र बिडौजा भय उर धारत। मम भय मृत्यू प्राण निकारत॥
करे न तट लंघन रत्नाकर। महि नहि मज्जत मम भय पाकर॥११९॥
मम अनुशासन अग जग धारा। उरगाशन यह कौन विचारा॥
तांते निर्भय फणिपति जावो। तुम सुपर्ण से जनि भय पावो॥१२०॥

नारद-वचन दोहा

सुनकर वचन दयालु के, नागिनियाँ तत्काल।
हो प्रसन्न पूजत भयीं, श्री:-पति को महिपाल॥१२१॥
दिव्य गन्ध अनुलेप मणि, महती उत्पल माल।
स्रक अमोल भूषण वसन, पहराये गोपाल॥१२२॥
कर प्रदक्षिणा कृष्ण पद, पंकज पुन पुन लाग।
गया जलधि के दीप में, दार तनुज युत नाग॥१२३॥

बाहिर आये कृष्ण को, लखकर व्रज गोपाल।
लब्ध प्राण सम मुदित मन, कंठ लगे तत्काल॥१२४॥

नन्द यशोदा रोहिणी, बार बार उर लात।
गद् गद् उर रोमांच तनु, स्त्रवत नयन जल जात॥१२५॥

भुज पसार बलभद्र ने, कण्ठ लगाये श्याम।
प्रभु प्रताप को जानकर, हँसत भये तब राम॥१२६॥

खग मृग नग गोवत्स वृष, भये प्रफुल्लित गात।
क्षुध तृष श्रम युत गोप गो, तहाँ वसे सो रात॥१२७॥

अर्ध रात्र में शुष्क वन, अनल लगा तिस ठौर।
सुप्त भये ब्रज जनन को, घेर लिया सब और॥१२८॥

जलन लगे जब उठ खड़े, संभ्रम से सब भूप्र।
लगे पुकारन कृष्ण को, जो माया नररूप॥१२९॥

गोपीगोप-वचन चौपाई

कृष्ण कृष्ण बड़ भाग अघारी। राम राम अतुलित बलधारी॥
वन का घोर हुताशन जोऊ। तव बन्धुन को जारत सोऊ॥१३०॥

दुस्तर काल अनल से पाही। निज सुहृदन को हम बल जाही॥
निर्भय तव पद को हम ताता। त्याग करण को शक्त न भ्राता॥१३१॥

यशोदा-वचन चौपाई

हे हुतभुक् सुन अरज हमारो। भले देव हमको तुम जारो॥
रामश्याम शिशुयुग चिरजीवो। शिखि भगवन् इनको मत छीवो॥१३२॥
बल मुकुन्द बल जावे मैया। उग्र दहन से भागो भैया॥
जोउ सजीव रहे हम ताता। देखेंगे तव मुख जलजाता॥१३३॥

नारद-वचन दोहा

विकल देख निज जनन को, अमित शक्ति भगवान।
दावानल को जगत पति, करत भये तब पान॥१३४॥
देख मुदित मन सब भये, आगे कर बल-श्याम।
गुण गावत गोपाल के, गये आपने धाम॥१३५॥
तब सुनकर महिदेव सब, आये दार समेत।
देत बधाई नन्द को, पुन पुन आशिष देत॥१३६॥

विप्र-वचन चौपाई

नन्द अनन्द भया अति भारी। तुम सम धन्य न लोक मझारी॥
वासुदेव तव तनय प्रतापी। इन मारे बहु निशिचर पापी॥१३७॥
पुण्य पुंज वन तव अब विकसा। कालिय काल ग्रास से निकसा॥
तवसुत तिस हित दान करावो। क्षिति देवन को गोप जिमावो॥१३८॥
सुत प्रतापकर तव दुख गयहू। दावानल से छूटत भयहू॥
सुरभिन से सुतको अनह्वावो। तुलादान इनसे करवावो॥१३९॥

नारद-वचन दोहा

तनय अतुल सुख हेत तब, नन्द दिये बहु दान।
भोजन भूषण भर भवन, भग भगवान समान॥१४०॥

कवि-वचन दोहा

एक समय में गोपिका, गमनी यमुना पार।
कुछ कृत हित लौटी पुना, सायंकाल निहार॥१४१॥
बिन नाविक बिन नाव के, कैसे उतरें पार।
निर्जन में भययुत भयीं, प्रभु से करी पुकार॥१४२॥

गोपी-वचन हरिगीतिका छन्द

हे देव देव दयालु हमरा, आप बिन नहिं को हरे।
कुछ यत्न बनत न नाथ हमसे, पार हमको को करे।
निश तिमिर निरख अरण्य को बिन, बंधु हमरा मन डरे।
हम शरण तुमरी शरणवत्सल, शरणजन जलनिधि तरे॥१४३॥
जिस हेत हम इस विपिन आईं, कर्म सो कुछ नहिं भया।
वन कुसुम विकसित निरखकर यह, दिवस सब निष्फल गया।
हा हा हमारे सम न मूरख, भवन प्रिय पति तज दिया।
जिन प्राणनाथ प्रसाद के हित, साथ हम कुछ नहिं लिया॥१४३॥
अब कौन विध हम भवन गमने, प्राणपति को पाव हैं।
हम विमुख हैं निज नाथ से किम, वदन ताहि दिखाव हैं।

पति परम करुणागार यद्यपि, दोष को न निहार हैं।
पर डरत हम निज कर्म से, अब आप का आधार हैं॥१४५॥

कवि-वचन दोहा

पतिव्रतवंती नारि की, सुनकर कृष्ण पुकार।
गमने नौका सहित तब, नाविक का तनु धार॥१४६॥

भयीं मुदित मन गोपिका, नाविक नाव निहार।
विनय करी कर जोर के, बोलीं वचन उदार॥१४७॥

गोपीवचन राधिका छन्द

सुन नाविक करुणागार, विनय अब मेरी।
तुम करिये हमको पार, शरण हम तेरी।
इस हेत तोर अवतार, तोर हम चेरी।
भय व्याकुल हृदय हमार, करो मत देरी॥१४८॥

हे कर्णधार करतार, तोर मति प्रेरी।
इस अवसर जो जलधार, आय तुम हेरी।
तुम तारे बहु नर नारि, श्रवण कर टेरी।
अब क्यों कर हो बहु वार, हमारी वेरी॥१४९॥

श्रीकृष्ण-वचन दिक्पाल छन्द

अब करत पार तुमको, डरिये न गोपनारी।
मैं तरणि त्रय लिआया, द्रुत टेर सुन तुमारी।

इक सुमति विमति दूजी, पुन कुमति तरि हमारी।
जन बैठ सुमति माँहि, द्रुत होत सरित पारी॥१५०॥

नाविक न साथ जावे, ऐकैक सब पधारी।
पुन विमति में बिठाके, हम बहुत युवति तारी।
दृढ़ नाव युगल जानो, न तिनें डुलात ब्यारी।
मिल बहुत पुरुष बैठें, इस कुमति प्लव मझारी॥१५१॥

पर अदृढ़ तरणि यह है, इस मांही भरत वारी।
संशय प्रयुक्त तरि यह, तारे वा सरित डारी।
अब उडुप बीच बैठो, रुचि जास मांहि थारी।
यह नाव तीन भाखी, गुण दोष युक्त न्यारी॥१५२॥

गोपी–वचन सार छन्द

सुनिये नाविक वाक हमारी॥ टेक॥
हमको नाव चलान न आवत, अबला मृदु तनु वारी।
तांते सुमति तरणि नहिं बैठें, हम डरपोसन नारी।
छोड़ा जाय न साथ सखी का, कायर नारि उचारी॥१५३॥

ताते विमति नाव नहि चहिये, करत विछोड़ा दारी।
कुमति तरणि में हम सब बैठें, झटिती करिये पारी।
हिल मिल पार सकल हम जांगी, होवेंगी नहि न्यारी।
बंधु विरह नहिं होवत जामें, सो प्लव हमको प्यारी॥१५४॥

कवि-वचन दोहा

कुमति तरणि बैठी सकल, या विध कह ब्रजदार।
नाव चलाई तास ने, जन इच्छा अनुसार॥१५५॥
मोह विवश मूरख मती, कर्म करत अविचार।
कहा न मानत और का, पावत कष्ट अपार॥१५६॥
कंपित भा प्लव पवन से, भयी विकल मन नारि।
लगी डूबने नाव जब, हरि पै करी पुकार॥१५७॥

गोपी-वचन रेखता छन्द

शरण हम कौन की जावें, जोउ तुम तरणि डोबावें।
कौन पै बाल पूकारे, जनक जो तनुज को मारे।
प्रजा को नृपति जो लूटे, कहो नर कौन बल छूटे।
हरे जो द्रविण रखवारा, बचे किम द्रव्य आगारा॥१५८॥
प्राण जो जायगो मेरा, हास्य तो होयगो तेरा।
प्रतीती तोर भवमाही, करेंगे नारि नर नाहीं।
चढ़ेगा नाव नहिं कोई, वंश तव अंकयुत होई।
तात निज वंश अनुसरिये, कृपा कर पार द्रुत करिये॥१५९॥

श्रीकृष्ण-वचन सार छन्द

मोको क्यों तुम दोष लगाये॥ टेक॥
प्रथम तरणि के गुण अवगुण सब, मैंने भाख सुनाये।
मोह विवश हो तुम दृढ़ प्लव तज, इसमें बैठी आये॥

मूरख के मन बोध न होवत, जो विधि बहु समझाये।
देव वैद्य औषध क्या कर है, कुपथ रुग्ण जो खाये॥१६०॥

कुमति नाव नहि पार करेगी, क्यों दृढ़ पीठ बिछाये।
अब भी जो तुम समुझो गोपी, विमति बैठिये जाये।
एक एक को पार करूँगा, निश्चय बल्लव जाये।
साथ गमन के हठ को तजिये, भजिये राघव राये॥१६१॥

गोपी-वचन राधिका छन्द

तुम जिम किम नाविक राज, पार हम करिये।
निज वचन त्याग अपराध, हृदय नही धरिये।
हम मूढ़मती ब्रजनारि, कोप परिहरिये।
तुम अपनी ओर निहार, हमें निज वरिये॥१६२॥

सुन्दरी सवैया

करिये यदुनाथ सनाथ मुझे, अब आन पड़ीं प्रभु द्वार तुम्हारे।
अब और न ठौर रही जन को, बिन आप कृपानिधि दीन पुकारे।
मम पाप अनेक विचार विभो, परित्याग करो नहिं नन्द दुलारे।
तव नाम दयालु सुना हमने, निगमागम संत निरन्त उचारे॥१६३॥

कवि-वचन दोहा

माधव नाव लुटाय के, सब को तीर उतार।
विमति तरणि बैठाय के, इक इक कीनी पार॥१६४॥

गयी भवन में गोपिका, पति मिल अति सुख पाय।
पंथ विपिन का खेद तज, नाविक के गुण गाय॥१६५॥

उदासीन गोपाल ने, रचा द्वि अर्थक गीत।
निजपति हरि पद पाव सो, सुनत सुनात सप्रीत॥१६६॥

ज्ञान उपासन कर्म पुन, यह त्रय तरणी जान।
अधिकारी जन गोपिका, पति हरि करा बखान॥१६७॥

नदी अविद्या जगत् वन, इससे होवत पार।
नाविक गुरु की कृपा से, तांके चरण जुहार॥१६८॥

नारद-वचन दोहा

जो कोई इस ताल को, करे प्रेम कर गान।
असुर अनल अहिसे तिसे, राखेंगे भगवान्॥१६९॥

इति श्रीमत्परमहंसोदासीनशिरोवतंसस्वामिकार्ष्णिज्ञानदासशिष्येण
स्वामिकार्ष्णिगोपालदासाह्वेन विनिर्मिते गोपालविलासे
पूर्वविश्रामे गोचारणकालियदमनादिवर्णनं नाम षष्ठस्तालः
समाप्तः ॥६॥

शास्त्र परायण अठवाँ विश्राम

ॐ

श्रीवृन्दावनविहारिणे नमः।

अथ सप्तमस्तालः-७

श्लोकः

श्रीरामेण वने प्रलम्बमसुरं योऽघातयद्बालकान्
मुञ्जाग्नेश्च पशून् ररक्ष यदुपो योऽवर्णयद्वा ऋतून्।
गीतो यस्य महोत्सवो युवतिभिर्व्योमासुरं यस्त्वहन्
भूदेव्यन्नमथो चखाद सखिभिः कृष्णाय तस्मै नमः॥१॥

नारद-वचन दोहा

एक समय श्री कृष्ण जी, ग्रीषम ऋतू निहार।
कहत भये बलदेव सों, ऋतु के दोष विचार॥२॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

उष्मागम को निरखो ताता। जो जीवन को नाहि सुहाता॥
वंश विपिन को अनल जलावत। क्रोधी को जिमि क्रोध तपावत॥३॥

रविकर निकर तप्तअति कैसे। बिना बोध देही उर जैसे॥
नदी तड़ाग अल्प जल होई। जिम व्यसनी निज धन दे खोई॥४॥
तीक्षण पवन चलत नभ कैसे। अदयालू की वाणी जैसे॥
वल्ली बीरुध तृण शुष्काने। कामादिक जिम आतम जाने॥५॥
हरित प्रफुल्लित अर्क जवाशा। जिम कामी के उर कामाशा॥
व्योम विषे घन नहि दरसावत। जिम वैश्या गृह संत न जावत॥६॥
धूलि चढ़त किम व्योम मझारी। पतिशिर चढ़त उपेक्षित नारी॥
लागत प्यास अधिक अति कैसे। धन तृष्णा लोभी को जैसे॥७॥
याविध उष्मक सब दुख दाता। सब देशन में वर्त्तत ताता॥
तव निवास सों श्री यदुराई। यहाँ वसन्त सर्वदा छाई॥८॥
देखो झरने झरत अपारी। मन्द सुगन्ध शीत बहि ब्यारी॥
पंकज उत्पल कुसुम सुहावत। सरिता सर शीतल दरसावत॥९॥
लता वितान कुंजगृह शोभित। निरख मुनिन के मन अतिलोभित॥
सिकता कण कोमल सुखदाई। तटनी तट तृण तरल सुहाई॥१०॥
कोमल दूब हरित सुखदाई। अर्क अनिल का ताप बुझाई॥
भ्रमर मयूर विहग गण कूजत। मानों तव पद मारग बूझत॥११॥
कोकिल सारस कलरव करहैं। क्रीड़ा हेत मोर मन हरहैं॥
चलो खेलिये वन में जाई। संग सखा सब लियो लिवाई॥१२॥

नारद-वचन दोहा

याविध कहकर राम युत, साथ लिये सब बार।
वेणु बजावत धेनु ले, गमने विपिन मझार॥१३॥

विविध खेल सब खेलते, गावत नाचत भूप।
तब प्रलम्ब आया असुर, धरकर बल्लव रूप॥१४॥
तांको जानत भी प्रभू, यह खल असुर न बार।
तदपि स्व साथ खिलाव हैं, तांका मरण विचार॥१५॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

दो दल होकर खेलो प्यारे। देखें को जीतत को हारे॥
अर्ध हमारे पख में आवो। आधे आरज के पख जावो॥१६॥
खेल माहिं जो हारे भाई। जीत बार को सोउ उठाई॥
बट भांडीर विपिन में जोई। चड्डी की अवधी है सोई॥१७॥

नारद-वचन दोहा

निज विरचित तिस खेल में, हार गये गोपाल।
जीत युक्त को हार युत, लगे उठावन बाल॥१८॥
श्रीदामा को कृष्ण पुन, वृषभहिं भद्रकसेन।
खल प्रलम्ब बलराम को, लागे चड्डी देन॥१९॥
श्रीदामा को कृष्ण तब, पुन-पुन देत उतार।
चढ़न देत नहिं वो चढ़त, भयी परस्पर रार॥२०॥

श्रीदामा-वचन चौपाई

चड्डी देवो हमरी भाई। खेलन में किसकी ठकुराई॥
जो तुम ऐसा करहो भैया। अलग करो माधव निज गैया॥२१॥

अब तुम न्यारे खेलो जाई। क्यों तुम हमसे करो ढिठाई॥
जब तव जीत होत थी भैया। तब तुम कैसे तुरित चढैया॥२२॥

बहुत दिवस मम अवसर आया। चड्डी देते हमें खिझाया॥
चड्डी देत न क्यों रे कनुवां। पिटवे को चाहित तव मनुवां॥२३॥

ऐसे ही सब का तनु मामा। आज पड़ा मोसे तव कामा॥
नहिं छोडूंगा कोटि उपाई। चाहे जितनी कर चतुराई॥२४॥

नारद-वचन दोहा

या विध तांके कहत ही, कौतुक हित घनश्याम।
तिसके कर से छूट के, जाय छिपे बलधाम॥२५॥

असुर राम को ले गया, नियम विटपि से पार।
प्रकट करत भा रूप निज, सह न सका बल भार॥२६॥

सहित बीजरी जलद पर, जिम शोभित राकेश।
घन सम असुर सकंध में, शोभित राम नरेश॥२७॥

तांके शिर पर राम ने, मुष्टी मारी तान।
शीरण शिर महि में गिरा, तजत भया निज प्रान॥२८॥

राम सीस पर सुरन ने, सुमन वृष्टि तब कीन।
साधु साधु मुख से कहा, विविध आशिषा दीन॥२९॥

कंठ लगावें राम को, कृष्णादिक गोपाल।
करें प्रशंसा बहुत विध, हर्षित हो ब्रजबाल॥३०॥

दिव्य देह धर असुर तब, करके दंड प्रणाम।
हस्त जोड़ आगे खड़ा, बोला वचन ललाम॥३१॥

प्रलम्ब-वचन सवैया

जय राम रमापति पादनदी, जलशीतल शीकर केश भिगोई।
तब पाद सरोजनि सिंचत है, निज बोध लिये मुनि नायक कोई।
पुन योग कलाकर सीखन को, सुर सिद्ध यती तब सेवक होई।
निज भाग बड़े कर जानत हूँ, जिसके अब गोचर हैं फणि सोई॥३२॥

सहसात समुद्र महीधर के, यह लोक चतुर्दशका गण जोई।
सुर मानव दानव और बली, जिसके सिर में सम सर्षप होई।
रजताचल तुल्य तनू जिसका, दशसौ सिर हो तुम पन्नग सोई।
यह गौर मनोहर श्याम तनू, मम चित्त बसे प्रिय और न कोई॥३३॥

दुस्तर नाथ तुमारी माया। जिसने यह सब विश्व भ्रमाया॥
विषय वातकर हरिया लोका। दशदिश भ्रमता फिरत सशोका॥३४॥

कोटि उपाय करे जन कोई। बिन तव भक्ति मुक्ति नहि होई॥
तांकर अधिकारी है सोऊ। परकी वस्तु न हरहै जोऊ॥३५॥

इन्द्रिय हित पर धन जो हरता। मो सम नरक मांहि सो परता॥
मोर पिता हूहू गंधर्वा। राग रूप में मम अति गर्वा॥३६॥

विजय नाम मैं घ्राण अधीना। सुरभि हेत मम मन अति दीना॥
बाग बाटिका वन वन मांई। बिचरत रहा भ्रमर की न्याईं॥३७॥

यक्षराज के बाग मझारी। सुमन सुगन्ध मनोहर भारी॥
क्षेम चैत्ररथ की उरधारी। राज राज ने शाप उचारी॥३८॥
कुसुम यहाँ से लेगा जोई। असुर देह खल पावे सोई॥
अज्ञ भाव से मैं यदुराये। चैत्र विपिन से पुष्प चुराये॥३९॥
झटिती असुर देह मैं पाया। नर वाहन की शरण सिधाया॥
करी अर्थना पद धर माथा। शाप अवधि कह गुह्यकनाथा॥४०॥
शेष धरेंगे नर अवतारा। तब होवेगा मोक्ष तुमारा॥
याविध सुन कुबेर की वानी। कछुक धीर मैंने उर ठानी॥४१॥
तव करुणा सों पन्नग राई। पूरव तनु मैंने अब पाई॥
आज्ञा होय जनक गृह जावूं। अब नहि पर की वस्तु चुरावूं॥४२॥

नारद-वचन दोहा

या विध कहकर राम के, कल गुण करत उचार।
कर प्रणाम युग भ्रात को, गमना तात अगार॥४३॥
रामश्याम आदिक सभी, खेल लगे व्रज बार।
चरत चरत गो गण गया, मुंजारण्य मझार॥४४॥
धेनु दृष्टि जब नहि पड़ी, चिन्ता लगी अपार।
तिनके पदके खोजकर, खोजत भये कुमार॥४५॥
देख दूर से कृष्ण ने, बोली तब निज धेनु।
हर्षित हो बोलत भयीं, सुनकर प्रिय का वेनु॥४६॥

दैवेच्छा कर तिस समय, अग्नि लगा तिस ठोर।
विकल होय भागे सभी, राम-कृष्ण की ओर॥४७॥

बालक-वचन चौपाई

राम राम धेनुक - दुष्टारी। माधव कृष्ण मुकुन्द अघारी॥
हे बलवीर स्वजन सुखदाता। हे गोपाल महाबल भ्राता॥४८॥
दावानल हमको प्रिय जारत। रक्ष रक्ष व्रजपति हम आरत॥
कष्ट योग्य नहि बंधु तुमारे। नाथ परायण आप हमारे॥४९॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

मत भय मानो सखा हमारे। हम देखत को तुमको जारे॥
प्राण प्रिये तुम मोको ताता। तव दुख हमसे सहा न जाता॥५०॥
पुन जिनके आरज रखवारे। तिनको काल सकत नहि मारे॥
तुम सब नयन मूंदिये भाई। हम कृशानु सब देत बुझाई॥५१॥

नारद-वचन दोहा

जब तिन मूंदी आंख तब, पावक पिया मुरारि।
आ पहुँचे भाण्डीर पुन, देखा नयन उघारि॥५२॥
विस्मय होये गोप सब, कृष्ण प्रभाव निहार।
पुन पुन राम मुकुन्द को, मिलत सुभुजा पसार॥५३॥
वेणु बजावत धेनु युत, सायं काल विचार।
रामकृष्ण के सहित सब, निज निज गये अगार॥५४॥

एक दिवस गोपाल जी, वर्षा ऋतू निहार।
निज अग्रज को कहत भा, ऋतु गुण दोष विचार॥५५॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

वर्षा ऋतु यह परम सुहाई। उपजत जामें जीव निकाई॥
सजल जलदकर किम नभ प्रावृत। स्वाविद्या कर जिम जीवावृत॥५६॥
अष्टमास पीता महि वारी। सो अब रवि वर्षत जलधारी॥
नृपति प्रजा से जिमकर लेवत। पुन दुर्भिक्ष मांहि सो देवत॥५७॥
तप्तजनों को लख जलधारी। जग जीवन वर्षत है वारी॥
दयावान जब दुखी निहारत। जिम निज जीवन को बी डारत॥५८॥
वर्षा कर वसुधा हर्षाई। जिम सकाम तप का फल पाई॥
पादप पुष्ट भये हैं कैसे। गृह आश्रम धर वटु जन जैसे॥५९॥
चमकत निश खद्योत अपारा। तम आवृत नहिं दीसत तारा॥
जिम पाखंड बढ़त कलिमांही। वेद पंथ को जानत नाहीं॥६०॥
नभ में जब गर्जत हैं बादर। तिनका रव सुन कूजत दादर॥
जैसे गुरू वदन से सुनकर। वटु जन घोषत श्रुति को ध्वनिधर॥६१॥
अल्प नदी घन जलको पाई। चलत कुपंथ न निज मग जाई॥
जिम मूरख पर-धन को पावत। श्रुतिमग त्याग अधममग जावत॥६२॥
विपुल सफल खेती को जोई। कर्षक उर प्रमोद अति होई॥
धनवंता मानव दुख मानत। दैवाधीन न जोऊ जानत॥६३॥

धारापात सहें नग कैसे। काम वेग को योगी जैसे॥
जल थल जीव विशदतनु होये। जिम तव सेवा कर नर सोहे॥६४॥

सागर सरिता संगम पाई। पवन प्रसंग क्षुभित अधिकाई॥
काम वासना युक्त कुयोगी। विषय पाय जिम होवत भोगी॥६५॥

तृण कर छादित धरणी होई। पंथ कुपंथ न दीसत कोई॥
जिम अभ्यास करे नहिं कोऊ। निगम अर्थ का भान न होऊ॥६६॥

जगत् सुहृद जलदन के माहीं। थिर निवास विद्युत का नाहीं॥
गुणी पुरुष में भी खल नारी। जैसे अचल प्रीति नहिं धारी॥६७॥

घन आगमन देख कर मोरा। शब्द करत उर मोद न थोरा॥
यथा विरक्त गृही हर्षावत। जब तव संत सदन में आवत॥६८॥

कंटक पंक युक्त तट सर में। सारस वास करत तिस घर में॥
नाना दुखद कर्म बहु जामें। जिम भोगी वस है गृह तामें॥६९॥

सफल वृक्ष प्रिय लागत ताता। तोर भक्त जिम सर्व सुहाता॥
थिर निवास भा मुनि जन कैसे। योग भये इन्द्रिय गण जैसे॥७०॥

जामुन बेर फालसा केरा। पके खजूर हरत मन मेरा॥
देखत मारग तोर कुरंगा। बालक धेनु लीजिए संगा॥७१॥

नारद-वचन दोहा

गोप राम गो युक्त हरि, गमने गहन मझार।
लता वितान निकुंज में, विचरत भये कुमार॥७२॥

यमुना जल के तीर में, ग्वाल मण्डली साथ।
दधि ओदन फल मूल का, भोजन कर यदुनाथ॥७३॥
सायंकाल निहार कर, चले बजावत वेनु।
क्षीराशय के भार कर, चल न सकत हैं धेनु॥७४॥
तृप्त भयी उगलत चलत, स्रवत स्तनन से क्षीर।
हर्षित हो सपदी चलीं, जब बोलीं यदुवीर॥७५॥
मात यशोदा रोहिणी, भोजन विविध बनात।
मग देखत थीं कृष्ण का, कब आवें युग भ्रात॥७६॥
राम श्याम गृह जायके, धेनुन खिरक बंधाय।
हस्त पाद प्रक्षाल कर, मात तात सिर नाय॥७७॥
युग भ्राता भोजन करत, शोभा वरणि न जाय।
आप शयन करने लगे, पायस पूरी खाय॥७८॥

साप्ताहिक पारायण द्वितीय विश्राम॥२॥

कुछ दिन पाछे शरद् ऋतु, देख कृष्ण व्रजनाथ।
कहते भये बलभद्र को, अति आदर के साथ॥७९॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

देख तात यह शरद सुहाई। स्वच्छ अनिल जल बिन उदवाही॥
वसुधा पंक शुष्क भा कैसे। तव भक्ती कर अघगण जैसे॥८०॥

प्रावृट में जोई मल धारी। तांको तज निर्मल भा वारी॥
भ्रष्ट योग से जिम मुनि कोई। पुनर्योग कर योगी होई॥८१॥
घन तज कर निज सर्वस वारी। निर्मल भया शुक्ल तनुधारी॥
सुत वित लोक एषणा त्यागी। जैसे शोभित मुनि बड़ भागी॥८२॥
उदक हीन भा शैल निकाई। कहिं कहिं झरना देत दिखाई॥
कहुँ कहुँ ज्ञानी ज्ञान सिखावत। जिम जब अधिकारी को पावत॥८३॥
शुष्क होत जल मीन न देखत। जिम आयू क्षय मूढ़ न पेखत॥
किम शोभित ग्रहयुत शशधारी। जिम गोपन में शोभा थारी॥८४॥
जल चर जीव अल्प जल माहीं। अर्क ताप कर अति दुख पाहीं॥
अधन कुटुम्बी जन अविचारी। दुखी होत जिम धाम मझारी॥८५॥
शने शने कर धरणी खेती। पंक कचाई को तज देती॥
यथा अहंता ममता दोऊ। तजत देह में मुनिवर जोऊ॥८६॥
शब्द रहित थिर जल रत्नाकर। होवत शरद काल ऋतु पाकर॥
लौकिक वैदिक कृत नहिं ध्यावत। जिम ज्ञानी स्थिरता को पावत॥८७॥
दिनकर ताप तप्त तनु जिनके। शांत करत है निशपति तिनके॥
तनु अभिमानज ताप नसावत। जिम जब बोध हृदय में आवत॥८८॥
सहित विमलग्रह बिन धाराधर। सुषमायुत भासत प्रिय पुष्कर॥
जैसे सात्विक गुण युत चेता। शोभित अति श्रुति अर्थ समेता॥८९॥
यज्ञ विवाह विविध उत्सव कर। तवकर व्रजइव शोभित वसुधर॥
भयीं गर्भ युत गो मृगि नारी। यथा कर्म निज फल को धारी॥९०॥

उदयाचल में जब रवि आवत। कमल कुमुद बिन अति सुख पावत॥
यथा सुनृप के राज्य मझारी। बिन तस्कर नर होत सुखारी॥११॥
वणिजारे मुनि नृप व्रतचारी। बिन घन भये स्वतंत्र विहारी॥
तनु के ग्रहण त्याग में प्राणी। होत स्वतंत्र योगकर ज्ञानी॥१२॥
नहि गरमी नहि शरदी भाई। खेलन योग्य ऋतू यह आई॥
चलो विपिन की कांति निहारो। गो बालक मग देखत थारो॥१३॥

नारद-वचन दोहा

याविध कहकर राम को, बोल लिये सब बाल।
कानन में जावत भये, गो गण युत गोपाल॥१४॥
उत्पल युत सर आपगा, कुसुम युक्त उद्यान।
तहाँ बजावत वेणु को, गो चारत भगवान॥१५॥
मृग मयूर शुक कोकिला, वन के विहंग अपार।
वंशी की ध्वनि सुनत ही, इक टक रहे निहार॥१६॥
शब्द मनोहर वेणु का, सुनकर व्रज की दार।
प्रेम प्रफुल्लित उर कमल, करहैं विविध विचार॥१७॥

श्रीराधिका-वचन सुन्दरी सवैया

निज नेत्रन का फल पावत सो, जिसने व्रज के वन कुंज मझारी।
सहमित्र सहोदर धेनु चरावत, श्याम मुखांबुज कांति निहारी।

जिसके अनुराग कटाक्ष भरे, जिसके मुख में मुरली मनहारी।
तिस श्याम मनोहर साग्रज के, मुख पंकज पे हम हैं बलिहारी॥९८॥

ललिता-वचन चन्द्रकला छन्द

भव में सखियो इस वैणवने, तप पुण्य व्रतादिक कौन करे।
जिससे यह माधव के मुख के, अधरामृत का नित पान करे।
पय पान किया जिसका इसने, जिनके कुल में यह देह धरे।
सर पादप सों अति हर्षित हैं, जिम आरज के सुत भक्ति वरे॥९९॥

विशाखा-वचन

व्रजमंडल में यह कानन जो, क्षिति की उरु कीरति को विस्तारत।
जिसमें सह अग्रज माधव के, नित कोमल पाद सरोज पधारत।
मुरली जब बाजत है वन में, ध्वनि को सुनके तब मोर पुकारत।
फिर मोरन की ध्वनि को सुनके, वन के पशु अंडज मौन प्रधारत॥१००॥

चन्द्रकला-वचन मदिराछन्द

मित्रन के युत धेनु चरावत, वेणु बजावत श्याम जबी।
आतप का दुख देख बलाहक, छत्र धरें निज देह तबी।
गर्जन से प्रिय के गुण गावत, बूँद प्रसून ब्रसात कबी।
संत सुगंध स्वभाव यही, सुबढ़ावत हैं निजमित्र छबी॥१०१॥

चन्द्रानना-वचन कुन्दलता छन्द

पशुयोनि धरी पर धन्य मृगी, नित श्याम मुखांबुज कांति निहारत।
पति साथ प्रतीति विलोकनसे, ससहोदर वल्लभ को सतकारत।

वन मांहि विहंग मुनीश्वर हैं, हम चित्त विषे यह निश्चय धारत।
जिससे यह वेणु ध्वनी सुनके, निज नेत्र निमील न वाक उचारत॥१०२॥

प्रभावती-वचन मत्तगयन्दछन्द

ईश्वर दासन में यह उत्तम, श्री गिरिराज अनिंगन कोई।
राम मुकुन्द पदाम्बुज के तनु, पर्स भये अति हर्षित होई।
घास गुफा फल कंद कबंधन, से तिनको सतकारत जोई।
कृष्ण पदांकित है इससे नित, पूजन योग्य गुरू सम सोई॥१०३॥

कानन में नित धेनु चरावत, वेनु बजात जबी प्रिय सोई।
स्थावर जंगम के सम होवत, स्थावर के सम जंगम होई।
जंगम गो गति कुंठित होवत, वृक्षन के तनु नीर भिगोई।
गोप पती सुत राम पदाम्बुज की, महिमा यह चित्र न कोई॥१०४॥

चन्द्रावली-वचन सवैया

भव में सखि भाग बड़े सबसे, हमरे व्रज मंडल नाक मझारी।
अमरेंद्र उपेंद्र समान उभे, वसहैं बलराम मुकुन्द अघारी।
अनुजारि समूह विनाश करे, पुरुहूत समान बली हलधारी।
व्रजराज तनूज उपेंद्र सदा, सुर गोपन का प्रतिपालक प्यारी॥१०५॥

नारद-वचन दोहा

विपिन विहारी कृष्ण के, याविध व्रज की दार।
गुण गावत तन्मय भई, तनुकी सार विसार॥१०६॥

सन्ध्या में पुन लौटके, गृह आये जब बार।
राम श्याम की छबि निरख, पुन बोली इक दार॥१०७॥

गोपी-वचन कवित्त

मोरपक्ष सीस सोहे, देख कोटि काम मोहे,
कान में कनेर फूल, सुषमा अपारी है।
नटवर वेष दोऊ, नील पीत पट सोहू,
धेनु सखावृन्द युत वनमाला धारी है।
अधर पियूषकर, बेणुछिद्र पूरकर,
विपिन विहारकर, आये असुरारी है।
जोड़ी युग गौर श्याम, मानो दाशरथीराम,
भ्रात युत आये पर, साथ नहीं नारी है॥१०८॥

नारद-वचन सोरठा

वन हित उद्यत जान, एक दिवस में अनुज को।
बांधव हित उर मान, करा निवारण राम ने॥१०९॥

श्रीबलराम-वचन चौपाई

ऋतु हेमंत शिशर में ताता। वन खेलन जनि जावो भ्राता॥
जब तुम कानन में प्रिय जावत। जननी जनक महा दुख पावत॥११०॥
इन दिन में जंगल दुख भारे। सो मोसे सुनिये अब प्यारे॥
शीतल पवन देत दुख कैसे। मूढ़ दास दुख दायक जैसे॥१११॥

दूर करत नहिं शीत दिनेशा। अबुध देत नहि जिम उपदेशा॥
पंथ चलत पद फटत बिवाई। कपट करे जिम प्रीति फटाई॥११२॥
वर्षापात सहा नहि जावत। पापकर्म फल जिम नहि भावत॥
यमुना से नर डरत अभागी। जिम ज्ञानी से कर्मी रागी॥११३॥
गृह निवास प्रिय लागत कैसे। तव दर्शन सज्जन को जैसे॥
स्थूल शाटिका लगत सुहावन। जिम विरक्त को भिक्षा पावन॥११४॥
अन्न लाय संग्रह जन धरहैं। सुजन सुकृत संचय जिम करहैं॥
उष्ण अन्न प्रिय लागत कैसे। हरि भक्तन को हरिपद जैसे॥११५॥
नित वसन्त है हेत तुमारे। पर नहिं जानत बन्धु हमारे॥
तव अनुगामी अथवा जोई। ऋतु के दुख नहि पावत सोई॥११६॥
धेनु चरावेंगे भृत थारे। वन में बाल न कोउ पधारे॥
लौकिकमत को हृदय विचारी। तुमको भाखा हम असुरारी॥११७॥

नारद-वचन दोहा

अग्रज के सन्मान हित, दोनों ऋतु घनश्याम।
गृह समीप खेलत भये, सहित सखा बलराम॥११८॥

मास पारायण नवम विश्राम॥९॥

होरी के दिन निरख के, बोल लिये ब्रजवार।
पिचकारिन से पुष्प जल, रंग परस्पर डार॥११९॥

सार छन्द

होली खेलत राम मुरारी॥ टेक॥
दोनों दल में बाल सखा बहु, कर कांचन रंग झारी।
कोउ अबीर गुलाल उड़ावत, को मारत पिचकारी।
झांज मजीरा कोउ बजावत, को ढोलक करतारी।
कटि पट फैंट कसी सब बालक, सिर चीरा जरदारी॥१२०॥

कोकिल कण्ठ कुमार राम हरि, गात गीत मनहारी।
वदन लगात गुलाल परस्पर, उत्सव हर्ष अपारी।
करत विनोद फिरत बीथिन में, मुदित भयी ब्रज सारी।
स्वेद बिन्दु आनन में शोभित, पद्मपत्र जिम वारी॥१२१॥

तास समय रंग भीजे हलधर, केशव की छबि न्यारी।
निरखन हित नर इकठे हूए, निरखत नारि अटारी।
राम मुकुन्द मुखांबुज लखकर, तृण तोड़त व्रज नारी।
याविध स्वजन सुखद करुणानिधि, संकर्षण गिरिधारी॥१२२॥

धन्य भाग तिनके जिनने, यह जोड़ी युगल निहारी।
धिक्धिक् तिनको, लगत न जिनको, माधव लीला प्यारी।
ब्रज महिमा को वरणे जिनके, मित्र पुत्र कंसारी।
रामश्याम विधु वदन विशद द्युत, गोपालक बलिहारी॥१२३॥

स्वांग बनाये सुरन के, तिनके गुण गण गात।
अतर अबीर गुलाल पुन, नाना रंग उड़ात॥१२४॥

ऋतु वसन्त को निरख कर, दामोदर हर्षाय।
रौहिणेय को कहत भा, ऋतु के धर्म सुनाय॥१२५॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

देखो तात वसंत सुहावन। सुन्दर सुखद मनोहर पावन॥
त्रिविध समीर चलत अब कैसे। तव संतन की वाणी जैसे॥१२६॥

नवपल्लवयुत शोभित नग किम। धर्मी शोभित धर्म युक्त जिम॥
कुसुम युक्त विटपी प्रिय कैसे। भक्ति युक्त तव मानव जैसे॥१२७॥

शोभें सरसप के द्रुम फल किम। शोभित योग सहित ज्ञानी जिम॥
यव आदिक कैसे पक आये। यथा अदृष्ट पकत तनु पाये॥१२८॥

जोईं तनु के अति सुख्यारे। सोबी वांछित पन्थ पधारे॥
ज्ञानी पुरुष कृत्य कृत जोई। श्रुति मारग चलहै जिम सोई॥१२९॥

भ्रमण बसंत मांहि पथ माना। भव रोगी को जिम तव ध्याना॥
शीत उष्ण युग सम हैं कैसे। सुख दुख ज्ञानी को जैसे॥१३०॥

कूजत कोकिल कीर सुहावन। तव गुण गान यथा जग पावन॥
सब विधि अब वन मांहि सुपासू। बहुत दिवस गृह कीन निवासू॥१३१॥

नारद-वचन दोहा

अग्रज की मरजी निरख, धेनु बाल ले साथ।
चले सहोदर सहित तब, कानन में व्रज नाथ॥१३२॥

तहाँ खेल खेलत भये, कोउ बने तब मेष।
कुछ पालक कुछ चोर पुन, याविध करके वेष॥१३३॥
व्योमासुर तब आयके, चोरन में मिल तात।
मेष बने थे बाल जो, मय सुत तिनें चुरात॥१३४॥
शैल गुफा में जा रखे, आगे शिल धर दीन।
पकड़ लिया तब कृष्ण ने, साचा तस्कर चीन॥१३५॥
बलकर महि में पटकिया, निकसे तांके प्रान।
दिव्य रूप को धार कर, कहत भया निज ब्यान॥१३६॥

व्योमासुर-वचन तोटक छन्द

जय कृष्ण कलेश निवारक जू। जय दानव दुष्ट संघारक जू॥
जय भक्त समूह उधारक जू। जय वैदिक धर्म प्रचारक जू॥१३७॥
जय विश्वस्वरूप नृभूप हरे। जय माधव मायिक वस्तुपरे॥
जय साग्रज श्यामल गौरतनूँ। जय दूर करा मम दुष्टजनूँ॥१३८॥
हे सुरपूज्य जगत् के स्वामी। हे पूरण सर्वान्तर्यामी॥
तुम सम तव भक्तन को जोई। नहि जानत मूरख जन सोई॥१३९॥
मम समान दुर्गति को पावत। चाहे धर्म समुद्र कहावत॥
भूप भीमरथ मम भा नामू। काशीपुरी मांहि विश्रामू॥१४०॥
यज्ञ कर्म गो आदिक दाना। कीने तहाँ सहित अभिमाना॥
राज्य सौंप कर सुतके तांहीं। करा वास मलयाचल मांहीं॥१४१॥
बहुत वर्ष तब तप मैं कीना। पूरण तपसी निज को चीना॥
मम आश्रम पुलस्त्यमुनि आया। तिसको मैं नहिं सीस नवाया॥१४२॥

तब द्विज ने यह शाप बखानी। दैत्य देह धर हे अभिमानी॥
हम भयकर मुनिपद सिर राखा। त्राहि त्राहि यह मुख से भाखा॥१४३॥
करुणाकर द्विज वचन उचारा। द्वापर में हरि का अवतारा॥
होवेगा सुन आशिष मेरी। मुक्ति करेंगे सो हरि तेरी॥१४४॥
विप्र कृपाकर श्री यदुराया। दुर्लभ देव दर्स तव पाया॥
अब आज्ञा होवे सुरनायक। देव धाम जावूं सुखदायक॥१४५॥

नारद-वचन दोहा

राम-कृष्ण पद वंद्य कर, गमना अमर अगार।
गो बालन को साथ ले, कृष्ण गये निज द्वार॥१४६॥

सुनो भूप तव पुण्य महाना। कृष्ण कथा सुन हो रति ठाना॥
शरद ऋतू में गोप कुमारी। हरिलीला सुन देख अपारी॥१४७॥
मुग्ध भई थीं तब सब भाई। हेम ऋतू तद पाछे आई॥
मारगशीरष में सुन ताता। हरिवर हित व्रत धरा सुहाता॥१४८॥
कात्यायनि देवी जो ख्याता। नन्दघोष की कन्या व्राता॥
करन लगीं व्रत पूजन प्राता। हविष्यान्न केवल जिन भाता॥१४९॥
भानु उदय से पूरव काला। कर लेतीं मज्जन गण बाला॥
यमुना के तट सकल कुमारी। सिकता की कर मूरति प्यारी॥१५०॥

चन्दन पान कपूर फल, पुन फूलन के हार।
धूप दीप नैवेद्य से, पूजन करें अपार॥१५१॥

महामाये कात्यायनि, महायोगिनी मात।
अखिल विश्व की स्वामिनी, विनय सुनो भवत्रात॥१५२॥

नन्द सुवन जगदीश्वर जोई। करो पती हमरा तुम सोई॥
नमस्कार तव चरण मझारे। करें ग्राम हम करुणागारे॥१५३॥

करत जाप इस मन्त्र का, सकल कुमारी भूप।
पुन देवी पूजन करा, उर धर श्याम स्वरूप॥१५४॥

एक मास कन्या व्रत कीना। कृष्ण विषय जिनका मन लीना॥
प्रतिदिन निकर सखी उठ प्राता। दूसर प्रति इक लेत बुलाता॥१५५॥
गहिकर अखिल परस्पर हाथा। जावत थीं उर धर यदुनाथा॥
अन्त दिवस में सुनहु सुजाना। योगीश्वर ईश्वर भगवाना॥१५६॥
सर्व कुमारिन की उर आसा। जान हृदय प्रभु भयो हुलासा॥
ग्वाल बाल हरि वृन्द बुलाये। सुन प्रभु वचन तुरत चल आये॥१५७॥
ग्वाल बाल संग लिये घनेरे। सफल करन हित व्रत सब केरे॥
यमुना तट पर जाय कन्हाई। चीर सबन के लिये उठाई॥१५८॥
कदम एक पर नन्द दुलारे। तुरत चढ़े गहि बसन अपारे॥
हँसने लगे परस्पर सारे। स्वयं हँसत हुए वचन उचारे॥१५९॥

श्रीकृष्ण-वचन दोहा

इच्छा हो तो कन्यका, यहाँ आयकर धीर।
अपने-अपने वसन को, ले जाओ तुम बीर॥१६०॥

सत्य सत्य तुमसे कहुँ नारी। हँसी करत नहिं तुम सन प्यारी॥
व्रत करते तव कृश तनु होय। हँसी योग्य क्या तुम सब कोय॥१६१॥

जानत यह गण सखा हमारे। मैं कबि प्रथम न झूठ उचारे॥
सुनो सुन्दरी बात हमारी। करो सोई जस रुची तुमारी॥१६२॥

इच्छा सहित चीर ले जावो। भिन्न भिन्न वा मिलकर आवो॥१६३॥

नारद-वचन चौपाई

देख हँसी यह प्रभु की बाला। भरे प्रेम से हृदय विशाला॥
हँसन लगीं सकुचाकर प्यारे। एक दूसरी ओर निहारे॥१६४॥

वह नहिं जल से बाहर आई। देखत रति युत वदन कन्हाई॥
इस विधि हँसत कहा हरि जबहीं। कृष्णाधीन भया मन तबहीं॥१६५॥

शीत नीर में गल तक प्यारे। डूब रही थीं गोप कुमारे॥
थर थर कम्प रही जब भारी। तब प्रभु को यह वाक उचारी॥१६६॥

व्रजकुमारी-वचन चौपाई

अस अनीति जनि करो सुप्यारे। जानति हैं तव नन्द दुलारे॥
व्रजवासी सब ही नर नारी। करत शलाघा बहुत तुमारी॥१६७॥

कंप भंयो अति देह मझारे। देहि वसन तुम हमरे प्यारे॥
श्याम सुन्दर तव दासी होई। जो कुछ कहो करेंगी सोई॥१६८॥

हे धर्मज्ञ सर्वज्ञ विभु, दीजे वसन हमार।
नहिं तो जाकर कहेंगी, नृपसों मरम तुमार॥१६९॥

नारद-वचन चौपाई

सुन अस वचन सखिन के भूपा। बोले वचन उदार अनूपा॥१७०॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

सुनो घोष की निकर कुमारी। तुम सम और न कोउ उदारी॥
यदि तुम मम दासी निज जानो। पुन पालन करना वच मानो॥१७१॥
तुमरा हँसना बोलन जोई। प्रेम भरा पुन पावन सोई॥
यहाँ आय तुम वस्त्रन लीजो। मम वच मान सकुच तज दीजो॥१७२॥

नारद-वचन चौपाई

सर्व कुमारिन कातब ताता। शरदी से कंपत था गाता॥
सुन प्रिय के अस वचन सुहाये। हाथन से निज अंग छिपाये॥१७३॥
जमुना से जब बाहिर आई। सरदी ने तब बहुत सताई॥
उनके शुद्ध भाव से प्यारे। भये मुदित अति करुणागारे॥१७४॥

तिनकी देख पवित्रता, उनके वसन सुरेश।
निज कन्धे पर रख लिये, जब श्रीकृष्ण नरेश॥१७५॥

अति प्रसन्नता से तब प्यारे। हँसते हुए यह वचन उचारे॥१७६॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

अरी गोपिका नियम तुमारा। भली भांति भा पूरण सारा॥
पर तुम होकर वसन विहीना। यमुना-जल में मज्ञन कीना॥१७७॥

इस कारण जल देव का, पुन यमुना अपराध।
भयो सुनो तुम सर्व ही, घोर नियम का बाध॥१७८॥

जैसे दोष होय अब दूरी। तैसे तुम सब करो जरूरी॥
हाथ जोड़ तुम सीस लगावो। नमन होय पुन सीस नमावो॥१७९॥

तद पीछे निज वसन गहीजो। पुन ऐसा जनि कर्म करीजो॥१८०॥

नारद-वचन चौपाई

इस प्रकार जब कहा मुरारी। अनूताप तब कीन्ह कुमारी॥
बिना चीर हम मज्जन कीना। याते भयो नियम सब छीना॥१८१॥

बिना विघ्न हो पूरण जैसे। हमको करण उचित अब तैसे॥
सर्व कर्म के ज्ञाता स्वामी। कृष्ण कमल पद करा नमामी॥१८२॥

जब देखा श्रीकृष्ण मुरारी। अखिल गोपिका करत ज़ुहारी॥
भा प्रसन्न अतिसै तब स्वामी। दिये वसन तिनको उरगामी॥१८३॥

यदपि बहुत हांसी हरि कीनी। लज्जा चीर सकुच हर लीनी॥
कठ पुतली सम तिने नचाया। तदपि रोष उर में नहिं आया॥१८४॥

हरि लीला में दोष न माना। मुदित भयीं प्रिय संग महाना॥
निजनिज चीर पहिन तिन लीने। पर उनके मन हरिवश कीने॥१८५॥

चल न सकीं तिस ठौर से, उपजा प्रेम अपार।
प्यारे के मुख कमल को, पुन पुन रही निहार॥१८६॥

अन्तर्यामी श्रीभगवाना। सर्व सखिन के उर की जाना॥
हरि पद पर्श हेतु व्रत धारा। यही एक तिन प्राण अधारा॥१८७॥
दामोदर करुणा निधि प्यारे। प्रेम विवश हो वचन उचारे॥१८८॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

प्राण प्रिया हे परम हमारे। जानत हूँ संकल्प तुम्हारे॥
मम पूजन तुम करण विचारा। सत्य होयगा सोउ तुमारा॥१८९॥
जिसने अपना मन अरु प्राणा। हमें समर्पित कीन सुजाना॥
विषय वासना तिन उर माहीं। उत्पन्न होय कदापी नाहीं॥१९०॥
जैसे भर्जित उबले दाने। उपजत नाहिं सर्व जन जाने॥
लौट जाउ तुम निज घर प्यारी। सिद्ध साधना भई तुमारी॥१९१॥
शरद ऋतू की रात मझारा। करना तुम मम संग विहारा॥१९२॥

नारद-वचन चौपाई

इस विध भाखा दीनदयाला। लब्ध काम थीं व्रज की बाला॥१९३॥

ध्यान करत हूई सबी, चरण कमल का तात।
गई घोष को दुखित हो, और न कछू सुहात॥१९४॥
जो हरि भक्त विरक्तजन, सुन सुन के हर्षात।
जो नर पामर मूढ़ मति, सुनकर हँसत हँसात॥१९५॥
एक दिवस गो चारते, व्रज बालक युत श्याम।
वृन्दावन से दूर कुछ, गये सहित बलराम॥१९६॥

सफल सघन सुन्दर तरू, तहाँ निरख गोपाल।
तिनके गुण-गण ग्रहण कर, बोले वचन रसाल॥१९७॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

सुबल विशाल ऋषभ हे ताता। देवप्रस्थ श्रीदामन् भ्राता॥
हे बरूथ तेजस्विन् प्यारे। स्तोक अंशु सुन वचन हमारे॥१९८॥
देखो इनके भाग उदारे। केवल परहित जिन तनु धारे॥
वर्षा आतप पवन सहारत। शरणागत के सोऊ निवारत॥१९९॥
इनका जन्म सफल तुम जानो। सब प्राणी का जीवन मानो॥
इनसे अर्थी विमुख न जावत। जिम उदार नर से सब पावत॥२००॥
गंध गौंद फल पुष्प निकाया। वल्कल मूल लता दल छाया॥
ईंधन अंकुर आदिक देवें। शरणगत को सब विध सेवें॥२०१॥
वाणी बुद्धि द्रव्य पुनि प्राना। इन कर करे सर्व सन्माना॥
जन्म सफल इतने कर ताता। तनुधारी का होवत भ्राता॥२०२॥

नारद-वचन दोहा

तिन वृक्षन के मध्य से, गमने सकल अभीर।
वन वर शोभा देखते, पहुँचे यमुना तीर॥२०३॥
शीतल निर्मल मधुर पुन, श्री यमुना का वार।
धेनुन ताँहि पिवाय के, पीवत भये कुमार॥२०४॥

चरन लगी गौ वन विषे, राम कृष्ण तब सोय।
व्रज बालक बोलत भये, क्षुधकर व्याकुल होय॥२०५॥

बालक-वचन चौपाई

राम राम हे निज जन पालक। कृष्ण कृष्ण हे अरिकुल घालक॥
क्षुधा लगी अब हमको भारी। तांते आये शरण तुमारी॥२०६॥
रोग जरा आदिक दुख जोई। क्षुधा समान न होवें सोई॥
क्षुधा राक्षसी प्राण निकारत। दूर करो इसको हम आरत॥२०७॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

धीरज धरिये मत घबरावो। इससे तनक दूर तुम जावो॥
तहाँ करत मख ब्राह्मण व्राता। भोजन मांगो तिनसे ताता॥२०८॥
वहाँ लेवना नाम हमारो। लज्जा भय तुम मन से डारो॥
कष्ट काल में मांगन जोई। दोष रूप नहिं होवत सोई॥२०९॥

नारद-वचन दोहा

हरि का वचन प्रमाण कर, गये द्विजन के द्वार।
नमस्कार कर तिनों को, बोले वचन कुमार॥२१०॥

बालक-वचन चौपाई

राम कृष्ण आये युग भैया। कानन मांहि चरावत गैया॥
क्षुधित भये हैं सखन समेता। भोजन देवो तिनके हेता॥२११॥

जब तिन उत्तर नहिं दिया, बालक भये उदास।
शुष्क वदन सबके भये, गये कृष्ण के पास॥२१२॥

बालक-वचन चौपाई

हमें एक तो क्षुधा सतावत। पुन तुम हमको तात खिझावत॥
सुनकर तिनने नाम तुमारा। हमरे तरफ न नैक निहारा॥२१३॥
आप मांगकर खावें जोई। देना तिनसे क्यों कर होई॥
तुम जानत हो व्रज सम प्यारे। मानेंगे सब हुकम हमारे॥२१४॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

बैल दूध नहिं देवें भैया। दूध देत हैं मित्रो गैया॥
कर्म बैल द्विज लोक मझारी। भक्ति धेनु सम तिनकी नारी॥२१५॥
तांते तिनके ढिग तुम जावो। जाकर हमरा हाल सुनावो॥
द्विज नारी मानति हैं हमको। भोजन देवेंगी ध्रुव तुमको॥२१६॥

नारद-वचन दोहा

द्विज नारिन के ढिग गये, कृष्ण वचन निर्धार।
पूरववत तब अन्न को, मांगत भये कुमार॥२१७॥

कृष्ण नाम को श्रवण कर, विप्र कलत्र उदार।
भयीं मुदित मन तिनों का, कीना अति सत्कार॥२१८॥

अन्न चतुर्विध सीस धर, गोपन को ले साथ।
तातकाल जावत भयीं, जहाँ रहे यदुनाथ॥२१९॥

संकर्षण गोपाल का, दर्शन कर हर्षाय।
भोजन तिनें समर्प कर, बोलीं वचन सुहाय॥२२०॥

विप्र-वधू-वचन चौपाई

जबसे व्रज तव भया निवासा। तबसे लगी दर्स की आसा॥
मन्द भाग्य से जान न हूआ। निकसन देत न सादन कूआ॥२२१॥
अब बी पति सुत वर्जित रहहे। बहुविध कटुक वचन तिन कहहे॥
तव दर्शन की हम अति प्यासी। सहन करा ताड़न सुखरासी॥२२२॥
आज आप अति कीनी दाया। मित्र भेंजकर हमें जनाया॥
धन्य भाग हमने निज चीने। युगल मनोहर दर्शन कीने॥२२३॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

जननी तुमको करूँ प्रणामा। अब तुम सब जावो निज धामा॥
हमरे दर्शन हित जो आई। सो तुम उत्तम कीना माई॥२२४॥
दर्शन से रति होवत जैसी। प्रीति परोक्ष विषे नहिं तैसी॥
आरजपद रति कर है जोई। तिसको दुर्लभ मुक्ति न कोई॥२२५॥
पति सुत सब अनुकूल तुमारे। होवनगे नहिं दोष निहारे॥
गृह में जावोगी तुम जबही। यज्ञ समापित होगा तबही॥२२६॥

नारद-वचन दोहा

राम कृष्ण युत बाल जो, सबकी पंक्ति लगाय।
भोजन करवावत भयीं, निज कर अति हर्षाय॥२२७॥

चित्त रहा हरि के चरण, हरि की आज्ञा मान।
गयीं गेह में ब्राह्मणीं, निरख बंधु हर्षान॥२२८॥

एक नारि निज नाथ ने, रोक रखी निज गेह।
यथा श्रौत हरि ध्यान कर, तजत भयी तब देह॥२२९॥

द्विज निजांगना को निरख, हरि की भक्ति समेत।
तिनके भाग्य शलाघकर, निजको अति धिक् देत॥२३०॥

विप्र-वचन चौपाई

अहो विष्णु माया बलवाना।जाकर मोहे हम विद्वाना॥
हम जानत थे जगत गुसांई।भये प्रकट ब्रजपति गृह मांही॥२३१॥

बालक भेजे तिनकर दाया।हमको निज पद याद कराया॥
मतिको माया ने आवरिया।जिससे हमने ख्याल न करिया॥२३२॥

नहि तो भोजन की क्या तिनको। विश्वम्भर श्रुति भाखत जिनको॥
कमला तज कर इतर न ताहीं। वास करे जिनके पद माहीं॥२३३॥

धिक् हमरी विद्या कुल जपको। धिक् मख क्रिय कर्म व्रत तप को॥
जो जगदीश्वर से हम बेमुख। मखकर क्या होगा हमको सुख॥२३४॥

सर्व देवमय मखभुक् जोई।हमसे तृस्कृत भा प्रभु सोई॥
बड़भागिनि हैं हमरी नारी।जिनकी मति हरिचरण मझारी॥२३५॥

संस्कार जप तप नहिं जिनके।शौच क्रिया आचार न तिनके॥
तदपि मुकुन्द चरण रति पाई।हम पठितों की मति बौराई॥२३६॥

राम-कृष्ण के चरण मझारी। नमस्कार शत होय हमारी॥
क्षमा करो अपराध हमारे। विदित प्रभाव न हमको थारे॥२३७॥

नारद-वचन दोहा

राम-कृष्ण के दर्श की, लगी द्विजन को प्यास।
कंस दुष्ट से उर डरे, गये न तिनके पास॥२३८॥

निज माया कर मनुज तनु, धर कर श्री गोपाल।
विविध खेल करते भये, जिम प्राकृत नर बाल॥२३९॥

करे प्रेम से गान नित, जो कोई यह ताल।
प्रेम करेंगे तास से, राम सहित गोपाल॥२४०॥

इति श्रीमत्परमहंसोदासीनशिरोवतंसस्वामिकार्ष्णि-ज्ञानदासशिष्येण स्वामिकार्ष्णिगोपालदासाह्वेन विनिर्मिते गोपालविलासे पूर्वविश्रामे ऋतुधर्मकथनप्रलम्बवधादिवर्णनं नाम सप्तमस्ताल: समाप्त: ॥७॥

मास पारायण दसवां विश्राम॥१०॥

पाक्षिक पारायण पाँचवां विश्राम॥५॥

नवाह्न पारायण तृतीय विश्राम॥३॥

ॐ

श्रीवृन्दावनविहारिणे नमः।

अथ अष्टमस्ताल:-८

श्लोक:

आरब्धं समवारयत्सुरपतेर्गोपैर्मखं स्वोक्तिभिः
शैलेन्द्रस्य चकार तं यदुपतिः संक्रन्दनासारतः।
गोगोपांश्च ररक्ष सप्तदिवसान् धृत्वा गिरीन्द्रं करे
स्तोत्रं यस्य कृतं शिलोच्चयभिदा कृष्णाय तस्मै नमः॥१॥

नारद-वचन दोहा

आभीरों ने एक दिन, शक्र याग के हेत।
करी एकठी वस्तु सब, पय पकवान समेत॥२॥
सर्वातम सर्वज्ञ हरि, जानत भी सब देव।
हस्त जोड़ नन्दादि सों, पूछत भा सब भेव॥३॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

निज उत्सव की भाखो बाता। किसका याग करो तुम ताता॥
को मख का साधन अधिकारी। कौन देव फल कौन उचारी॥४॥

श्रवण करन की इच्छा मोको। यांते पूछत हैं हम तोको॥
प्रिय उपेक्ष अरिजिनके नांही। निज-परदृष्टि न जिन उर मांही॥५॥
अस साधू समदर्शी जोऊ। तिनकी कृत्य गुप्त नहिं कोऊ॥
उदासीन पुन बैरी जोई। तिनसे मंत्र राखिये गोई॥६॥
जोऊ सुहृद निज आप समाना। तिनसे योग्य न कृत्य छिपाना॥
कर्म करत जो जन जग जानी। शुभ फल को पावत सो ज्ञानी॥७॥
बिन विचार कृत करहै जोऊ। यथायोग्य फल पाय न सोऊ॥
श्रुतिसम्मत किं तुम मख करहो। किंवा लौकिकमत अनुसरहो॥८॥

नन्द-वचन चौपाई

मघवादेव मेघतनु धारी। वर्षत जीव जीवनं वारी॥
ता जल सों उपजत द्रव जोई। तिससे याग करें सब कोई॥९॥
मख में हम पुन और अपारे। जलधर पति को पूजत सारे॥
तांकी शेष वस्तु सुत जोऊ। ताकर जीवत जन सब कोऊ॥१०॥
धर्म काम धन लाभ विचारी। पुरुष करें पुरुषारथ भारी॥
तिसका फल परदाता सोई। बिना मेघ कृष्यादि न होई॥११॥
परंपरा यह मख चल आया। याको जो जन देत भुलाया॥
काम लोभ भय रिसकर ताता। उभयलोक सो सुख नहीं पाता॥१२॥

नारद-वचन दोहा

नन्दादिक के वचन सुन, बोले तब भगवान।
शुनाशीर के उर विषे, कोप ज्वलन उपजान॥१३॥

गर्वगिरी से शक्र को, उत्तारण के हेतु।
निराकरण तांका करा, नहिं निन्दक खग केतु॥१४॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

निज कर्मन कर जन जनि पावत। कर्मन से मृत्यू जग आवत॥
दुख सुख भय अदृष्ट से होई। और देव जग में नहिं कोई॥१५॥
यदी देवता है जग कोऊ। कर्मन का फल देवे सोऊ॥
बिन अदृष्ट कुछ सो नहि देवे। तो कत वृथा तास को सेवे॥१६॥
कर्म विवश वर्तत जन जोई। वासव कर तांको क्या होई॥
निज अदृष्ट दुख आवत जोऊ। तिसे दूर कर सकत न सोऊ॥१७॥
देवासुर मानुष जग सारा। स्वस्वभाव वश वरतन वारा॥
ऊँच नीच तनु को नर धारत। कर्मन कर पुन तिनको डारत॥१८॥
गुरु ईश्वर अरि मित्र समाना। यह सब कर्म रूप ही जाना॥
तांते तिसको नित सत्कारे। शुभ कर्मन को नर विस्तारे॥१९॥
जास कर्म को करहै जोऊ। तांका परम देवता सोऊ॥
जो निज धर्मन को नित ध्यावत। कर्म देव से सब सुख पावत॥२०॥
सत रज तम प्राकृत गुण जोई। स्थिति जनि अन्त करें जग सोई॥
होवत जब नर नारि संयोगू। रज से उत्पन होवत लोगू॥२१॥
रज गुण प्रेरे जलद अपारी। वर्षत सर्व ओर जलधारी॥
तिस कर जीवत यह संसारा। क्या कर सकहै इन्द्र विचारा॥२२॥

पति को तज जो योषित जावत। सो जारन से सुख नहि पावत॥
तिम जो निज धर्मन को त्यागत। इतर देव की सेवा लागत॥२३॥
तिससे तिसका क्षेम न होई। दुष्ट नारि सम मूरख सोई॥
वेदाध्यापन द्विज नित करना। क्षत्रिय क्षिति रक्षा विस्तरना॥२४॥
कृषी कुसीद बणिज गोरक्षा। वैश्य धर्म यह कहे समक्षा।
शूद्रन को द्विज सेव उचारी। तिनमें धेनू वृत्ति हमारी॥२५॥
पुर जनपद कुछ हमरे नाहीं। वास करें वन शैलन माहीं॥
तांते गो द्विज सेवा करिये। गिरिपति की पूजा विस्तरियें॥२६॥
नग नीचे अवनीं लिपवावो। गोवर्धन को स्नान करावो॥
मोदक पूप क्षीर दधि पूरी। करो एकठे भोजन भूरी॥२७॥
अन्न कूट गिरि आगे धरिये। पुरुष सूक्त सों पूजा करिये॥
षट्पंचाशत भोग लगावो। माला चन्दन वस्त्र चढ़ावो॥२८॥
गिरि की शेष प्रसादी जोऊ। विप्रन तांहि जिमावो सोऊ॥
धेनु दक्षिणा द्विजन दिलावो। तिनसे शिखि में होम करावो॥२९॥
इतर जीव जो मख में आवें। विप्र शेष सो भोजन पावें॥
गोगण को तृण आदि चरावो। तिनका विविध शृंगार करावो॥३०॥
नर नारी सब भोजन करके। भूषण वसन तिलक तनु धरके॥
गिरिपति की परिदक्षिण करिये। गो गण को निज आगे धरिये॥३१॥
याविध वर्ष वर्ष में जोई। जहाँ अचल की पूजा होई॥
तहाँ मेघ वर्षा वर्षावत। होत अन्न बहु नर सुख पावत॥३२॥

चार पदारथ जग में जोऊ। गिरि गोवर्धन देवत सोऊ॥
जहाँ अद्रिपति तात न होई। तहाँ करे गोबर का सोई॥३३॥
शैल शिला ले जाना चाहे। ता सम हेम तहाँ पधराये॥
बिन हाटक जो सिल ले जावत। सो नर घोर नरक को पावत॥३४॥
यह निज मत मैं भाखा ताता। करिये तो यदि तुमें सुहाता॥
गो ब्राह्मण गिरि का मख जोऊ। तासम और पुण्य नहि कोऊ॥३५॥

नारद-वचन दोहा

सुन कर वचन गुपाल के, नन्दादिक आभीर।
साधु साधु सब वचन कह, गये गोत्र के तीर॥३६॥
जिम भाखा भगवान ने, तैसा ही तिन कीन।
गोवर्धन पूजन लगे, गिरि को हरि तनु चीन॥३७॥
गोपन के विश्वास हित, कृष्णचन्द्र योगेश।
एक रूप धर शैल से, भये प्रकट मिथिलेश॥३८॥

गोवर्धन-वचन चौपाई

मैं हूँ गिरि गोवर्धन भाई। तुमरे हेत देह प्रकटाई॥
भया प्रसन्न प्रेम लख थारा। मांगो वर जो तुम मन धारा॥३९॥
जो तुमने मम भोग लगाया। सो मैंने अति रुचि सों खाया॥
करत प्रसन्न मोहि जन जोई। तांको दुर्लभ नहि कुछ होई॥४०॥

गोप-वचन हरिगीत छन्द

जय जयतु जय व्रजपाल गिरिपति, जयतु जय गोवर्धना।
जन करत जो तृस्कार तुमरा, तासको तुम मर्दना।
जो करत पूजा आपकी तिस, सर्व सुर पूजन किया।
तुम पर अनुग्रह कीन हम पर, देव जो दर्शन दिया॥४१॥

जग आज लों नग नाथ हमने, तव प्रताप न जानिया।
अब करत दण्ड प्रणाम तोको, देव करके मानिया।
बिन ज्ञान कृत अपराध जो सो, क्षमब उर नहिं धारिये।
गो वत्स बालक बन्धु हमरे, कर दया प्रतिपारिये॥४२॥

नारद-वचन दोहा

एवमस्तु कह भूमिभृत, तब भा अन्तर्धान।
नंदादिक बलराम युत, व्रज गमने भगवान॥४३॥

निज पूजा का भंग सुन, शुनाशीर कर कोप।
प्रलय जलद को कहत भा, करन चहत व्रज लोप॥४४॥

इन्द्र-वचन चौपाई

वनवासी गोपन की भाई। देखो श्री मद की प्रभुताई॥
कृष्ण मनुज का शरणा लीना। सुरपति का जिन हेलन कीना॥४५॥

ब्रह्मज्ञान दृढ़ तरणि समाना। तांको तज जिम मनुज अजाना॥
मखतृण प्लव का लेत सहारा। तरण चहत भव पारावारा॥४६॥

बालक अज्ञ कृष्ण अभिमानी। बहु वाचाल स्वपंडित जानी॥
तिस मानव का कर विश्वासा। गोपन मम मख कीन विनासा॥४७॥

श्रीमद मत्त भये यह गोपा। तिनके मद का करिये लोपा॥
यह मुकुन्द कर बृंहित देहा। इनके नाश करो पशु गेहा॥४८॥

ऐरावत की कर असवारी। मैं आवत हूँ गोष्ठ मझारी॥
विबुध गणन को लेकर संगा। करहूँ नंद घोष का भंगा॥४९॥

नारद-वचन दोहा

वृद्धश्रवा का वचन सुन, वारिद चले अपार।
गोकुल को पीड़त भये, मूसल धारा डार॥५०॥

तड़ तड़ कर चमकत तड़ित्, गर्जत अभ्र अखण्ड।
उदक उपल वर्षत भये, चले समीर प्रचण्ड॥५१॥

धेनु गोपिका सुतन को, निज निज कण्ठ लगाय।
इत उत में धावन करत, कछू न पार बसाय॥५२॥

मात यशोदा रोहिणी, लख उत्पात नरेश।
राम श्याम को गोद ले, मन्दिर कीन प्रवेश॥५३॥

लगे काँपने शीत कर, पशू गोपिका गोप।
माधव की शरणी गये, लखकर व्रज का लोप॥५४॥

गोप-वचन चौपाई

कृष्ण कृष्ण निजजन हितकारी। राम राम हम शरण तुमारी॥
तोर वचन कर सुर मख त्यागा। ताते शक्र कोपने लागा॥५५॥

त्राहि त्राहि निज व्रज को ताता। प्राण निकारत तोयद दाता॥
सुत्रामा के हम अघकारी। कैसे जीवन होय हमारी॥५६॥

श्रीकृष्ण वचन कवित्त

सुनो धेनु नर नारी, करूँ तो रखवारी,
जोई वासव विचारी, सोई मैंने निरधारी।
सुर असुर मझारी, अस कौन बलधारी,
मम जन अपकारी चाहे होये त्रिपुरारी।
तांके मूल को उखारी, करूँ क्षण नाहिं वारी,
कौन सूरमा बलारी, जिस करी वृष्टि भारी।
शक्रमान भंग कारी, ख्यात जगत मझारी,
कृष्ण नाम मैं खलारी, तव हित तनु धारी॥५७॥

निज भृत्य प्रतिपारी, यही नियम हमारी,
खाई पूजा जिस थारी, चलो तास को उखारी।
तांको छत्र सम धारी, नग नीचे वास कारी,
नाम राखूँ गिरधारी, इम बचे व्रज सारी।
व्रजभूमि मोको प्यारी, धेनु मूरति हमारी,
मम बंधु नर नारी, तुमें कौन सके मारी।

तव भय को निकारी, पाछे खाऊँ अन्न वारी,
तुमें देवूँ सुख भारी, मोको शपथ तुमारी॥५८॥

नारद-वचन दोहा

या विध तिनको धीर दे, गिरिपति लिया उठाय।
एक हस्त कर कृष्ण ने, ज़िम पुष्कर गजराय॥५९॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

तात मात भ्राता गोपेशा। गिरिगर्त्तन में करो प्रवेशा॥
गोधन युत सब करो निवासू। सब विध होगा तुमें सुपासू॥६०॥
गिरि गिरने से तुम नहि डरिये। वात वृष्टि का भय नहि करिये॥
शतमन्यू घन वर्षंत जोलों। गिरि कर राखेंगे हम तोलों॥६१॥

नारद-वचन दोहा

योगीश्वर श्रीकृष्ण पर, कर विश्वास नरेश।
गोप गोपिका धेनु सब, करत भये परवेश॥६२॥

यशोदा-वचन चौपाई

हे बलराम सुदामन भैया। श्रीदामन बल जावे मैया॥
शैलराज यह है अति भारो। तुम सब मिलकर दिहो सहारो॥६३॥
मेरो श्याम अती सुकुमारो। सह न सकत कर गिरि कर भारो॥
हे जगदीश कृपा तुम कीजो। मम सुत को अपना बल दीजो॥६४॥

हे मुकुन्द बल जावे मैया। तव कर थाका होगा भैया॥
बालन युत तुम खेलो ताता। थामेगी गिरि को तव माता॥६५॥

नारद-वचन दोहा

बाल वृद्ध सब नारि नर, हरि को शिशु सम चीन।
निज निज कर में लकुट ले, नग को स्तंभन कीन॥६६॥

सप्त दिवस गोपाल ने, निज कर में गिरि धार।
ब्रजवासी सब कृष्ण के, मुख को रहे निहार॥६७॥

देव सुदर्शन चक्र ने, निज पति इच्छा चीन।
तब गिरिवर पर आयके, जल शोषण कर लीन॥६८॥

पूरव निज तनु प्रकट कर, रौहिणेय बलवीर।
नग के चारों तरफ का, रोक लिया सब नीर॥६९॥

हरि के योग प्रताप को, देख देख पुरुहूत।
निरहंकार लजाय के, रोके निज जीमूत॥७०॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

नभ में उदय भया तमहारी। अभ्र गये सब सहित बयारी॥
लेखर्षभ का त्रास न करिये। निर्भय वसुधा मांहि बिचरिये॥७१॥

बाहिर गोधन वस्तु निकारो। निज निज गृह को सकल समारो॥
शुष्क भया अवनीतल वारी। भयी अल्प जल सागर नारी॥७२॥

नारद-वचन दोहा

निज बंधुन को साथ ले, निकसे गोप नरेश।
गिरिधारी ने प्रथमवत्, स्थापित कीन नगेश॥७३॥
गोपी गोप सनेह कर, भये रुमांचित गात।
दधि अक्षत कर पूजके, हरिको कंठ लगात॥७४॥
विबुध पुष्प वर्षा करें, बाजे विविध बजात।
गान करें गंधर्व जन, नाचें अप्सरब्रात॥७५॥
या विध श्रीगोपाल के, दैवत कर्म निहार।
कहत भये नृप नन्द को, ब्रजवासी नर दार॥७६॥

गोप-वचन चौपाई

अद्भुत कर्म करत सुत थारा।बकी बकासुर या ने मारा॥
तृणावर्त अघ आदिक मारे।विटपी अर्जुन युग्म उखारे॥७७॥
कालिय नाग गरल आगारा।यमुना ह्रद से तिसें निकारा॥
कृष्ण किया दावानल पाना।या सम कर्म करत को आना॥७८॥
सप्तवर्ष का अति सुकुमारा।सप्त दिवस गिरिवर कर धारा॥
तव कुल में अस नर नहि कोई।निज कर में गिरि धारे जोई॥७९॥
तुम दम्पति गोरे व्रजपालक। कह किम श्यामलतनु तव बालक॥
तव कुल से सब विध विपरीता। सत्य कहो किसका सुत मीता॥८०॥

नन्द-वचन चौपाई

मम सुत में शंका मत करिये। गर्ग वचन में निश्चय धरिये॥
गर्ग विप्र ने भाखा जोई। तुमें सुनावत हूँ अब सोई॥८१॥

युग युग में यह तनु को धारत। धर्म विरोधी दुष्टन मारत॥
कृतयुग याका सित तनु जानो। त्रेता रक्तवर्ण को मानो॥८२॥

द्वापर पीतदेह दुष्टारी। अब इसने श्यामल तनु धारी॥
गुणकर यह हरि के सम होई। याको जीत सके नहिं कोई॥८३॥

कर्म अलौकिक इसने करने। लखकर तुम नहि संशय धरने॥
प्रेम करेगा इसमें जोई। चार पदारथ पावे सोई॥८४॥

याके कर्मन के अनुसारी। विविध नाम हैं जगत मझारी॥
प्रथम कबी वसुसुर सुतजाता। याते वासुदेव विख्याता॥८५॥

बड़भागी कुल गोप तुमारा। जिसमें कृष्ण लीन अवतारा॥
या विध गर्ग वचन को जोई। सुत में विस्मय मम नहिं कोई॥८६॥

इसको विष्णु अंश कर जानूँ। ता दिन से नहिं संशय ठानूँ॥
पूरव पुण्य पुँज को थारा। जाकर इसने ब्रज तनु धारा॥८७॥

नारद-वचन दोहा

नन्दराज के वचन सुन, गत विस्मय हो लोक।
तात सहित गोपाल पद, पूज गये निज ओक॥८८॥

मघवा निज अपराध के, क्षमा करावन हेत।
गलित मान मद मोह ब्रज, गमना सुरभि समेत॥८९॥
रहसि जाय गोपाल पद, पंकज कीन प्रणाम।
लज्जित हो कर जोर कर, स्तवन कीन अभिराम॥९०॥

इन्द्र-वचन सवैया

तव शुद्ध स्वरूप प्रकाशमयं, गुण मायिक तीन नहीं जिस माहीं।
यह प्राकृत देह संबंध हरे, सह कारण कारज के तव नाहीं।
भय लोभ मदादि अबोध विबोधक, माधव तोर समीप न जाहीं।
प्रभु तद्यपि धर्म प्रवर्त्तण के हित, दंड धरो खल निग्रह ताहीं॥९१॥

चन्द्रकला छन्द

जगके तुम मात पिता गुरु हो, जन के हित करण दंड धरो।
निज छन्द तनू धर क्रीडत हो, अभिमानि जनों कर मान हरो।
भुवनेश्वर हूँ अस मान जिसे, जन सो लख के तुम को निडरो।
शरण तव आवत मो सम सो, तज मोह मदादिक को सगरो॥९२॥
निज वैभव के मद सिन्धु विषे, नित डूबत हूँ मम पार करो।
भवदीय प्रताप न जानत था, मम आगस को नहि चित्त धरो।
अस दुष्ट मती पुन होय नहीं, यह मांगत हूँ कर जोर खरो।
पुरुषोत्तम यादव नाथ प्रभो, प्रणमों तुमको मम मोह हरो॥९३॥
मम सम जो जगदीश्वरमानी। निज शास्ता को सो नहिं जानी॥
सो सबका करहै अपराधू। गिनत न मात पिता गुरु साधू॥९४॥

निज मखभंग गोपकृत जोही।तांको देख क्रोध भा मोही॥
विग्रह अभिमानी जन जोऊ।मान भंग को सहे न सोऊ॥९५॥
व्रजविनाश हित घन बरसाये।तव प्रताप पावक सो खाये॥
मम उद्यम निष्फल जो कीना।तव प्रसाद सो मैंने चीना॥९६॥
गर्व गिरी पर चढ़है जोऊ।विविध क्लेश पाव जन सोऊ॥
तासों मोको नाथ उतारा।तुम सम कौन जगत् हितकारा॥९७॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

हम तव याग भाग जो हरिया।परम अनुग्रह तुम पर करिया॥
स्वर्ग-राज्य-मदमत तू जोई।ताकर मोमें तव रति होई॥९८॥
जापर परम कृपा हम करहैं।ताँकी सर्व सम्पदा हरहैं॥
श्रीमद अंध नयन जन जोही।कर धृत दण्ड न देखत मोही॥९९॥
जावो शक्र भद्र हो तेरी।तुम करिये अनुशासन मेरी॥
थिर हो निज अधिकार मझारी।अप्रमत्त सुर सहित नगारी॥१००॥

नारद-वचन दोहा

निज संतान समेत तब, सुरभि धेनु नर भूप।
कर प्रणाम जगदीश पद, बोली वचन अनूप॥१०१॥

सुरभि-वचन हरिगीत छन्द

जय कृष्ण केशव कृष्ण केशव, कृष्ण केशव श्री हरे।
भव रूप भव के हेत भव भव, नाथ भव से तुम परे।

गिर धार कर वर कंज में मम, वंश प्रभु ने रख लिया।
तुम परम दैवत नाथ मम निज, इन्द्र तुमको हम किया॥१०२॥
गो विप्र सुर के हेत तुमने, देव यह तनु धारिया।
भू भार रूप अपार प्रभु तुम, असुर कुल संहारिया।
गो प्राण त्राण परायणातम, नर नरायण खल अरी।
अभिषेक हित तब ईश मोको, द्रुषण ने आज्ञा करी॥१०३॥

चन्द्रकला छन्द

व्रजनाथ अनाथ सुनाथ प्रभो, हमको तुम नाथ सनाथ करा।
तव नाम अनंत अनंत विभो, अब गोविन्द ये तव नाम धरा।
तिसको यह नाम महातरणी, जन चाहित जो भवसिंधु तरा।
यह गारुड़ मंत्र मणी तिसको, भव व्याल विषानल संग जरा॥१०४॥

नारद-वचन दोहा

या विध कहकर कृष्ण को, सुरभी अति हर्षाय।
निज कुच पय की धारकर, कृष्ण दिये अनह्वाय॥१०५॥
करिवर कर उद्धृत करा, गगन गंग कर नीर।
बलाराति ने तासकर, अनह्वाये यदुवीर॥१०६॥
गो पृथिवी रविकर सुरभि, वागिन्द्रिय शशि वार।
तैश्च तांश्च यो विन्दते, तं गोविन्द उचार॥१०७॥

पुष्प वृष्टि कर कृष्ण पर शक्र सुरभि सुरवाम।
गुण गावत गोविन्द के, गमने निज निज धाम॥१०८॥

(इति इन्द्र-मानभंग लीला)

जो कोई इस ताल को, करे प्रेम से गान।
तांको वर्षा कोप से, राखेंगे भगवान॥१०९॥

श्लो०-

तव श्लोको हि सर्वत्र, श्रूयते भक्तरक्षणम्।
मां न रक्षसि किं कृष्ण, खिलतां याति येन सः॥११०॥

इति श्रीमत्परमहंसोदासीनशिरोवतंसस्वामिकार्ष्णि-ज्ञानदासशिष्येण स्वामिकार्ष्णिगोपालदासाह्वेन विनिर्मिते गोपालविलासे पूर्वविश्रामे गोवर्धनधारणादिवर्णनं नाम अष्टमस्तालः समाप्तः॥८॥

मास-पारायण ग्यारहवाँ विश्राम ॥११॥

ॐ

श्रीवृन्दावनविहारिणे नमः।

अथ नवमस्तालः-९

श्लोकः

यो नन्दं भवनेऽनयज्ञलपतेर्गेहाद् भुजङ्गेन तं
ग्रस्तं गोपममूमुचच्च भुजगं यः शङ्खचूडं ह्यहन्।
योऽरिष्टं वृषभं च केशिनमथाऽक्रूराय योऽदर्शयद्
गोपेभ्यो यमुनाजले स्वभवनं कृष्णाय तस्मै नमः॥१॥

नारद-वचन दोहा

एक समय एकादशी, व्रत धरकर गोपेश।
प्रात द्वादशी स्नान हित, जल में कीन प्रवेश॥२॥

यमुना जल से खैंच कर, वरुण देव के दास।
नन्दराज को ले गये, नीर नाथ के पास॥३॥

सुनकर यशमति आदि सब, बाँधव भये सशोक।
जनक लेन हित कृष्ण तब, गये वरुण के लोक॥४॥

हृषीकेश को देखकर, यादस्पति तब भूप।
हर्षित हो पूजा करी, बोला वचन अनूप॥५॥

वरुण-वचन प्रमाणिका छन्द

अभीरवंशमण्डनं, सुरेशयागखण्डनम्।
अखण्डसच्चिदात्मकं, सुरासुराखिलात्मकम्॥६॥

स्वभक्तसौख्यदायिनं, भवोद्भवं च मायिनम्।
नरामरासुरार्च्चितं, सुगन्धद्रव्यचर्च्चितम्॥७॥

मयूरपिच्छमस्तकं, तनौ दुकूल शस्तकम्।
अखण्डमण्डलश्रियं, ह्यलौकिकाखिलक्रियम्॥८॥

खलैकदण्डकारिणं, स्वधर्मभूप्रचारिणम्।
पयःसमुद्रशायिनं, नमामि दैत्यदाहिनम्॥९॥

चौपाई

सफल जन्म भा आज हमारा। जो प्रभु कीना दर्स तुमारा॥
तव पद पंकज देखत जोई। संसृति सागर तर है सोई॥१०॥

बिन जाने मम भृत यदुराया। मूरख तोर तात कोलाया॥
क्षमिये सो अपराध हमारा। लीजो यह है पिता तुमारा॥११॥

हमरे योग्य होय जो सेवा। सो करुणाकर कहिये देवा॥
सदा अनुग्रह करिये स्वामी। जगदीश्वर हम तव अनुगामी॥१२॥

नारद-वचन दोहा

सुनकर वचन जलेश के, लिये पिता निज साथ।
स्वजन सुखद गोविन्द तब, गृह आये व्रजनाथ॥१३॥

यशमति रामादिक सकल, हर्षित भये नरेश।
पाशी कृत सुतका स्तवन, सबको कहा व्रजेश॥१४॥

सुनकर सब विस्मय भये, जान हृदय जगदीश।
गोप सर्व गोविन्द को, कहत भये अवनीश॥१५॥

गोप-वचन चौपाई

तात कृष्ण तुम ईश्वर होई। हमरे सम नहि मानव कोई॥
तुमरी सकल अलौकिक करणी। देवों ने तव अस्तुति वरणी॥१६॥

हम पर परम अनुग्रह कीना। व्रज में जोउ जन्म तुम लीना॥
निज वैकुंठ दिखावो हमको। सकल कहत कमलापति तुमको॥१७॥

नारद-वचन दोहा

गोपन की सुन प्रार्थना, हँस करके यदुवीर।
कहत भये पुन प्रेम से, चलो नदी के तीर॥१८॥

कृष्ण वचन कर गोप सब, यमुना कुंड मझार।
करत भये परवेश तब, निज निज वस्त्र उतार॥१९॥

हृषीकेश योगीश की, माया रचित अनूप।
नीर विषे वैकुंठ तब, देखा अदभुत रूप॥२०॥
तेजोमय तिस लोक में, नारदादि गुण गात।
ब्रह्मादिक अस्तुति करें, कर जोरें सुर-ब्रात॥२१॥
लक्ष्मी युत श्रीकृष्ण पर, चामर छत्र अनूप।
करें देवता गोप सब, चकित भये तब भूप॥२२॥
क्षण में तांको लोप कर, योगीश्वर जगदीश।
बाहिर पुन लावत भये, गोपन को अवनीश॥२३॥
माया कर मोहित भये, भूल गये सब बात।
माधव को जानत भये, पुत्र मित्र पुन भ्रात॥२४॥
देवी की यात्रा करन, नन्दादिक आभीर।
एक समय जावत भये, सरस्वती के तीर॥२५॥
तहाँ स्नान कर भगवती, शिव का पूजन कीन।
अन्न वस्त्र गो हेम पुन, विप्रन को तब दीन॥२६॥
निश में सोये नन्द को, अजगर वदन पसार।
ग्रसत भया तब नन्द ने, ऊँचे कीन पुकार॥२७॥
सुनकर कर उल्मुक लिये, गोपी गोप सकोप।
हनत भये तिस सर्प को, तजा न तिसने गोप॥२८॥

जब मुकुन्द ने चरण कर, स्पर्श भुजग का कीन।
तब तिसने अहि देह तज, देव देह धर लीन॥२९॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

को तू कहो हाल निज भाई। अद्भुत तेज तोर दर्साई॥
तव शोभा लागत अति प्यारी। कैसे निंद्य योनि यह धारी॥३०॥

सुदर्शन-वचन चौपाई

देव देव तुम अन्तर्यामी। जानत हो सब घट की स्वामी॥
तदपि आपने पूछी जोई। निज उदंत मैं भाखूं सोई॥३१॥
विद्याधर मैं नाम सुदर्शन। सुभग रूप अति शोभा हर्षन॥
बैठ विमान सैल नित करहूँ। नर नारी सबके मन हरहूँ॥३२॥
अष्टावक्र विप्र को लख कर। हाँसी कीन गर्व निज उर धर॥
तब तिस कहा भुजग तू होवो। अतिकुरूप निश्चय क्षिति सोवो॥३३॥
सुनकर शाप शोक मैं करिया। मुनि के पद में मस्तक धरिया॥
तब ऋषि ने यह वचन उचारा। होवेगा केशव अवतारा॥३४॥
सो पद कर परसेंगे जब ही। तुमरी मुक्ति होयगी तबही॥
द्विज का शाप अनुग्रह भयऊ। जो तव पद सपर्श अघ गयऊ॥३५॥
पुरुषोत्तम सुरपति सर्वातम। जगदीश्वर पूरण परमातम॥
कृपा समुद्र शरण हितकारी। मोपर करुणा करो बकारी॥३६॥

पुन अभिमान न आवे नेरो। होवूं सदा सन्त को चेरो॥
सन्तन से हाँसी जग जोई। नरक निशानी जानूं सोई॥३७॥
ध्वावूं सदा चित्त में तोको। प्रभु आज्ञा देवो अब मोको॥
अब मैं देवलोक को जावूं। नितप्रति विष्णु विशद यश गावूं॥३८॥

नारद-वचन दोहा

संकर्षण गोपाल पद, करके दण्ड प्रणाम।
गया सुदर्शन नाक में, गोप गये निज धाम॥३९॥
शंखचूड़ वैश्रवण का, इक अनुचर बलधाम।
निशि गोपी को ले चला, देखत हलधर श्याम॥४०॥
लगी पुकारण गोपिका, सुनकर श्याम पुकार।
गये छुड़ावन कृष्ण को, देख तजी तिस दार॥४१॥
पकड़ तास के सीस से, लीना मणी निकार।
मुष्टि सीस में लगत तनु, त्याग गया सुर द्वार॥४२॥
अथ अरिष्ट व्रज में गया, गिरि सम तांका देह।
नर नारी पशु देख के, भाग गये तज गेह॥४३॥
पूँछ उठाकर शृंगन से, क्षिति खोदत भा भूप।
वृषभासुर को डाट के, बोले श्याम सरूप॥४४॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

अरे दुष्ट मम सन्मुख आवो। गोप पशुन को क्यों डरपावो॥
तव सम खल बल गर्वप्रहारी। मैं हूँ व्रज पालक असुरारी॥४५॥

जोउ जगत में शूर कहावे। निर्बल को नहि बल दिखलावे॥
मम कर में आवेगा जोई। वत्सासुर सम तव गति होई॥४६॥

नारद-वचन दोहा

खम्भ मारकर श्रृँगन से, पकड़ तिसे बल धाम।
अष्टादश पद वृषभ को, दाबा पाछे श्याम॥४७॥

पुन पिछले पद कृष्ण को, दाबा तिसने भूप।
पुन ऐंठा जब श्रृँगन से, त्यागा वृषभ स्वरूप॥४८॥

देव देह तब धारकर, हरि पद कीन प्रणाम।
हस्त जोड़ आगे खड़ा, बोला वचन ललाम॥४९॥

अरिष्टासुर-वचन हरिगीत छन्द

जय विष्णु विशद विशाल कीरति, भक्त वत्सल भय हरे।
सो परम भक्त सुरेश तव श्रुति, पंथ को जो नित धरे।
तज योग याग समाधि तुमरा, विमल यश नित गाव है।
अज अमर निर्गुण रूप तव बिन, यत्न सो जन पाव है॥५०॥

बिन बोध मुक्ति न होत भव से, वेद इस विध वाच है।
तव दास आशय अजर में नित, ज्ञान नर्त्तक नाच है।
जिस हृदय मन्दिर विमल में तव, भक्ति मणी प्रकास है।
तिसको करामल तुल्य आतम, रूप सूक्षम भास है॥५१॥

गुरु पद सेवा कर है जोई। भक्ति विराग ज्ञान तिस होई॥
गुरु में तुममें भेद न देवा। गुरु सेवा सो तुमरी सेवा॥५२॥

गुरु अवज्ञा कर है जोऊ। मोसम दुर्गति पावत सोऊ॥
वाचस्पति श्रीगुरू हमारे। मैं तिन आगे पाद पसारे॥५३॥

तब गुरु ने यह शाप अलापी। वृषभदेह धर दुर्मति पापी॥
तब मैंने गुरु पद सिर नाया। विप्र जान गुरु कीनी दाया॥५४॥

कृष्ण धरेंगे जब अवतारा। व्रज में तिनसे तव निस्तारा॥
गुरु अपराध जन्य अघराशी। तव सपर्श कर सो सब नाशी॥५५॥

नारद-वचन दोहा

कर प्रणाम हरि चरण में, गमना नाक मझार।
अमर पुष्प वर्षत भये, हरि पर कर जयकार॥५६॥

तब मैं मथुरा पुर गया, हरि इच्छा अनुरूप।
कहा कंस को जो कछू, सो सब सुनिये भूप॥५७॥

देव ऋषि-वचन चौपाई

अरे कंस क्या तव मन माही। सिर पर मृत्यू जानत नाही॥
निज अरि को नहिं निरखत जोऊ। काल ग्रास होवत जन सोऊ॥५८॥
देवकि का सप्तम सुत जोई। नन्द भवन में हलधर सोई॥
अष्टम कृष्णा भये थे जबही। तिनें लेगया वसु सुर तब ही॥५९॥
सुत को नन्द सदन धर आया। यशमति की कन्या तब लाया॥
बकी आदि अनुचर जो थारे। राम कृष्ण ने सो सब मारे॥६०॥

नारद-वचन दोहा

वचन सुनत तब कंस उर, उपजा कोप अपार।
मारण हित वसुदेव के, कर लीनी तरवार॥६१॥

देव ऋषि-वचन चौपाई

भूप कंस इसको मत मारो। याके पद में शृंखल डारो॥
जननी जनक छुड़ावन हेता। आवेंगे हरि राम समेता॥६२॥
सन्मुख अरि आवेंगे जबही। मन भावत करियो तुम तबही॥
मथुरा आवें जिम रिपु दोऊ। करो उपाय भोजपति सोऊ॥६३॥

नारद-वचन दोहा

या विध कहकर दुष्ट को, हम चल आये तात।
जो कुछ कीना कंस ने, सो अब तुमें सुनात॥६४॥

पत्नी युत वसुदेव के, पद में शृँखल डार।
सभा मध्य में जायके, बोला वचन पुकार॥६५॥

कंस-वचन कवित्त

केशी वृन्दावन जावो, देर मत नैक लावो,
राम कृष्ण मम वैरी, तिनको तू मारिये।
मुष्टिक चाणूर जोऊ, सावधान होवो दोऊ,
मल्ल युद्ध कर राम, श्याम भू पछारिये।
कुवलयापीड़ जोई, द्वारे पर ख़ड़े सोई,
वैरी मम आवें जब, तिनें मार डारिये।
तिथि चौदश मझारी, चाप याग की तयारी,
मेचमंच को बिछावो, यज्ञ भू सुधारिये॥६६॥

ध्वज तोरण लगावो, आम्र पत्र को बंधावो,
उदक सुगन्ध युत, भूमि छिड़कारिये।
गलियां बजार माही मैल नैक दीसे नाही,
फूल पत्र वस्त्र कर, पुरी को शृंगारिये॥
बाजे बिविध बजावो, रंडी नाच को नचावो,
दीरघ नशान गाड़ो, नव वस्त्र धारिये।
रागी लोक गान करें, वन्दी वंश को उचारें,
भूतनाथ पूजा हेत, मेध्य पशु मारिये॥६७॥

चौपाई

भो भो दानपते हे भ्राता। सुन अक्रूर मित्र सुखदाता॥
भोज वृष्णि यदुवंश मझारी। तुम सम और न मम हितकारी॥६८॥
हरि को आश्रय कर सुरराजू। जैसे साधित भा निज काजू॥
जब सहायता होगी तेरी। पुजवेगी तिम आशा मेरी॥६९॥
नन्द गोप के व्रज में जावो। वसुसुर के युग सुत को लावो॥
धनुष यज्ञ के देखन हेता। नन्दादिक आभीर समेता॥७०॥
लावो मथुरा दर्स बहाने। जिस विध मम वैरी नहि जाने॥
घृत आदिक कर लावें हीर। यह कारज तुम करिये बीर॥७१॥
मम शत्रुन को जो तू लावें। जिमकिम तिनको हम मरवावें॥
वसुदेवादिक को मरवावूँ। उग्रसेन को घात करावूं॥७२॥
तनु कर वृद्ध भया अब जोई। राजाशा जीरण नहि होई॥
जरासंध प्रिय श्वशुर हमारा। तांके सम को जन बलवारा॥७३॥
शम्बर द्विविध बाण पुन जोई। सो मम मित्र सहायक होई॥
निज बशकर सब राज समाजू। भोगूंगा निष्कंटक राजू॥७४॥

अक्रूर-वचन चौपाई

हे राजन् तव नीक विचारण। कर उपाय जो काल निवारण॥
सिद्ध्यसिद्धि सब दैवाधीनो। फल पर दाता ईश्वर चीनो॥७५॥
बहुविध करत मनोरथ लोकू। हर्ष हेत पर पावत शोकू॥
दुर्घट यह नृप कारज थारा। पर मैं मानूं वचन तुमारा॥७६॥

नारद-वचन दोहा

गेह गया अक्रूर तब, गया कंस निज द्वार।
केसी व्रज में जायके, कीना हिन हिनकार॥७७॥

घन घुमात भा पूछ से, पद कर क्षिति तल फोर।
देख बुलाया कृष्ण ने, तब हय हिनका घोर॥७८॥

पद प्रहार हरि को करा, पद बचाय भगवान।
तांको पद से पकड़ कर, पटका शत धनुमान॥७९॥

पुन खल संज्ञा पायकर, आया वदन पसार।
तांके मुख में कृष्ण ने, निज भुज दीनी डार॥८०॥

बढ़ी भुजा तिसके उदर, विकल भयी सब जान।
पद पछार लेंडे करत, तजे अश्व ने प्रान॥८१॥

कुसुम वृष्टि कर सुरन ने, कीना जय जय कार।
स्तवन करा तब तुरग ने, दिव्य देह को धार॥८२॥

केशी-वचन हरिगीत छन्द

जय राम कृष्ण मुकुन्द माधव, वासुदेव सुजन गते।
गोविन्द अच्युत, नन्द नन्दन, नर नरायण श्रीपते।
वैकुण्ठ पंकजनाभ विष्णो, वरद दामोदर हरे।
गोपाल विश्वक्सेन केशव, चक्रपाणे गिरि धरे॥८३॥

गुण जाति क्रिया विहीन जो श्रुति, नेति नेति बखानिहैं।
मन वाक अविषय रूप तुमरा, नाथ हम किम जानिहैं।
तव नाम को निशि दिवस रटकर, बहुत भव-जलनिधि तरे।
यह सुगम पंथ निहार के प्रभु, नाम हमने उर धरे॥८४॥

चौपाई

मघवा का मैं अनुचर स्वामिन। रूप तेज युत जिम घन दामिन॥
कुमुद नाम तब रहा हमारा। वासव ने वृत्रासुर मारा॥८५॥
पाप उतारण हेत बलारी। अश्वमेध की कीनी त्यारी॥
मख हित शुक्ल अश्व जो पाया। तिसें निरख मम हृदय लुभाया॥८६॥
चढ़न हेत मैं लिया चुराई। भय कर छिपा रसातल जाई॥
सुरपति मोर खोज जब पाया। निज दूतों कर हमें मंगाया॥८७॥
अश्व छीनकर मोको मारा। पुन वज्री ने शाप उचारा॥
राक्षस हो स्वामी अपकारी। मन्वंतर युग हय तनुधारी॥८८॥
सुर अपराध भया मम जोई। तव दर्शन कर छूटा सोई॥
अब किंकर पर करिये दाया। पुन मति को नहिं मोहे माया॥८९॥

नारद-वचन दोहा

कर प्रदक्षिणा कृष्ण को, पुन पुन कीन प्रणाम।
गया स्वर्ग को कुमुद तब, गये गोप निज धाम॥९०॥

प्रात समय रथ बैठकें, श्वफल्क पुत्र उदार।
गया नन्द के धाम में, मन में करत विचार॥११॥

अक्रूर-वचन चौपाई

कौन कर्म शुभ मैंने कीना। क्या अर्थी को वांछित दीना॥
जिन चरणन को मुनिजन ध्यावत। पर प्रत्यक्ष न दर्शन पावत॥१२॥
जिन पद पंकज की कर टेका। दुस्तर तम मुनि तरे अनेका॥
शिव ब्रह्मादिक कर जो अर्चित। कमलाकुच कुंकुम कर चर्चित॥१३॥
राम कृष्ण के पद युग सोई। मम नयनन के गोचर होई॥
भये नष्ट अब मम अघ सारे। बंदूंगा हरि चरण मझारे॥१४॥
मोपर करा अनुग्रह तिसने। हरि दर्शन हित भेजा जिसने॥
अरुण अधर शुभ गोल कपोला। लव मुसकान युक्त मुख बोला॥१५॥
अलका युत मुख शशधर जोई। शगुन होत देखूँगा सोई॥
जिसके जन्म कर्म युत वाणी। करत पवित्र सर्व अघ प्राणी॥१६॥
तिन बिन शवशोभा सम सोई। चित्र काव्य चाहे किन होई॥
सो त्रिलोक अधिपति गुरु श्रीपति। अद्‌भुत रूप नयनसुख सद्‌गति॥१७॥
देखूंगा मैं गोकुल जाई। सुर योषित जांका यश गाई॥
आतम बोध लाभ के हेत। धारत मुनिजन हृदय निकेत॥१८॥
तिन चरणन को वन्दूंगा जब। मम सिर कर धारेंगे हरि तब॥
काल उरग से डर है जोई। तांको अभय देत कर सोई॥१९॥

मोको कंस दूत हरि जाने। पर अरि मति नहि मोमें जाने॥
तिनके पद रति मम उर जोऊ। अन्तर्यामी जानत सोऊ॥१००॥

मोको निज भृत बांधव जान। कंठ लगावेंगे भगवान॥
जन्म सफल तब ही मम होई। कर्म फांस पुन रहे न कोई॥१०१॥

हे अक्रूर सुहृद हे ताता। याविध पूछेंगे युग भ्राता॥
तब आनन्द होवेगा जोऊ। त्रिभुवन में अस सुख नहिं कोऊ॥१०२॥

जांको हरि सत्कारित नाहीं। ताँको धिक्धिक् त्रिभुवन माहीं॥
यद्यपि हरि उर भेद न होई। निज पर मित्र शत्रु नहिं कोई॥१०३॥

तदपि मुकुन्द चरण जो मानत। तांको माधव निजकर जानत॥
जिम सुर द्रुम ढिग जावत जोऊ। यथा भाव फल पावत सोऊ॥१०४॥

नारद-वचन दोहा

पंथ यान को भूल कर, श्वफल्क का सुत भूप।
हरि दर्शन उत्साह मन, ताकर भा तद्रूप॥१०५॥

पहुँचा वृन्दारण्य में, सायं संध्या काल।
महि में हरि पद चिह्न हो, लख कर भया विहाल॥१०६॥

रोमांचित तनु हर्ष मन, चलत नयन जल धार।
व्रज रज में लोटत भया, हरि पद रेणु विचार॥१०७॥

पुन उठ देखे खिड़क में, बालसिंह सुकुमार।
मरकत रजत समान तनु, पीत नील पट धार॥१०८॥

तिनके चरण सरोज में, कीना दण्ड प्रणाम।
विह्वल उर गदगद गिरा, कह न सका निज नाम॥१०९॥

संकर्षण गोविन्द ने, तांको तुरित उठाय।
जान सुहृद निज प्रेम से, पुन पुन कंठ लगाय॥११०॥

हस्त पकड़ गृह लाय के, आसन दीन बिछाय।
चरण धोय मधुपर्क दे, भेंट करी इक गाय॥१११॥

भोजन विविध कराय के, निज कर दाबे पाद।
नन्द मिले अक्रूर से, यादव आये याद॥११२॥

नन्द-वचन चौपाई

क्रूर कंस के जीवत भाई। कैसे तुमरे दिवस विहाई॥
जिम हिंसक के गृह पशु कोई। यादवकुल की तस गति होई॥११३॥

जिसने भगिनी के सुत मारे। भामा भगिनी कीन दुखारे॥
वृष्णिप्रजा उस खल की ताता। क्या पूछें तुमरा कुशलाता॥११४॥

नारद-वचन दोहा

कर शुश्रूषा सर्व विध, संकर्षण गोपाल।
पूछत भये पितृव्य से, निज बंधुन का हाल॥११५॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

भला भया तुम आये ताता। बंधुन का दर्शन सुख दाता॥
क्या पूँछे हम कुशल तुमारा। भया कंस यदुवंश अंगारा॥११६॥

आरज जननी जनक हमारे। हमरे हित दुख सहें अपारे॥
ममहित तिनके सुत खल मारे। तिनके पद में शृंखल डारें॥११७॥

सुत कृत हमने नैक न कीना। वृथा जन्म तिनके गृह लीना॥
पितरों को जो दुख से राखे। तिसको पुत्र निगम मुनि भाखे॥११८॥

जब लग मम बांधव दुख पावत। हमरे मन में चिन्ता तावत॥
जिम कारण आगमन तुमारो। सो कारण अब तात उचारो॥११९॥

अक्रूर-वचन चौपाई

देवकि जठर जन्म सुन थारा। कंस हृदय भा क्रोध अपारा॥
परसों दुष्ट खड्ग ले पानी। शौरी के मारण हित तानी॥१२०॥

नारद मुनि ने करा निवारण। पर बंधुन का बैरी दारुण॥
खल के भय कर बंधु हमारे। देशांतर में बहुत पधारे॥१२१॥

सर्व प्रजा से करत अनीती। असुरों से राखत नित प्रीती॥
तुमको खल निज शत्रु निहारत। रात्रदिवस तव मरण विचारत॥१२२॥

मख की मिषकर तुमें बुलावत। मल्लन से तुमको मरवावत॥
नन्दादिक सब गोप बुलाये। निजकर हित गोरस मँगवाये॥१२३॥

नारद-वचन दोहा

राम सहित गोविन्द तब, वचन सुनत मुसकाय।
कहा कंस संदेश सब, ब्रज पति के ढिग जाय॥१२४॥

मास पारायण बारहवाँ विश्राम॥१२॥
पाक्षिक पारायण छठा विश्राम॥६॥

नन्दराज ने ब्रज विषे, सब को दिया सुनाय।
हलकारे को भेज के, डौंडी पुर पिटवाय॥१२५॥

क्षत्ता-वचन चौपाई

हे गोपो सब देकर काना। कंस भूप का सुनो प्रवाना॥
मथुरा में सब हाजर होवो। लावो भेंट धनुष मख जोवो॥१२६॥
देश देश के बहुजन आये। मथुरा में नृप कंस बुलाये॥
नृप को कर देने के हेत। नंद जायेंगे सुतन समेत॥१२७॥
खेत क्यार में मत को जावो। निज निज गोरस को सब लावो॥
मधु पुर में कल जाना होई। गाड़ी रथ जोतो सब कोई॥१२८॥

नारद-वचन दोहा

राम कृष्ण का गमन सुन, दुखी भये व्रज लोग।
गोप गोपिका बाल सब, सह नहिं सके वियोग॥१२९॥

सुत वियोग कर विकल मन, भयी यशोदा मात।
राम श्याम को गोद ले, तिनको बहु समझात॥१३०॥

यशोदा-वचन चौपाई

हे मुकुन्द संकर्षण भैया। बार बार बल जावे मैया॥
व्रजपति जात कंस के काजू। कौन काम तव राज समाजू॥१३१॥

कंस रखत सुत तुम से वैर। मत दीजो मथुरा में पैर॥
कंस दुष्ट की परजा जोई। भूप समान कुमति सब सोई॥१३२॥

मथुरा में तुम जावो जोऊ। दुख देवेगा दुर्जन कोऊ॥
शहिर निवासी लोक सयाने। तुम वनवासी कुछ नहि जाने॥१३३॥

जब होवोगे तात जुवाना। तब तुम मथुरा देखन जाना॥
अब तुम रहो आपने भौना। लावेगा व्रजनाथ खिलौना॥१३४॥

जब तुम वन गोचारण जावत। तब मेरो मन जो दुख पावत॥
सो जानंत मैं किस को कहहूँ। आवा सम अन्तर से दहहूँ॥१३५॥

जब तुम नयन ओट में जावत। बिन जल झषसम मन घबरावत॥
तव देखे बिन क्षण जो काला। युग सम सो मोको प्रिय लाला॥१३६॥

बिन तव वदन निहारे ताता। किम जीवेगी तुमरी माता॥
चाहे कितना मन ललचावो। गृह से बाहिर जान न पावो॥१३७॥

नारद-वचन दोहा

यावधि कहकर रुदन कर, सुत को कण्ठ लगात।
राम श्याम के वदन को, पुन पुन चूमत मात॥१३८॥

निज वियोग से विकल लख, माता को यदुभूप।
तांको धीरज देन हित, बोले वचन अनूप॥१३९॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

इतना दुख क्यों पावो माता। हमरे साथ जात हैं ताता॥
और गोप सब संग हमारे। कौन बात की चिंता थारे॥१४०॥

तव आशिष सों सब सुख होई। क्या कर सकत हमारा कोई॥
हम तो मथुरा देखन जावत। बिन बोले को हमें सतावत॥१४१॥

भला बुरा होवो भव मांही। तिनसे मम कुछ कारज नाहीं॥
योग वियोग युगल विधि हाथा। को नहि चाहित प्रियका साथा॥१४२॥

योग वियोग यदी नहिं होई। लोक विहार चले नहि कोई॥
जननी उर में धीरज धरिये। मम मारग में विघ्न न करिये॥१४३॥

नारद-वचन दोहा

राम कृष्ण के दर्श हित, गोपी सकल नरेश।
नन्द द्वार जावत भयीं, जिन उर विरह कलेश॥१४४॥

राम कृष्ण के चरित शुभ, जब उर आये याद।
रुदन करत गद्गद् गिरा, तनु मन भरा विषाद॥१४५॥

गोपी-वचन चौपाई

हे विधि तव करतूत न नीकी। नहिं जानत पीड़ा पर जी की॥
हितकर प्रथम पियूष पिवावत। पुन तू तांको गरल खवावत॥१४६॥

बालक से तुमरी मति भोरी। क्या तू हमसे कर है खोरी॥
तीन लोक की सुन्दरताई। तव मति की सकली निपुणाई॥१४७॥

राम कृष्ण की मूरति मांहीं। लव पटतरता पावत नाहीं॥
अस कमनीय धाम दिखलाई। नयनन की कीनी सफलाई॥१४८॥

नेत्र ओट अब करन विचारी। यह कृत तुमरी लगत न प्यारी॥
गृह आश्रम के विविध कलेशा। शूल तुल्य सब दुखद हमेशा॥१४९॥

राम श्याम के दर्शन करके। भूल जात दुख सकले घर के॥
पती पुत्र तनु सब परिवारा। इन बिन कुछ नहि लागत प्यारा॥१५०॥

चले जानगे जब वनमाली। कैसे जीवेंगी हम आली॥
मंद मंद मुसकान सुहाई। तिरछी चितवन की ललिताई॥१५१॥

मधुर मनोहर सुन्दर वानी। मति श्रुति सुखद प्रेमरस सानी॥
मूरति सुभग याद जब आवत। हमरी छाती फटफट जावत॥१५२॥

राम श्याम अब भये कठोरा। तनक न निरखत हमरी ओरा॥
जबतो हँस कर मन हर लीना। अब हमसे इनने पिठ दीना॥१५३॥
हमरा भाग्य अस्त भा आजू। जो जावत व्रज से व्रज राजू॥
मथुरा पुर वासी जन जोई। भाग्य उदय तिनके अब होई॥१५४॥
यह जो जरठ गोप पति प्यारी। विधि ने इनकी भी मति मारी॥
श्याम चलन को उद्यत होई। इनको नहि अब रोकत कोई॥१५५॥
हम तो इनको अब रख लेवें। किस विधि भी नहि जाने देवें॥
पर प्रिय के प्रतिकूल अचरणा। सोबी हमको योग्य न करणा॥१५६॥

नारद-वचन दोहा

व्रज वनिता उर खेद के, शांत हेत भगवान।
तिनके ढिग तब जायके, बोले वचन सुजान॥१५७॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

क्यों इतनी चिंता तुम करहो। निज विषाद को अब परिहरहो॥
जैसे तुम मोको प्रिय जानत। ऐसे ही हम तुमको मानत॥१५८॥
जस हमरी यशमति महतारी। तैसे ही तुम मोको प्यारी॥
बहु विध तुमने हमें लड़ाया। माखन मिशरी बहुत खवाया॥१५९॥
निजसुत मांहि स्वभावक प्रेमा। होत सकल का यह जग नेमा॥
तिनसे अधिक कीन तुम प्रीती। मोमे मेट जगत की रीती॥१६०॥

तुमसे उऋण न मम तनु होई। कोटिक यत्न करूँ किन कोई॥
जिनने मम हित तनुसुख त्यागा। पति सुत संपद में अनुरागा॥१६१॥
जो जांके उर वसत सयानी। कोटि कोस पर सो ढिग जानी॥
जांका जाके मन नहि वासा। शतयुग पर सो हो किन पासा॥१६२॥
जिम सरोज सूरज अनुरागा। ढिग शशि छाया मांहि विरागा॥
मथुरा को कुछ दूर न मानो। झटिति मिलेंगे निश्चय जानो॥१६३॥

नारद-वचन दोहा

इतने में बालक सकल, आये नन्द अगार।
राम कृष्ण पद प्रेम कर, बोले वचन कुमार॥१६४॥

सखा-वचन चौपाई

संकर्षण दामोदर भैया। किन्न चरावोगे फिर गैया॥
जो हमको तज इकले जावो। क्या तुम पुन व्रज में नहिं आवो॥१६५॥
तुम बिन हमको अन्न न भावत। मात पिता गृह सुख न सुहावत॥
बिना तवामृत गरल समाना। दीसत सदन तुल्य शमशाना॥१६६॥
भूषन वसन न लागत प्यारे। बिन तव दर्स स्वजन सुखकारे॥
सम्पद लागत विपद समाना। भोग रोगसम दुखकर नाना॥१६७॥
तुम बिन हमरा गृह को काजू। भले मिले किन सुरपति राजू॥
कैसे रहित देह बिन प्राना। तुम हमको हो प्राण समाना॥१६८॥

जो हमको तजकर तुम ताता। मधुपुर में जावोगे भ्राता॥
अन्न त्याग हम विपिन मझारी। तनु त्यागेंगे शपथ तुमारी॥१६९॥

श्री बलराम-वचन चौपाई

विषम विषाद तजो अब ताता। हमरे साथ चलो तुम भ्राता॥
मथुरा देखन का सुख जोई। तुम बिन हमको कैसे होई॥१७०॥
सखा सहायक सुख दुख माहीं। मित्र समान बंधु को नाहीं॥
करत मनोरथ जो मम मीत। सो हम पूरण करें सप्रीत॥१७१॥
तुम सम हमको प्रिय नहिं भाई। सत्य कहूँ मैं तोर दुहाई॥
भूषण वसन पहिर कर आवो। गाड़ी रथ असवारी लावो॥१७२॥

नारद-वचन दोहा

या विध सबको धीर दे, माधव राम समेत।
करी सैन अक्रूर को, रथ ल्यावन के हेत॥१७३॥
जब यशुमति ने जानिया, वरजे रहत न श्याम।
हरि के कर को ग्रहण कर, सौंपा कर बलराम॥१७४॥

यशोदा-वचन चौपाई

संकर्षण तुम सब विध स्याने। हठ वश दामोदर नहि माने॥
करनी तात श्याम रखवारी। अटके मत किसि से गिरिधारी॥१७५॥

अनुज स्वभाव पुत्र तुम जानो। करत काम अपना मन मानो॥
चपल शरीर धीर नहिं मन में। छेड़त रहा खलन को वन में॥१७६॥

सदा राखना इसको पास। नहिं करना इसका विश्वास॥
सैलन का यह बहुत पयारा। भूल जाय मति शहिर बजारा॥१७७॥

शहिर दिखाय खवाय मिठाई। लाना तुरित अनुज निज भाई॥
जब लग नहिं आवोगे भैया। मग देखेगी तुमरी मैया॥१७८॥

तुम बिन जब देखूँगी भौन। तब मोको दुख होगा जौन॥
सो दुख किम जावेगा ताता। बिन देखे तब मुख जलजाता॥१७९॥

तव दर्शन आशा उर धारी। जिम किम जीवेगी महतारी॥
जननी भूल जाय तिन ताता। रो रो तनु त्यागेगी माता॥१८०॥

जावो शिव मग होवन थारे। पाँच देव तुमरे रखवारे॥
मम जो कछू सुकृत व्रत नेमा। ताकर तुमको होवो क्षेमा॥१८१॥

नारद-वचन दोहा

अनवाये पहराय के, राम कृष्ण को मात।
निज उत्संग बिठाय के, ओदन दधी खवात॥१८२॥

मात यशोदा रोहिणी, चरणन में हर्षाय।
राम श्याम ने वंदना, कीनी सीस झुकाय॥१८३॥

कंठ लगावें सुतन को, जननी बारम्बार।
गदगद गिर रोमांच तनु, नयन स्रवत जलधार॥१८४॥

तज न सकत निज सुतन को, जैसे मछली नीर।
पुन प्रणाम कर मात को, समुझाया यदुवीर॥१८५॥

नन्दादिक व्रज गोप तब, गोरस सकट धराय।
कृष्ण सखन के सहित सब, गये गणेश मनाय॥१८६॥

चले यान में बैठ पुन, राम कृष्ण अक्रूर।
विरह विकल सब गोपिका, गमनी किंचित् दूर॥१८७॥

जब लग रथ दीसत रहा, जब लग दीसा केतु।
तब लग रथ पाछे गयीं, पुन सब भयीं अचेत॥१८८॥

ऊँचे स्वर रोने लगीं, तज लज्जा व्रज दार।
यशमति तब मूर्छित भयीं, रही न देह समार॥१८९॥

पकड़ भुजा से तास को, गोपी ल्याईं धाम।
बोली पुन सुध पायके, हे मुकुन्द हे राम॥१९०॥

यशोदा-वचन रेखता

बिना गोपाल के देखे, नहीं मन धीर धारे है।
कभी घनश्याम के मुख को, नयन मम युग निहारे है।
तजी क्यों जीवती जननी, दया नहि चित्त थारे है।
अहो मै मन्दभागिनि हूँ, मुझे नहि काल मारे है॥१९१॥

तनू मन करण को पलपल, विरह की अनल जारे है।
भवन यह भूत घर दीसे, सकल सुख लगत खारे है।
कहाँ अब राम को देखूँ, कहाँ गोविन्द प्यारे हैं।
अरे अक्रूर तव करणी, क्रूर जिम नाग कारे हैं॥११२॥

नारद-वचन दोहा

राम कृष्ण के चरित्र को, पुन पुन करके याद।
भूल गई गृह कृत सकल, मनमें बढ़ा विषाद॥११३॥

जिन निरखी शशि श्यामछवि, मदनमोहनी भूप।
तन्मय तन्मति कुमुद को, त्रिभुवनसुख रवि रूप॥११४॥

राम कृष्ण अक्रूर तब, पहुँचे यमुना तीर।
हस्त पाद प्रक्षाल कर, पीना शीतल नीर॥११५॥

सबल श्याम को रथ विषे, बैठाये मिथिलेश।
गांदिनि तनय सनान हित, सरिता कीन प्रवेश॥११६॥

राम कृष्ण को जल विषे, देख हृदय अकुलान।
पुन बाहिर निरखत भया, रथ बैठे भगवान॥११७॥

जल में देखन हेत पुन, कीना सरित प्रवेश।
रत्न रचित शुभ सदन में, देखे फणिपति शेष॥११८॥

घनाक्षरी छन्द

दशशत फिर फन, रौप्यसम श्वेत तनु,
विषहीन शेष देव, नील पट धारे हैं।
तांकी गोद अभिराम, मरकत सम श्याम,
बैठे देव देव हरि, पीत पट वारे हैं।
शंख चक्र गदा कंज, धारे भुज चार मंजु,
मुख मुसकान युत, अधरारुण वारे हैं।
नखर प्रवाल लाल, गलमणि वनमाल,
चिक्कन सदर्भ वक्र, सीस केश कारे हैं॥१९९॥

कुंडल किरीट भाल, जामें मोती हीरा लाल,
नूपुर पदारविन्द कटि कांची धारे हैं।
विविध श्रृंगार देह, सिन्धुसुता कर नेह,
निज दासी गणयुत, पाद सेवाकारे हैं।
शिव विधि सनकादि, इन्द्र नारद प्रह्लाद,
सुनंद आदि पार्षद, स्तोत्र को उचारे हैं।
कोई चामर झुलावें, सीसछत्र को फिरावें,
कोई कर जोरकर मुख को निहारे हैं॥२००॥

सोरठा

निरख रूप अभिराम, हर्ष युक्त हो धीर धर।
करके दण्ड प्रणाम, करा स्तवन कर जोर कर॥२०१॥

अक्रूर-वचन सवैया

पुरुषोत्तम आद्य नरायण जू, भव के सब कारण के तुम कारण।
तव नाभिसरोज प्रफुल्लित से, विधिभा तिससे सब सृष्टिउधारण।
क्षिति नीर तथा अनलानिल खं, प्रकृती पुन पूरुष सूत्र महारण।
मन इन्द्रिय गोचर देव अहं, तुमरे सब अंग समान उचारण॥२०२॥

गुण मायिकसात्त्विक आदिक जो, तिनने अज आदिक आवृत कीना।
प्रकृती गुण से पर रूप चिती, तुमरा विधि आदिक ने नहि चीना।
तुमको दुरज्ञेय विचार मुनी, जनने तव पूजन में मन दीना।
तुमरे अधिदैव स्वरूप विषे, निज मानस को कर हैं लिव लीना॥२०३॥

पुन केचित याग वितानन में, यजहैं तुमको सुर रूप निहारी।
निज कर्म समर्पण को करहैं, तुमरे पद में शम आदिक धारी।
शिव शक्ति गणेश शशी रवि को, निज पूजत हैं तव रूप विचारी।
निज आतम जानत हैं तुमको, बहुरूप अरूप विभू तनुधारी॥२०४॥

मघवादि दिवौकसको मख में, जन पूजत हैं उर आदर धारे।
शिव आदिक को नित ध्यावत जो, मुख से तिनका पुन नाम उचारे।
तुमरे सब पूजक जापक हैं, जिससे सब निर्जर रूप तुमारे।
नभ से च्युत नीर निकाय यथा, सरिता मिल जावत सिंधु मझारे॥२०५॥

अनलानन श्रोत्र दिशा पृथिवी, पद नेत्र शशि रवि नाथ तुमारे।
नभ नाभि त्रिविष्टप शीश भुजा, अमृतांधस हैं जठरांबुधि थारे।

पुन मारुत प्राण शिरोरुह हैं, घन रोम नगौषधि अस्थि कुधारे।
युत जीव चतुर्दश लोक विभो, नित कल्पित अच्युत रूप मझारे॥२०६॥

जिमि गूलर में मशकौघ रहें, जलमांहि जलौकस सूक्षम प्रानी।
भव अंडकटाह अनेक प्रभो, तुमरे जठरान्तर सृष्टि समानी।
तुम चेतन सत्य असंग सदा, निखिलातम हो अखिलान्तर ज्ञानी।
जड़ प्राकृत साथ संबन्ध नहीं, मृग कल्पित नीर मही नहि सानी॥२०७॥

धन गेह स्वदेहज देह विषे, मनने मम भाव अहंकृति ठानी।
तुमरी प्रकृती कर कल्पित भी, जड़ जीवन ने सत ही कर मानी।
दुख रूप अनित्य अनातम में, सुख नित्य निजातमता नित जानी।
इससे भ्रम हैं नित कर्मन में, नहिं पावत मूढ़ कदापि गलानी॥२०८॥

तिन दीनन मांहि दया करके, तनु धार चरित्र करो तुम स्वामी।
जिनको सुनके नित गान करें, भवसिंधु तरें तुमरे अनुगामी।
वटुरूप धरा बलि वश्य करा, सुर पालक वामन अंतरयामी।
हयग्रीव अलौकिक वेष तनू, मधुकैटभ नाशक को प्रणमामी॥२०९॥

अवतार महा कमठांग नमो, जिनने मदराचल पीठ धरे।
भृगुनन्दन राम युगांघ्रि नमो, जिसने क्षितिपाधम नाश करे।
प्रणमो रघुनाथ पदाम्बुज को, खल रावण के जिन प्राण हरे।
पुन आनक दुन्दुभि नंदन के, पद में शत वंदन हैं हमरे॥२१०॥

बलवान खलेन्द्रिय अश्व विभो, मति सारथि के वश आवत नाहीं।
तनुयान समेत हरें मति को, पटके निज गोचर कूपन माहीं।

भव में भयभीत भया भगवन्, तुमको तज और कहाँ जन जाहीं।
अब पाहि प्रभो शरणागत को, प्रणमामि हरे तुमरे पद ताहीं॥२११॥

नारद-वचन दोहा

स्तवन करत अक्रूर के, सकल समाज समेत।
जल में अंतर्धान तब, भये कृष्ण खग केतु॥२१२॥

कंस क्रूरता जानकर, शंकित भा अक्रूर।
तांते निज वैभव तिसे, दिखलाया यदुशूर॥२१३॥

सोबी बाहिर आयके, कर संध्या हरि ध्यान।
रथ समीप ज़ावत भया, पूछत भा भगवान॥२१४॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

महि में नभ में वा जल मांई। क्या निरखा तुम अद्भुत न्यांई॥
तैसे ही तव मुख दरसाता। देखा तुम कुछ अद्भुत ताता॥२१५॥

अक्रूर-वचन चौपाई

क्षितिजल नभ में अद्भुत जोऊ। विश्वरूप तुम में सब सोऊ॥
निरखत हूँ सर्वातम तोको। क्या नहि दीसत अद्भुत मोको॥२१६॥

निज माया को तुम सब जानो। इतर जीव सब देख भुलानो॥
तुमरी कृपा पात्र जन जोई। तिनको कुछ विस्मय नहि होई॥२१७॥

नारद-वचन सोरठा

या विध तब बतराय, रथ हाँका अक्रूर ने।
निरख निरख हर्षाय, मारगवासी नारि नर॥२१८॥

मार्गवासी-वचन चौपाई

यह सुन्दर बालक युग जोऊ। क्या यह नर नारायण दोऊ॥
अथवा राम लखण युग भाई। अद्भुत रूप न निरखा जाई॥२१९॥

विधि सृष्टी में यह नहि होई। सुन्दर रूप अलौकिक कोई॥
धन्य मात सो जिसने जाये। धन्य धन्य जिस गोद खिलाये॥२२०॥

धन्य भाग्य हैं हमरे भयना। जिन निरखे यह बालक नयना॥
क्या करिये इनकी महमानी। ग्रीव गमार दीन हम प्रानी॥२२१॥

विधिकर रचत त्रिलोकी माहीं। इन लायक कुछ वस्तू नाहीं॥
चहिये सुर सादृश उपहारा। लौकिक वैदिक यही विचारा॥२२२॥

वृद्धा-वचन चौपाई

यह शौरी के पुत्र ललामा। राम कृष्ण इनकर यह नामा॥
कंस दुष्ट के भयकर सोऊ। नन्द सदन में राखे दोऊ॥२२३॥

इनको अपना पुत्र निहारे। नन्दराज ने निज गृह पारे॥
कंस दूत अक्रूर समेता। जावत मथुरा धनु मख हेता॥२२४॥

इनके मात पिता इन कारण। करे कैद में भूपति दारुण॥
इनसे वैर रखत खल सोई। क्या जाने कल को क्या होई॥२२५॥

कन्या-वचन चौपाई

यह अक्रूर क्रूर अति माता। जो इनको मधुपुर ले जाता॥
यह बालक अतिशय सुकुमारा। नृप से क्या प्रचलेगा चारा॥२२६॥

नन्द गोप ने यह क्या कीना। जो इसके कर इनको दीना॥
जानत थे नृप को रिपु जोऊ। इसके साथ आय किम दोऊ॥२२७॥

प्रौढ़ा-वचन चौपाई

देखन को यह बालक प्यारी। सुन्दर अति कोमल तनुधारी॥
बकी धेनुकादिक इन मारा। गिरि गोवर्धन कर पर धारा॥२२८॥

मारेंगे यह नृप को आली। शगुन होत मोको इस काली॥
मात पिता की बन्ध छुड़ाई। राज्य करेंगे मधुपुर जाई॥२२९॥

समष्टि-वचन चौपाई

सखि साची होवो तव वानी। बैठ वदन तव कहत भवानी॥
रहवेंगे मधुपुर यह जोई। दर्स करेंगी हम मिस कोई॥२३०॥

होवेगी सब प्रजा सुखारी। इनके सुन्दर रूप निहारी॥
राज्य योग्य यह दोनों भाई। जोउ विधाता होय सहाई॥२३१॥

नारद-वचन दोहा

रहे पहिर दिन मधुपुरी, पहुँचे तब यदुवीर।
पुरसमीप आराम में, नन्दादिक आभीर॥२३२॥

मग देखत थे कृष्ण का, तिनको मिलकर श्याम।
हस्त पकड़ अक्रूर का, बोले वचन ललाम॥२३३॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

स्यंदन सहित सदन तुम जावो। कंस भूप को खबर सुनावो॥
कर विश्राम सहित निज भ्राता। हम पुर देखन जांगे ताता॥२३४॥

अक्रूर-वचन चौपाई

तुम दोनों बिन मधुपुर माहीं। प्राणनाथ मैं जावूँ नाहीं॥
शरणागत वत्सल प्रभु तोको। तजना योग्य नहीं अब मोको॥२३५॥

नन्दादिक व्रज गोप समेता। चलिये साग्रज दास निकेता॥
तुमरे पद पंकज रज जोई। ताकर गृह पवित्र मम होई॥२३६॥

जब हम धोवेंगे पद थारे। तृप्त होनगे पितर हमारे॥
बलि ने तव पद धोये जब ही। भोग मोक्ष पाया तिस तब ही॥२३७॥

तुमरे पद का धोवन जोऊ। करत विमल त्रिभुवन को सोऊ॥
जिसको शंकर सिर में धारे। जिसने सगर भूप सुत तारे॥२३८॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

मत सोचो उर में कुछ ताता। तुम मम प्रिय जिम आरज भ्राता॥
मम जन चितवत मन में जोऊ। करूं मनोरथ पूरण सोऊ॥२३९॥

पूरव मातुल की ले सारा। पाछे निरखेंगे गृह थारा॥
पुन हमरे बांधव जन जोई। सुख पावेंगे सब विध सोई॥२४०॥

नारद-वचन दोहा

गांदिनि सुत हरि वचन सुन, विमन होय धरि मौन।
हाल सुनाकर कंस को, पुनगमना निज भौन॥२४१॥

करे प्रेम से गान नित, जो कोई यह ताल।
ताको निज वैकुण्ठ पद, दर्सावें गोपाल॥२४२॥

इति श्रीमत्परमहंसोदासीनशिरोवतंसस्वामिकार्ष्णिज्ञानदास-
शिष्येण स्वामिकार्ष्णिगोपालदासाह्वेन विनिर्मिते
गोपालविलासे पूर्वविश्रामे वरुणलोकसर्पान्नन्द-
मोचनादिवर्णनं नाम नवमस्तालः समाप्तः ॥९॥

मास पारायण तेरहवाँ विश्राम ॥१३॥
सासाहिक पारायण तृतीय विश्राम॥३॥

ॐ

श्रीवृन्दावनविहारिणे नमः

अथ दशमस्तालः-१०

श्लोकः

गत्वाऽहन् यदुपत्तनेऽथ रजकं यः सौचिकाय श्रियं
मालापण्यकृते बभञ्ज च धनुर्नागञ्च मल्लानहन्।
कंसं सानुजपापिनं स्वपितरौ यो मोचयित्वा रिपोः
प्रादाद्राज्यमथोग्रभूमिपतये कृष्णाय तस्मै नमः॥१॥

स्वकटिर्भ्रुकुटिः केशाः, किरीटः कुटिला धृताः।
ऋज्वी कुब्जा कृता येन, तस्मै लीलात्मने नमः॥२॥

नारद-वचन दोहा

अनुज हृदय की जान अथ, रौहिणेय भगवान्।
हस्त जोड़ कर नन्द से, बोले तब सुखखान॥३॥

श्रीबलराम-वचन चौपाई

सखन समेत तात घनश्यामू। निरखन चाहित हैं मधुधामू॥
तुमरे भयकर कहत न सोऊ। बिन अनुशासन जात न कोऊ॥४॥

यदी तात तब आज्ञा पावूं। पुरी दिखान हेत ले जावूं॥
इनको पुर शोभा दिखलाई। तुरित आँयगे हम युग भाई॥५॥

नन्द-वचन चौपाई

सुत सरलाई से तुम जाना। नगर निरख झटिती चल आना॥
रखना ख्याल अनुज का ताता। बिन छेड़े छेड़त तव भ्राता॥६॥

वृन्दावन सम मथुरा नाहीं। जो निर्भय विचरो पुर माँहीं॥
कंस नृपति के नगर मझारी। भय युत रहत सर्व नर नारी॥७॥

नारद-वचन दोहा

एवमस्तु कह सुहृदयुत, सानुज गमने राम।
नगर अग्र छबि निरखकर, बोले वचन ललाम॥८॥

श्रीबलदेव-वचन चौपाई

देख तात यह पुरी सुहावन। दर्शन से करिहै नर पावन॥
इसमें जन्म मरण जस होई। गर्भ वास पुन पाव न सोई॥९॥

तीर चलति यमुना अतिशोभित। जिसके घाट देख मन लोभित॥
दर्स सनान पान पुन जोऊ। करत नरक में जात न सोऊ॥१०॥

कनकरचित मणिखचितकपाटा। विविध वस्तु युत शोभित हाटा॥
कहीं सराफ बजाज पसारी। कहीं कसेरे गंधि अतारी॥११॥

कहूँ सुदागर सेठ सुनारा। हलवाई शिल्पी स्त्रक् कारा॥
जनु मय नेनिज हस्त बनाई। सुरपुर से बी अधिक सुहाई॥१२॥

करत सपर्श व्योम में भौना। रजत भीत चित्रित विच सोना॥
रत्न जड़ित छज्रा छबि छाई। मणिमय फरस बजार सुहाई॥१३॥

गृह गृह में फूली फुलवारी। सिंचत नीर नारि सुकुमारी॥
रुक्मदंडध्वज तोरण माला। शोभित भवन भवन में जाला॥१४॥

कुंकुम जल सिंचित चहुँ ओरा। कूजत पिक शुक सारस मोरा॥
तव दर्शन हित चढ़ी अटारी। चन्द्र मुखी मृग नयनी नारी॥१५॥

तजकर निजनिज गृहकृतजोई। तव मुख चन्द्र चकोरी होई॥
दुग्ध पिवत सुतको तज धाई। कोई भोजन करन न पाई॥१६॥

किनने अस्त व्यस्त तट धारे। किनने इक इक अंग शृंगारे॥
एक नयन में अंजन डारा। दूसर की नहिं रही समारा॥१७॥

नारद-वचन सोरठा

पहुँचे चौक बजार, करत वारता अनुज सन।
तिन पर पुर की नारि, कुसुम वृष्टि करती भयी॥१८॥

पुरनारी-वचन चौपाई

धन्य धन्य अति व्रज की नारी। जिन यह जोड़ी युगल निहारी॥
कौन तपस्या तिन की आली। जिनके सदन वसत वनमाली॥१९॥

अहो भाग्य हमरे अब प्यारी। जिनके गोचर बल गिरिधारी॥
यह सुन्दर पंचानन छोना। व्रजवनिता कर कमल खिलोना॥२०॥

मुकुट लटकं निरखो री यांकी। मुखमुस्कान सुचितवन बांकी॥
वनमाला मौक्तिक की दामा। शोभित कम्बू कण्ठ ललामा॥२१॥

मस्तक कुंकुम चंदन खोरा। युग्म किशोर नारि चितचोरा॥
कटि कस फैंट पीत पट कारे। पदपंकज नूपुर झनकारे॥२२॥

गौर श्याम यह सुभग कुमारा। धसकर दिल में लोचन द्वारा॥
हर लीना हमरा मन भैना। बिन निरखे अब परत न चैना॥२३॥

किसविध इनको मधुपुर माहीं। विधि राखें व्रज जावें नाहीं॥
हमरा भाग्य होय सखि जोई। नित प्रति इनका दर्शन होई॥२४॥

नारद-वचन दोहा

पुर शोभा निरखत हुए, जहिं जहिं जावत श्याम।
सदनन से उठ पुर मनुज, देत तिनें विश्राम॥२५॥

सत्कारत धर भेंट सब, हरि को राम समेत।
पुष्पांजलि दे विप्रवर, विविध आशिषा देत॥२६॥

पुनर एक रंगरेज मग, चला जात नृप धाम।
विविध वसन निज साथ ले, तब बोले घनश्याम॥२७॥

श्रीकृष्ण वचन चौपाई

यह जो सुन्दर वसन तुमारे। सो सब पहरन योग्य हमारे॥
देवेंगा हमको तूं जोई। उभय लोक तुमरा हित होई॥२८॥

धोबी-वचन चौपाई

गिरि वन में तुम रहने वारे। तव पितरों ने अस पट धारे॥
क्यों ऊँचे आवो तुम ग्वाला। क्या तुमरा ढिग आया काला॥२९॥
भूपन के पट को तुम चावो। जीना होय तुरित चल जावो॥
सुन पावेगा नरपति जोई। मारेगा तुम सबको सोई॥३०॥

नारद-वचन दोहा

या विधि तांके जल्पते, क्रुद्धित हो जगदीस।
तनु से लिया उतार तब, कर से तांका सीस॥३१॥
भाग गये तिसके अनुग, वसन पोट सब त्याग।
राम कृष्ण गोपाल सब, तिनको पहरन लाग॥३२॥
अस्त व्यस्त पहरत भये, दरजी एक निहार।
यथा योग्य तब तास ने, सबका कीन शृंगार॥३३॥
तिस पर परम प्रसन्न हो, संकर्षण घनश्याम।
सम्पद बल ताकों दिया, भक्ति ज्ञान निज धाम॥३४॥

पुन माली के धाम में, गये कृष्ण बलराम।
देख सुदामा तिनों को, कीना दण्ड प्रणाम॥३५॥

अर्घ पाद्य आसन दिया, माला चन्दन खोर।
भक्ति युक्त आगे खड़ा, बोला तब कर जोर॥३६॥

सुदामा-वचन चौपाई

सफल जन्म भा आज हमारा। जो मम गृह तव चरण पधारा॥
भया पवित्र वंश मम आजू। हर्षे सुर ऋषि पितर समाजू॥३७॥

तुम युग सकल जगत के कारण। प्रकटे महि निजजन हित तारण॥
विश्व सुहृद जगदातम दोऊ। विषय दृष्टि नहिं तुमरी कोऊ॥३८॥

शत्रु मित्र प्रभु तुमरे नाहीं। करो कृपा पर दासन माही॥
आज्ञा करो हमें यदुराई। नाथ करूँ क्या तव सिवकाई॥३९॥

नारद-वचन दोहा

हरि इच्छा को जानकर, मालाकार उदार।
पहराये तब सकल को, विविध कुसुम के हार॥४०॥

तिसको बल सम्पद दिया, यश कांती अवनीश।
पुन प्रसन्न हो तास पर, बोले तब जगदीश॥४१॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

सखे सुदामन् तव रति जोवत। हमरे उर हुलास अति होवत॥
मांगो वर जो तुमको प्यारा। तजकर तात सँकोच हमारा॥४२॥

सुदामा-वचन सवैया

सुनिये यदुराज दयालु हरे, मम नाथ विभो विनती सुखकारे।
बिन प्रीति न देह रहे क्षण में, तनु से मम होव न प्राण नियारे।
जन की रति वृत्ति त्रिकाल रहे, जिम आतम नित्य अखंड खरारे।
तव दास यही वर मांगत है, मम प्रीति बढ़े प्रलये जिम वारे॥४३॥

रति हीनन के नहिं साथ चलूं, तिनकी नहि संगति को मन कारे।
नहिं वास करूं पल एक कबी, तुमरी रति हीन कुदेश मझारे।
यदि पूरव पापन के वश सों, गमनूं तनुको मम काल न मारे।
तव दास यही वर माँगत है, मम प्रीति बढ़े प्रलये जिमि वारे॥४४॥

रति हीनन की नहिं बात सुनूं, तिनको पुन नो मम नेत्र निहारे।
बिन प्रीति निबंध समूह जिते तिनको, तिनको मम बुद्धि प्रभो न विचारे।
प्रीति विहीन मनुष्यन के, जल भोजन में मन ना रुचि धारे।
तव दास यही वर माँगत है, मम प्रीति बढ़े प्रलये जिम वारे॥४५॥

जग खेचर भूचर जीवन में, तुमरे पद में जन जो रति वारे।
गुरु मात पिता प्रिय बन्धु वही, नर नीच तथापि सुमित्र हमारे।
नित वास करूं तिनके युत मैं, रति की गति जो जन जानन हारे।
तव दास यही वर माँगत है, मम प्रीति बढ़े प्रलये जिम वारे॥४६॥

न च भोग चहूँ न च मोक्ष चहूँ, न च मान चहूँ बिन दर्शन थारे।
तव पाद समीप निवास चहूँ, जिम प्रीति बढ़े करिये तिम प्यारे।
बिन प्रीति न अन्य रुचे मन में, तरषातुर को जिम नीर उदारे।
तव दास यही वर माँगत है, मम प्रीति बढ़े प्रलये जिम वारे॥४७॥

नारद-वचन दोहा

एवमस्तु कह कृष्ण तब, आगे गये बजार।
चन्दन भाजन कर लिये, देखी कुब्जा नार॥४८॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

को है तू किसकी वर नारी। किस हित यह चन्दन की थारी॥
यह सुगन्ध तुम हमको देवो। तातकाल निज श्रिय को लेवो॥४९॥

कुब्जा-वचन चौपाई

मैं हूँ कंस भूप की दासी। कुब्जा नाम योग्य उपहासी॥
मम कर घिसिया चन्दन जोई। भूपति को प्रिय लागत सोई॥५०॥
लेवा चन्दन सुन्दर प्यारे। तुमसे अधिक न दयित हमारे॥
मधुरालाप रूप जो थारा। तिसने हरिया चित्त हमारा॥५१॥

नारद-वचन दोहा

या विध कह चन्दन दिया, कीनी सबने खोर।
निज सेवा फल देन हित, तांको नन्द किशोर॥५२॥
पद से पद को दाब के, कर से चुबुक उठाय।
तातकाल सीदी करी, भयी जुवान सुकाय॥५३॥

कृष्ण हस्त के पर्स से, भयी मनोहर गात।
पकड़ वसन से श्याम को, बोली मुख मुसकात॥५४॥

सैरंध्री-वचन चौपाई

चलिये प्रिय हमरे गृह माहीं। मैं तुमको तज सकती नाहीं॥
हो प्रसन्न पुरुषोत्तम प्यारे। हे चित चोर शरण मैं थारे॥५५॥

नारद-वचन दोहा

बालक सब हँसने लगे, पीटत निज कर ताल।
अग्रज से शरमाय के, बोले वचन गुपाल॥५६॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

मथुरापुर की धन्य लुगाई। जो बिन जाने गृह ले जाई॥
परदेशी क्या चाहित और। रहने को पाई एक ठौर॥५७॥
कछू जरूरी काम हमारे। अब नहिं जावें भवन तुमारे॥
आवेंगे कारज कर तोरे। कर विश्वास वचन में मोरे॥५८॥

नारद-वचन दोहा

वसन छुड़ाकर तास से, गमने नंद किशोर।
मथुरा वासी जनों से, पूछ चाप की ठोर॥५९॥
इन्द्र धनुष सम धनुष सो, अष्ट धातुमय तात।
पाँच सहस मानुष बली, मिलकर जिसें उठात॥६०॥

रोक रहे राखे सकल, हठ कर तब गोपाल।
तोड़ा चाप चढ़ाय के, यथा ईख को व्याल॥६१॥

धनुष भंग के शब्द कर, पूरण भया अकास।
डगमगात भा भूमितल, तब बहु गिरे निवास॥६२॥

रखवारे कर शस्त्र ले, आये लड़ने हेत।
चाप टूक ले हाथ में, राम कृष्ण रणखेत॥६३॥

सब सेना को मार कर, साग्रज गोप मुरारि।
गये नन्द के शिविर में, अस्त भया तिमिरारि॥६४॥

हस्त पाद प्रक्षाल कर, पायस पूरी खाय।
सुख सों सोये शर्वरी, राम कृष्ण युग भाय॥६५॥

चाप भंग सेना मरण, सुनकर तब भूपाल।
भय प्रयुक्त हो सचिव से, कहा आपना हाल॥६६॥

कंस-वचन चौपाई

अब मम मरणा दीसत भाई। भयकर निश में नींद न आई॥
मृत्युदूत अपशगुन निहारी। कंपन होवत उर में भारी॥६७॥

दर्पण में शिर दीसत नाहीं। युगल चन्द्र भासत नभ माहीं॥
तनु छाया में छिद्र दिखाई। अनहत शब्द न पड़त सुनाई॥६८॥

स्वर्ण वर्ण दीसत द्रुम सारे। फरकत वाम अवयव हमारे॥
स्वप्न मांहि शव काग ललाना। नग्न गमन पुन विष का खाना॥६९॥
तेल लगाना खर असवारी। जपाकुसुम की माला धारी॥
इत्यादिक अपशगुन दिखाई। शीघ्र मरण को देत जनाई॥७०॥
बैरी बल को तात निहारी। कुछ नहिं सूझत हृदय मझारी॥
एक समय मैं दिग्जय हेता। घूमा नवखंड जलधि समेता॥७१॥
निज भुज बल जीते नृप सारे। असुर उरग निज वश कर डारे॥
जीतन योग्य मनजु नहिं रहिया। बहुर महेन्द्र अद्रि में गहिया॥७२॥
भृगुकुल नंदन परशूधारी। देखे मैं तब भूप कुलारी॥
तिनके पद पर मस्तक राखा। सह अभिमान वचन तब भाखा॥७३॥
नाथ मोर भुज बल के आगे। सुर अहि असुर मनुज सब भागे॥
मम रण देवो तुम द्विज राजा। देव मिटावो मम भुज खाजा॥७४॥
तब सकोप द्विज वाक उचारी। मैं हूँ खलनृप-अहि-उरगारी॥
पर हम अब रण करना त्यागा। तप करने में मम मन लागा॥७५॥
त्रिपुर साथ हर रण जब कीना। हरि ने हर को यह धनु दीना॥
त्रिपुर हनन कर तब त्रिपुरारी। मोको धनु दीना क्षितिपारी॥७६॥
अब तुम ले जावो गृह धरिये। पर्व पर्व में पूजा करिये॥
इस धनु को तोड़ेगा जोई। तिसके कर से तब मृति होई॥७७॥
तिस दिन से मैं भय उर धारी। करूँ चापकी बहु रखवारी॥
जांका कल हम पूजन कीना। दुर्गा पशुपति को बलि दीना॥७८॥

देश देश के भूपति आये। सबने धनु को सीस निवाये॥
तांके त्राण हेत रखवारे। शूरवीर हम बहु बहठारे॥७९॥

बिन प्रयास जिसने धनु तोड़ा। तांके तनु कुछ बल नहिं थोड़ा॥
करो यत्न तुमसे बन आवे। नहिं तो काल मोंहि अब खावे॥८०॥

नारद-वचन दोहा

महामूढ़ मंत्री असुर, हँसकर कीन प्रलाप।
जानत नहिं जो कृष्ण का, परम प्रचण्ड प्रताप॥८१॥

मन्त्री-वचन चौपाई

दानव देव उरग उरगारी। इन सबने तव भय उर धारी॥
गोपबाल से तुम भय माना। अहो कालगति अति बलवाना॥८२॥

स्वप्न मांहि दीसत नृप जोई। तीन काल सों सत्य न होई॥
मायिक जग के मिथ्या हेत। विज्ञ स्वप्न दृष्टांत सुदेत॥८३॥

जो नृप स्वप्न सत्य कर माने। जाग्रत जग किम मिथ्या जाने॥
जाग्रत मांहि अन्यथा जोई। दीसत तोहि भूप बिन होई॥८४॥

जग को मिथ्या सोउ जनावत। अज्ञन के उर बोध करावत॥
सत्य वस्तु होवत है जोऊ। नाना रूप न होवत सोऊ॥८५॥

वाम अंग जो तव फरकाने। वात विकार वैद्य सो जाने॥
अशगुन शगुन वीर क्या जानत। निज पुरुषारथ को मुख मानत॥८६॥

धनु तोड़ा बालक ने जोई। शूर होत नहिं इससे सोई॥
इसका भेद नाथ मैं जाना। घुण खाया सो चाप पुराना॥८७॥
भोजपते उर मत घबरावो। मल्लन से अरि को मरवावो॥
बैठो परिषद मंच बिछाई। करिये अनुशासन यदुराई॥८८॥

नारद-वचन दोहा

वचन श्रवण कर सचिव के, उर में धीरज धार।
निज अनुगों से कहत भा, बैठ कंस दरबार॥८९॥

कंस-वचन चौपाई

बहु बिध बाजे ढोल बजावो। चारों तरफ सुमेच बिछावो॥
साधु विप्र बैठें इक ठोरा। बैठें पृथिवीपति इक ओरा॥९०॥
वैश्य शूद्र यह एक कनारे। बैठें बनिता बाल चुबारे॥
तथा नन्द नव नव उपनन्दा। मम अरिदयित मूढ़मति मन्दा॥९१॥
तिम वृषभानु आदि षटभानू। यह बी दुर्मति नन्द समानू॥
इन सबको इस तरफ बिठावो। इनके देखत रिपु मरवावो॥९२॥
सब की भेंट जमा कर लेवो। बैठन ठोर आयको देवो॥
चाणूरादि मल्ल भट जोई। करें मल्ल लीला अब सोई॥९३॥
कुश्ती जीतेगा भट जोऊ। बहु बखशीश पायगा सोऊ॥
परिषद में मम रिपु जो आवे। जीता लौट न जाने पावे॥९४॥

पहर पुशाक शस्त्र कर धारी। ठाड़ी होवे सेना सारी॥
द्वारे द्वारपाल ठहरावो। बिना हुकम को आन न पावो॥९५॥

नारद-वचन दोहा

जिम भाखा नृप कंस ने, तैसे ही तिन कीन।
द्वारे में ठाड़ा करा, करीराज भय चीन॥९६॥
सब मंचन से उच्च जो, मणिमय मंच अनूप।
तामें सचिव समेत तब, बैठा कंस कुभूप॥९७॥
देश देश के भूप पुन, गोप समेत ब्रजेश।
दे दे बलि सब कंस को, बैठे मंच नरेश॥९८॥
शल तोशल चाणूर पुन, मुष्टिक कूट कराल।
निज आचारज सहित सब, रंग खड़े भर ताल॥९९॥
अथ भेरी का शब्द सुन, मल्लन का सुन ताल।
शारदूल के शाव इव, गये राम गोपाल॥१००॥
करी कुवलयापीड को, देख रंग गृह द्वार।
कटि कस कर पटसे हरी, घन सम वचन उचार॥१०१॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

हस्तिप मारग से हट जावो। तात काल मत देर लगावो॥
नहि तो तोको नाग समेता। अबी पुचावूँ काल निकेता॥१०२॥

नारद-वचन दोहा

भया कुपित हरि वचन सुन, द्विरदप द्विरद समेत।
यमसम छोड़ा नाग को, हरि बल मारण हेत॥१०३॥

पकड़ा कर से करी ने, हरि को हरी छुड़ाय।
मुष्टि मतंगहि मारकर, द्विप पद मांहि लुकाय॥१०४॥

कर से जब सूंगन लगा, पकड़ शूंड को श्याम।
खैंचा तब लाँगूल से, पकड़ा गज को राम॥१०५॥

खैंचत खैंचत नाग के, तनु से निकसे प्रान।
तांके दन्त उखाड़ कर, लीने बल भगवान॥१०६॥

गज दंतन से गजप पुन, मारे बहुत मतंग।
करि रद कांधे द्विप रुधिर, मद बिंदू युत अंग॥१०७॥

रौद्र भयानक प्रेम हस, वीर शांत शृंगार।
बीभत्साद्भुत दया दश, रस युत राम मुरारि॥१०८॥

कीना सभा प्रवेश जब, राम-कृष्ण मृगराज।
सह न सके हरि तेज जन, उठिया सकल समाज॥१०९॥

फड़-फड़ाय कर कंस तब, तैसे दुष्ट नरेश।
बैठे पुन सब मंच पर, कंसहिं भीति विशेष॥११०॥

घनाक्षरी छन्द

भोजपति समकाल, नन्दराज निज बाल,
स्वजन गोपाल जन, माधव को जाने हैं।
वैष्णव विराट रूप, भूमिपति नरभूप,
मल्ल लोक मल्लसम, वज्र अंग माने हैं॥
कामरूप पुरवाम, ज्ञानीलोक परधाम,
दंडधर खललोक, तिनको पछाने हैं।
यदुवंशी निज प्रभु, भावनानुसार सभ,
बलराम केशव को, दशधा बखाने हैं॥१११॥

नारद-वचन दोहा

तस्य त्वं स त्वं यथा, तस्मात्त्वमित्यादि।
तत्त्वमसि श्रुत्यर्थदा, तथा कृष्णतनुवाद॥११२॥

मास-पारायण चौदहवाँ विश्राम॥१४॥

पाक्षिक पारायण सातवाँ विश्राम॥७॥

साधुनृप-वचन चौपाई

अहो भाग्य हैं आज हमारे। जिनने माधव राम निहारे॥
इनकी जस हम सुनी बड़ाई। तैसे यह अब पड़े दिखाई॥११३॥
गुण माधुर्य रूप बल गेहा। जिनके निरखत बढ़त सनेहा॥
जो जगदीश्वर अन्तर्यामी। उभयरूप धर सोई स्वामी॥११४॥

प्रकट भया शौरी गृह मांही। इनके सम नर त्रिभुवन नाहीं॥
चित चाहित इनको नित ध्यावें। भुज चाहित हम कंठ लगावें॥११५॥

इनके मुख की सुन्दरताही। नयन पान करने को चाही॥
इनके पद सरसिज रज प्यारी। चाटन चाहित जीव हमारी॥११६॥

वदन कंज की सुरभि सुहाई। घ्राण सूंगने चाहित भाई॥
चाहित शुभगुण वाक उचारी। इनके चरण प्रणाम हमारी॥११७॥

नारद-वचन दोहा

या विध तिनके कहत तब, बाजे बजे अपार।
बोला पुन चाणूर मल, हरि की ओर निहार॥११८॥

चाणूर-वचन चौपाई

हे बलराम कृष्ण तुम दोऊ। शूरवीर तुम सम नहिं कोऊ॥
रण में कुशले युगल तुम भाई। तुमरी सब नर करत बड़ाई॥११९॥

कुस्ती देखन नृप मन भाया। इसी हेत नृप तुमें बुलाया॥
भूपति का हित करहै जोई। सुख संपद पावत जन सोई॥१२०॥

नृप वाणी जो नहिं सत्कारत। तांको विपद कूप में डारत॥
तांते हम तुम कुस्ती करिये। नृप का हित इसविध विस्तरिये॥१२१॥

नारद-वचन दोहा

वचन सुनत चाणूर के, नन्दराज कर कोप।
खड़ा होय कहने लगा, खड़े भये सब गोप॥१२२॥

नन्द-वचन चौपाई

बत महान असमंजस होई। धर्म अधर्म न जानत कोई॥
धर्मी नृप की परिषद माहीं। अस अनीति कहुँ देखी नाहीं॥१२३॥

रुद्र वर्ष के शिशु सुकुमारा। अबलौं काकपक्ष शिर धारा॥
कपि शावक को तक कर जोऊ। डरकर गृह में आवत दोऊ॥१२४॥

नदी सनान जात यह थकहैं। हमरी गोद त्याग नहिं सकहैं॥
रोटी मांगत रोवत रोवत। तनक देर में व्याकुल होवत॥१२५॥

कर कमलन में वंशी जोई। गुर्वी लागत जिनको सोई॥
वज्र अंग मल्लन के साथा। सो कित कहो मिलावें हाथा॥१२६॥

जो तुमरे मन समर उमंगा। गोप बली बहु हमरे संगा॥
रण में तिनसे हाथ मिलावो। मल्लपने का रस अबि पावो॥१२७॥

जो अन्याय करोगे भाई। भूल जायगी सब ठकुराई॥
हमरे बी कर मांहि कृपाणा। तनु में राखत हैं हम प्राणा॥१२८॥

तात वत्स तुम मम ढिग आवो। इन दुष्टन से मत बतरावो॥
हस्त सपर्श करे तव जोई। फल पावे अब ही खल सोई॥१२९॥

नारद-वचन दोहा

तब उठकर अक्रूर ने, हस्त जोड़ मिथिलेश।
बैठारे समुझाय के, गोप समेत व्रजेश॥१३०॥

चाणूर-वचन चौपाई

अरे नंद क्यों झूठ बखानो। पवि को कुसुम रूप तुम जानो॥
करि मदकर क्लिन्नाम्बर जोई। रोकर गीले कीने सोई॥१३१॥
काक पक्ष सिर तो यह ऐसे। गरुड़ पक्षधर होंगे कैसे॥
वज्रसार तनु यह युग भाई। क्रूर कठोर वीरता छाई॥१३२॥
जिनके वदन सिंह सम लागत। लख कर शूर संघ मल त्यागत॥
दश शत द्विपके बल युत जोई। नागराज मारा इन सोई॥१३३॥

गोप-बालक-वचन चौपाई

अरे मल्ल क्यों मिथ्या बोलत। मेरु गुंज को तूं सम तोलत॥
अंगुलि दाबत हम शिशु जबही। रुदन करत यह दोनों तबही॥१३४॥
हमरी चड्डी देवन काला। गिर परते यह युग तत्काला॥
फूंक फूंक कर भोजन पावत। तू किम कुलिश समान बतावत॥१३५॥
पापी मरत आपने पापा। इसमें इनका कौन प्रतापा॥
हगता देखा ओर न हमने। सभा बिगाड़ी हगकर तुमने॥१३६॥

दुष्टभूप-वचन चौपाई

अरे बाल तू क्यों गिरि गेरे। गोप वंश के सत्य न नेरे॥
सर्प समान लेत यह श्वासा। करते होंगे शीतल ग्रासा॥१३७॥

हमको तो यह ऐसे लागे। दण्ड हस्त मानो यम आगे॥
सभा शासना हेत पधारे। रौरव में जनु सबको डारे॥१३८॥

यादव-वचन चौपाई

खल मिथ्या से नहिं डर मानत। इने निर्दयी तुम किम जानत॥
महा कृपालु विष्णु सम दोऊ। जिनके शत्रु मित्र नहि कोऊ॥१३९॥

इष्टदेव सम सबको प्यारे। जनु करुणारस ने तनु धारे॥
जिनके निरखत मन हर्षाई। कल्मष भय चिन्ता सब जाई॥१४०॥

तुमरे पितर प्रेत जो होई। नरक मांहि इन डारे जोई॥
तो तिनके हित मखतप करिये। अथवा तुम बी रौरव परिये॥१४१॥

जो इनके पदपद्म गुलामा। तिनका नरक मांहि को कामा॥
जहां साधु को दुष्ट बतावें। शिशु को मल्लन से मरवावें॥१४२॥

तहाँ बैठना योग्य न होई। परत नरक में बैठत जोई॥
खल परिषद बैठत जो साधू। भोगत सो खल के अपराधू॥१४३॥

नारद-वचन दोहा

या विध कहकर उठ चले, यदुवंशी नर वीर।
उग्रसेन ने विनयकर, बैठारे दे धीर॥१४४॥

मध्यस्थ महीप-वचन चौपाई

तुम सबने सब झूठ बखाना। यह हैं और और तुम जाना॥
नहिं यह यमसम नहिं यह बालक। राजकुमर यह क्षितितल पालक॥१४५॥

शूर वीर उर धीर अपारा। विचरत महि में हेत शिकारा॥
कर कोदंड चंड खर बाना। सिंह सूर कुंजर हित ताना॥१४६॥

मृग मानुष को मारत नाहीं। आये नृप हित परिषद माही॥
देख मल्ल लीला कुछ काला। निज गृह जावेंगे भूपाला॥१४७॥

पुरनारी-वचन चौपाई

ठीक भूप यह करत शिकारा। बहुत शिकार इनो ने मारा॥
पर यह नहिं वनजीव शिकारी। मारी इनने बहु पुर-नारी॥१४८॥

भ्रुकुटी धनु कटाक्ष शर ताना। वेधत अबला हृदय निशाना॥
कुसुमायुध ने कीन चढ़ाई। नारि विजय की भेरि बजाई॥१४९॥

निज मुख चन्द्र चकोरी जोई। हा हा इनने मारी सोई॥
अस मृगयू से छुट कर माई। कहां जांय हम अबल लुगाई॥१५०॥

हम तो अब मरती हैं प्यारी। मम तनु की जो होवे छारी॥
सो इनके पद पंथ बिछाना। यह ही मिलन उपाय न आना॥१५१॥

यह धर्मज्ञ धुरंधर आली। मिलत न इतर यत्न वनमाली॥
जो शिकार को भोगत नाहीं। तो कत मारत जंतुन ताहीं॥१५२॥

तनु में विविध शृंगार बनाये। पुर युवतिन के हित यह आये॥
मल्ल युद्ध नहि देखन वारे। नारि रूप वर समर निहारे॥१५३॥

वैष्णव वचन चौपाई

सौभागिनि तुम कुछ नहि जानी। निगम रहित तुम नारि इयानी॥
हंता हन्य सुयोग वियोगा। द्रष्टा दृश्य भोगता भोगा॥१५४॥

यह सब इनमें होवत नाहीं। बनत नही निज अंगन माही॥
जहाँ दूसरा होवत कोई। द्वन्द्व विहार तहाँ पर होई॥१५५॥

इनसे भिन्न न दूसर कोऊ। योग वियोग कहो कस होऊ॥
अद्भुत रूप विराट मुरारी। त्रिभुवन इनके जठर मझारी॥१५६॥

नारद-वचन दोहा

निगमागम सम्मत सुभग, संत वचन अवतंस।
मूरख भेद न जानता, हँस कर बोला कंस॥१५७॥

कंस-वचन चौपाई

हम जानत थे इस पुर माँहीं। मिथ्या वादी कोऊ नाहीं॥
झूठे भी कुछ परत दिखाई। पर इस भूसुर सम नहिं भाई॥१५८॥

हम यह वो वो भेद न कैसे। भिन्न भिन्न दीसत सब तैसे॥
जो जग इनके उदर मझारी। तो कत दीसत यह नर नारी॥१५९॥

क्या इनके तनु दर्पण होई। त्रिभुवन दीसत तुमको जोई॥
इनके जठर मांहि तुम होवो। रे झूठे मल में नित सोवो॥१६०॥

और बहुत जन झूठ पुकारत। इनको जोउ दयालु उचारत॥
हमको तो यह दीसत काला। लेत श्वास जिम कोपित व्याला॥१६१॥

क्रूर घोर खर हस्त कृपाणा। सब जग के जनु काढ़त प्राणा॥
सर्व विश्व का मृत्यू जेई। उभय रूप धर आया सोई॥१६२॥

दंती दंत तुल्य रद इनके। मानव आँत कण्ठ में जिनके॥
कुंभीनस सम सृकिणी चाटत। कर अतिकोप ओष्ठ निज काटत॥ १६३॥

ब्रह्मवेत्ता-वचन चौपाई

तुम सब भ्रमकर बांधे भाई। इनमें तो कुछ नहि दर्साई॥
नाम रूप इनका कुछ नाहीं। सब जग कल्पित इनके माहीं॥१६४॥

नहिं मारत नहिं मरणे वारे। कोमल क्रूर धर्म नहिं धारे॥
जिम रज्जू के रूप न जाने। उरग दण्ड रेखादिक माने॥१६५॥

तुम इनके बिन रूप विचारे। इनमें बहुविध भाव निहारे॥
तज भ्रम देखोगे तुम जोई। शत्रु मित्र निज पर नहिं कोई॥१६६॥

वसहैं यह सब घट-घट माहीं। इनसे भिन्न वस्तु कुछ नाहीं॥
यह सर्वातम अन्तर्यामी। निर्विकार द्रष्टा भव स्वामी॥१६७॥

गुरु की शरण जात जन जोई। इनें यथारथ जानत सोई॥
बिन गुरु नर का भ्रम नहिं जाई। चाहे कोटिन करे उपाई॥१६८॥

नारद-वचन दोहा

वचन अलौकिक विज्ञ के, निगमागम में गूढ़।
बिन जाने बोला असुर, हँसकर मुष्टिक मूढ़॥१६९॥

मुष्टिक-वचन चौपाई

भ्रम वर्जित देखो यह बोलत। गुरु बनने को सब जग डोलत॥
जो बिन रूप प्रलंब बकारी। तो किसने मोही पुर नारी॥१७०॥
जो यह क्रूर धर्म नहिं धारत। कैसे असुर यूथ को मारत॥
तुम सम ज्ञानी को जग पावे। गोचर को अविषय बतलावे॥१७१॥
घट घट में तुम भाखा जोई। इस सम तुमरा झूठ न कोई॥
लावो कलश देखिये भाई। कहाँ कुम्भ में देत दिखाई॥१७२॥
कृष्ण सुनो झूठे वसुधामर। उदरभरत यह ठग विद्याकर॥
जा कारण हम तुम सब आये। सो करिये उर में सुख पाये॥१७३॥
तुम अपने बल ओर निहारो। इन सबके नहि वाक विचारो॥
रण से भागोगे तुम जोई। तो तुमरी अपकीरति होई॥१७४॥

नारद-वचन दोहा

मुष्टिक के सुन वचन तब, भये कुपित बलराम।
आज्ञा मांगी नन्द से, हस्त जोड़ बलधाम॥१७५॥

श्री बलदेव-वचन चौपाई

तात तनय को आज्ञा देवो। निज उर में धीरज तुम सेवो॥
तव आशिष से बहु खल मारे। यह मसका सम कौन विचारे॥१७६॥

या बल कर धेनुक खर मारा। जाबल कर केशी महि डारा॥
ता बल कर खल कंस गुलामा। जावेंगे यह सब यम धामा॥१७७॥

नारद-वचन दोहा

सुनो भूप गोविन्द की, माया अति बलवान।
जाकर प्रेरा गोप पति, वचन राम का मान॥१७८॥

हस्त फेर कर पृष्ठ में, सूंग भाल नृप नन्द।
आज्ञा दीनी सुतन को, मन में हरिपद बन्द॥१७९॥

नन्द-वचन चौपाई

रक्षा करें तुमारी ताता। शिवशक्ती आदिक सुर व्राता॥
शंभ त्रिशूल दाहिनी ओरा। दुर्गा की असि बाँवी ठोरा॥१८०॥
हरि की गदा तुमारे आगे। शक्र कुलिश पुन पृष्ठक भागे॥
प्रभु का चक्र सुदर्शन जोई। सर्व ओर तव रक्षक होई॥१८१॥

नारद-वचन दोहा

कृष्ण लिया चाणूर को, मुष्टिक को बलधाम।
दाव पेच खेलन लगे, चारों बल के धाम॥१८२॥

घनाक्षरी छन्द

कर साथ करमेल, करें चारो मल्ल खेल,
पादसंग जोड़ पाद, खेंचके निहारे हैं।

सीस साथ सीस जोड़, छाती कर छाती तोड़,
भुजा माहिं दाबकर, भूमि में पछारे हैं।
बैठे को उठायकर, तांकी पीठ भाल धर,
धक कर तांको पुन, मुष्टिक से मारे हैं।
निज निज जय धर, मारत परसपर,
मानो करीराज सिंह, रूप चार धारे हैं॥१८३॥

निज सुजनों को विकल लख, राम कृष्ण दुष्टारि।
मुष्टिक पुन चाणूर को, पटका भूमि पछार॥१८४॥

तिनके निकसे प्राण जब, खड़े भये रण हेत।
ताल ठोक कर मल्ल शल, तोशल कूट समेत॥१८५॥

वाम मुष्टि कर कूटके, प्राण निकासे राम।
शल तोशल का सीस तब, पद कर तोड़ा श्याम॥१८६॥

और मल्ल सब भग गये, प्राण त्राण के हेत।
निज मित्रन को बोलकर, खेल करा रण खेत॥१८७॥

बाजे बजे अनेक तब, सज्जन सब हर्षाय।
बोला भोजप दुखित हो, बाजे बन्द कराय॥१८८॥

कंस-वचन चौपाई

शौरी के सुत दुर्मति दोऊ। यदुपुर रहन न पावें सोऊ॥
गोपन का धन सब हर लेवो। नन्द दुष्ट का कारा देवो॥१८९॥

पुन वसुदेव नीच मति होई। उग्रसेन परपक्षी जोई॥
सानुग इन सबको अब मारो। जनक बंधु कुछ नाहिं विचारो॥१९०॥

नारद-वचन दोहा

या विध तांके जल्पते, कुपित भये गोपाल।
लाघवता से कूद कर, मंच चढ़े तत्काल॥१९१॥

निज मृत्यु को निरख कर, उठा कंस तत्काल।
इत उत भ्रमत भुजंग सम, कर कृपाण ले ढाल॥१९२॥

पकड़ कचों से गरुड़ इव, गरुड़ासन बल धाम।
पटक भूमि में कंस को, गिरे तास पर श्याम॥१९३॥

विश्व रूप के भार कर, निकसे तांके प्रान।
इभको हरि इव कंस को, खैंचत भा भगवान॥१९४॥

जीव कला तब तास की, हरि में गयी समाय।
चलते बैठत रात दिन, जो चक्रायुध ध्याय॥१९५॥

कंसानुज कंकादि तब, आये लड़ने हेत।
आठों मारे राम ने, मुद्गर कर रण खेत॥१९६॥

नभ दुन्दुभि बजने लगी, ब्रह्मादिक सुरब्रात।
करत प्रशंसा कृष्ण की, कलप कुसुम बरसात॥१९७॥

आईं छाती कूटती, कंसादिक की दार।
निज निज पति को कंठ लग, करा विलाप पुकार॥१९८॥

नारी-विलाप चौपाई

हा स्वामी प्रिय धर्म धुरंधर। शूरवीर रणजीत पुरंदर॥
हा वनिता वल्लभ करुणाकर। कहां गये निज बधु को तजकर॥१९९॥

तुमरे मरे मरीं हम सारी। किम जीवेंगी हम शिशु वारी॥
तुम बिन नहिं शोभित यदुधामा। बिन उत्सव जिम विधवा वामा॥२००॥

एक बार तो बोलो प्यारे। क्यों नहिं मम मुखचंद्र निहारे॥
तव अधरामृत की मैं प्यासी। उठ कर कंठ लगावो दासी॥२०१॥

जीव अनागस देव दुखाये। भगिनी के सुत बहु मरवाये॥
भयी दशा यह तिसकर थारें। भूत दुखद को जन सुख धारे॥२०२॥

सर्व भूतमय सबकर स्वामी। ब्रह्मादिक जाके अनुगामी॥
करा वैर तुमने तिन साथा। कैसे सुख पावो तुम नाथा॥२०३॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

अयी मातुली धीरज धरिये। देह प्रकृति लख शोक न करिये॥
जो जन्मत सो निश्चय मरहै। मरत जोउ सो नव तनु धरहै॥२०४॥

मृत बांधव को तब जन रोवे। जो अपना थिर जीवन होवे॥
जब तक लिखा तुमारा योगा। नाथ साथ तुमने सुख भोगा॥२०५॥

अब तुम वृथा मात दुख पावत। गये प्राण पुनि लोट न आवत॥
मृतपति योग्य क्रिया अब करिये। बंधुन के हित को विस्तरिये॥२०६॥
मोमें मती असूया करना। मम अपराध न मन में धरना॥
इनने सबसे द्रोह कमाया। निज कर्मन का फल निज पाया॥२०७॥

नारद-वचन दोहा

याविध तिनको धीर दे, मृतक क्रिया करवाय।
खोले जननी जनक निज, कारागृह में जाय॥२०८॥
तिनके पद में वन्दना, कीनी दण्ड समान।
आनक दुन्दुभि देवकी, तिनको ईश्वर जान॥२०९॥
लिये न अपनी गोद में, दामोदर बलराम।
तिन पर माया डार के, बोले साग्रज श्याम॥२१०॥

श्रीराम-कृष्ण-वचन चौपाई

मात तात हे यदुकुल केतू। तुम दुख पाये हमरे हेतू॥
नित उत्कंठा युत तुम होये। सुत शिशु क्रीड़ा सुख नहिं जोये॥२११॥
रही हमारे मन में आसा। भया ने तुमरे पास निवासा॥
शिशु मुद लेत जनकगृह जोई। प्रापित भया न हमको सोई॥२१२॥
चार पदारथ साधन काया। तिस तनुको जिनने जगजाया॥
तिनका प्रत्युपकार न होई। सेवा करे वर्षशत कोई॥२१३॥

जोउ तनूज शक्ति को धर है। मात पिता की सेव नकर है॥
सो मरकर जब यमपुर जावत। तांका मांस नरक कृमि खावत॥२१४॥

जननी जनक जरठ शुभ जाया। द्विजगुरु पुनि जो शरणी आया॥
पालन करत न इनका जोऊ। जीवत मृत सम जानो सोऊ॥२१५॥

कंस त्रास युत हम युग भ्राता। करी न तुमरी सेवा ताता॥
सो सब दिन हम वृथा निकारे। क्षमा करो अपराध हमारे॥२१६॥

नारद-वचन दोहा

माया मानुष विष्णु की, वाणी कर तब मात।
मोहित होकर देवकी, आनक दुंदुभि तात॥२१७॥

संकर्षण गोपाल को, तातकाल ले गोद।
गद्गद् गिरा न कह सकत, हृदय भया अति मोद॥२१८॥

सुत सनेह कर मात के, स्तन में आया क्षीर।
बार बार उर लात तब, स्त्रवत नयन से नीर॥२१९॥

शौरी युत निज युवति के, निज वेशम में जाय।
पहरे वसन विशाल तनु, क्षौर सनान कराय॥२२०॥

गया नन्द के शिविर में, सहित स्वकीय कुमार।
मित्र मिले जब परस्पर, भया प्रमोद अपार॥२२१॥

गोप मंडली सकल को, निज मंदिर में लाय।
सब विध से सेवा करी, उर में अति सुख पाय॥२२२॥

कंस त्रसित यादव निकर, परदेसन सब बोल।
दिये कृष्ण ने द्रविण बहु, मंदिर वसन अमोल॥२२३॥

यादवगण को साथ ले, उग्रसेन के द्वारि।
गये विनय कर तास सों, बोले वचन मुरारि॥२२४॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

मातामह कुल वृद्ध भवान। सेवा योग्य दान सन्मान॥
कुकुर वृष्णि दाशारह माधव। अंधक भोजादिक कुल यादव॥२२५॥

करना चाहित तुमको राजा। तब सेवा में सकल समाजा॥
हम तव आज्ञा में यदुराया। तैसे ही सब प्रजा निकाया॥२२६॥

सुन नर किन्नर तब गृह आये। बली देनगे शीश निवाये॥
मम जन मन में चितवत जोई। पूरण करूं भूप मैं सोई॥२२७॥

नारद-वचन दोहा

या विध कह कर उग्र को, राज सभा में लाय।
करा तिलक निज हस्त से, सिंहासन बैठाय॥२२८॥

चमर छत्र होने लगे, करहैं जय जय कार।
भारत भूपति भेट कर, गये स्वकीय अगार॥२२९॥

लोक पाल इन्द्रादि तब, प्रभु की आज्ञा पाय।
हरि कर दीने विभव निधि, नृप को भेंट चढ़ाय॥२३०॥

सभा सुधर्मा अमर पति, भेंट भूप की कीन।
जामें सुख सब स्वर्ग के, अद्भुत वस्तू चीन॥२३१॥
लगत न जनको जास में, क्षुधा पिपासा ताप।
शोक मोह भय झूठ पुन, आधि व्याधि अघ शाप॥२३२॥
उग्रसेन के राज में सुखी भये सब लोक।
रामकृष्ण का वदन लख, मिटे सकल के शोक॥२३३॥
करत प्रेम से गान नित, जो कोई यह ताल।
अरिगण वश कर तास के, सम्पद देत गुपाल॥२३४॥

इति श्रीमत्परमहंसोदासीनशिरोवतंसस्वामिकार्ष्णिज्ञानदास-शिष्येण स्वामिकार्ष्णिगोपालदासाह्वेन विनिर्मिते गोपाल-विलासे पूर्वविश्रामे रजककंसादिवधवर्णनं नाम दशमस्तालः समाप्तः॥१०॥

मास-पारायण पन्द्रहवाँ विश्राम॥१५॥

ॐ

श्रीवृन्दावनविहारिणे नमः

अथ एकादशस्तालः-११

श्लोकः

नन्दं प्रेष्य गृहे निजाग्रजयुतः प्राप्योपवीतं गुरोः
साङ्गोपाङ्गसशास्त्रवेदनिचयाँल्लब्ध्वा च सान्दीपने।
हत्वा पञ्चजनं तदीयकतनूशङ्खं गृहीत्वाऽथ यः
कालागारत आनयद् गुरुसुतं कृष्णाय तस्मै नमः॥१॥

कुब्जाक्रूरौ प्रियौ यस्य, यतस्तयोर्गृहङ्गतः।
नाहं कुब्जो न वा क्रूरो, भवेयं तत्प्रियः कथम्॥२॥

नारद-वचन दोहा

अथ शौरी निज सुतन के, यज्ञ सूत्र के हेत।
बोले पंडित गर्ग गुरु, यादव बन्धु समेत॥३॥

व्रज में मानव भेजकर, व्रजपति सम्मति पाय।
यशुमति गोपी रोहिणी, मथुरा लिये बुलाय॥४॥

युग जननी के चरण में, राम-कृष्ण युग भ्रात।
करी वंदना युगल सुत, कंठ लगाये मात॥५॥

क्षेम पूछकर परस्पर, भये हर्ष सब तात।
विरह अनल संताप तब, मेटा यशुमति मात॥६॥

कीनी पुन उपनयन कृत, वेद विधी से भूप।
दिये दान धन वसन बहु, भोजन धेनु अनूप॥७॥

कृष्ण जन्म के काल जो, कीना मानस दान।
सो सब शौरी ने दिया, गुरु को कर सन्मान॥८॥

नित नव उत्सव कर कछू, दिवस गये सुख साथ।
एक काल गोपाल को, कहत भये व्रज नाथ॥९॥

नन्द-वचन चौपाई

बहुत दिवस गमने हैं ताता। चलिये निज सादन सह भ्राता॥
पर गृह वास बहुत दिन जोई। हेत अवज्ञा का सुत सोई॥१०॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

तात हमें कारज है कोई। अबी न व्रज में जाना होई॥
काशी विद्या पढ़ने हेता। जावेंगे हम बन्धु समेता॥११॥

पुन कुछ कारज मथुरा माँही। शिक्षा करणी परजा ताँही॥
जावो तुम सब गोपन साथा। हम आवेंगे पुन व्रज नाथा॥१२॥

नारद-वचन दोहा

दामोदर के वचन सुन, नन्द स्वनारि समेत।
कृष्ण विरह नहिं सह सका, महि में गिरा अचेत॥१३॥
दसा देखकर तिनों की, चकित भये भगवान।
गर्ग बुलाये विप्र सो, लगे तिने समुझान॥१४॥

गर्गाचार्य-वचन चौपाई

सुनो नन्द तुम अति बड़भागी। जिनकी मति माधव में लागी॥
इनको सुत कर तुम मत मानो। जगत् जनक जगदीश्वर जानो॥१५॥
भूकर भार उतारण हेता। निज इच्छा कर शेष समेता॥
देव देव ने नर-तनु धारा। श्रीवसुदेव देवकी द्वारा॥१६॥
कंस दुष्ट से डर कर शौरी। हरि आज्ञा कर निश में चौरी॥
तव गृह निज सुत को धर आया। तुमरी कन्या मथुरा लाया॥१७॥
शौरी का सुत इनको जानो। भ्रमकर अपना मत तुम मानो॥
वास्तव यह सुत किसिके नाहीं। नभ समान पूरण सब माहीं॥१८॥
तुमरे भागन से तव धामा। साग्रज हरि कीनो विश्रामा॥
सुर नर मुनि हर जनक मझारी। ऐसी कृपा न कीन मुरारी॥१९॥
यथा अनुग्रह तुम पर कीना। बाल चरित का आनन्द दीना॥
भव में पूज्य भये कुल थारे। जन्म मरण दुख मिटे तुमारे॥२०॥

पूरव तनु में तुम तप कीना। तांका फल तुमको प्रभु दीना॥
वसू प्रधान द्रोण तव नामा। धरा नाम थी तुमरी वामा॥२१॥

कीना तप तुम धार कलेशा। भये हर्ष तुम पर लोकेशा॥
हरि के बाल चरित शुभ जोई। नयनन से निरखें हम सोई॥२२॥

पुत्र भाव कर प्रीति हमारी। होवे अच्युत चरण मझारी॥
या विध तुम जब वचन उचारे। एवमस्तु कह द्रुहिण पधारे॥२३॥

विधि वाणी ऋत करणे हेतू। वसे तोर गृह खगपति केतू॥
मख भुक् जो जस जोषित माया। तिस ने मांग मांग दधि खाया॥२४॥

को कह सकत सुभाग्य तुमारे। विश्वम्भर खावत भा थारे॥
बकी बैर कर मुख कुच दीना। अमृतांधस तांको हरि कीना॥२५॥

रति कर जिनपय पान कराया। तिनका फल जानत सुरराया॥
तात नन्द निज गृह में जावो। कृष्ण त्याग में मत दुख पावो॥२६॥

करें न देश अटन वह जोई। किम भू भार उतारण होई॥
केवल तव हित नहिं अवतारा। जो नहि त्यागें भवन तुमारा॥२७॥

नारद-वचन सोरठा

नन्द यशोदा साथ, गर्ग विप्र के वचन सुन।
मुनि पद नाया माथ, तज गलानि दुख शोक को॥२८॥

नन्द-वचन चौपाई

मोपर करी नाथ तुम दाया। मोह जाल भ्रम मोर मिटाया॥
एक अवज्ञा हमसे होई। जगत् पिता सुत जाना जोई॥२९॥
हरि के चरित अलौकिक जोवत। ईश्वर भाव तबी उर होवत॥
माया पटल हृदय पुन आवत। हरि को पुत्र भाव कर ध्यावत॥३०॥
प्रभु पद पंकज वन्दन करहूँ। तुमरी आज्ञा शिर पर धरहूँ॥
कहो पूतना को तप कीना। जांको केशव सुर गृह दीना॥३१॥
धोबी मल्ल कंस करि कौन। राम कृष्ण ने मारे जौन॥
तृणावर्त्त आदिक खल जोई। जिनकी मृति हरि के कर होई॥३२॥
माली दरजी कुब्जा दासी। भा प्रसन्न जिनपर अविनाशी॥
इनके पूरव पुण्य उचारो। मम मन संशय नाथ निकारो॥३३॥

गर्गाचार्य-वचन चौपाई

बहुत दुष्ट माधव ने मारे। मारेंगे पुनि और अपारे॥
तिन सबके जो चरित सुनावूं। बाढ़े कथा पार नहि पावूं॥३४॥
कुछ थोड़े से करूँ बखान। सुनिये नन्द चित्त दे कान॥
नाम रत्न माला बलि कन्या। रूप शील कर जोउ अनन्या॥३५॥
वामन की लख सुन्दरताई। तिसके हृदय प्रीति अधिकाई॥
पुत्र भाव तिसने मन धारा। निज पयपान करान विचारा॥३६॥

तांका भाव विष्णु ने चीना। मानस वर तांको हरि दीना॥
भयी पूतना सो बलि कन्या। हरि तनु पर्सत होई धन्या॥३७॥
हेम नयन सुत उत्कच नामा। सो गमना लोमश के धामा॥
मुनि का बाग विभंजन कीना। द्विज ने तिसे शाप तब दीना॥३८॥
दुष्ट रुष्ट पुष्टांग तुमारा। याते तुमने बाग बिगारा॥
हो विदेह दुर्मति अघधामा। करे न तू पुन ऐसा कामा॥३९॥
पुन तिसने मुनि पद सिर नाया। ब्रह्मदण्ड का अन्त कराया॥
कहा मुनीश वात तनु तेरा। होवेगा सुन अब वर मेरा॥४०॥
विष्णु धरेंगे नर अवतारा। सोउ करेंगे मोक्ष तुमारा॥
उत्कच गाड़े नीचे आया। मार कृष्ण ने नाक पठाया॥४१॥
भूपति दशशताक्ष यह नामा। पांडु देश में जाका धामा॥
रेवा सरिता तट में जाई। सहस नारि जिस संग सुहाई॥४२॥
विचरत रहा भूप तिस ठोरा। आये दुर्वासा मुनि घोरा॥
तांको नृप नहिं वन्दन कीना। नृप को शाप विप्र ने दीना॥४३॥
राक्षस हो दुर्मति अभिमानी। भयकर नृप ने वन्दन ठानी॥
करुणाकर वर विप्र उचारा। होगा हरिकर मोक्ष तुमारा॥
तृणावर्त्त पांडू पति हूआ। राम कृष्ण के कर से मूआ॥४४॥
राम राज्य में धोबी कोई। निज नारी को बोला सोई॥
पर गृह में तुम कीन निवासा। नहिं राखूं तुमको निज पासा॥४५॥

मैं कुछ राघव के सम नाहीं। जो राखूँ तुमको गृह माँहीं॥
योषित का लोभी जग रामा। पर गृह रही रखी पुन वामा॥४६॥

रजक वाक राघव सुन लीना। पर ताको कुछ दंड न दीना॥
जग निंदा डर दशवदनारी। त्यागी वन में जनक कुमारी॥४७॥

रजक कुवाक शांत के कारण। ईश विचारा ताको मारण॥
सोई रजक रजक अब हूआ। दामोदर के कर से मूआ॥४८॥

मिथिलापुर में दरजी कोई। रहा भक्त राघव का सोई॥
निज विवाह के कारण रामा। गमने मैथिल नृप के धामा॥४९॥

सीर केतु की आज्ञा पाई। सौचिक दिव्य पुशाक बनाई॥
करा विचार तासने मन में। राम लखन के सुन्दर तनु में॥५०॥

वर पुशाक निज कर पहरावूं। तब आनंद हृदय में पावूं॥
तुन्नवाय का हारद चीना। मन कर वर ताको प्रभु दीना॥५१॥

द्वापर युग में मथुरा धामा। पूरण होवेगा तव कामा॥
तिस वायक वायक तनु पाया। जापर करी कृष्ण ने दाया॥५२॥

धनद बाग का माली जोई। नाम हेममाली था सोई॥
तिसने हरि के दर्शन हेतू। बहु दिन तक पूजे वृषकेतू॥५३॥

दिन-दिन तीन शतक जलजाता। शंभु लिंग में सोउ चढ़ाता॥
भये हर्ष इक दिन त्रिपुरारी। माँगो वर यह वाक उचारी॥५४॥

जगदीश्वर आवें मम धामा। नयनन से निरखूं घनश्यामा॥
एवमस्तु तब शम्भु उचारा। सो हूआ अब मालाकारा॥५५॥

शूरपनखा निशिचरी जोई। राघव को लख मोहित होई॥
कर पति भाव राम ढिग आई। नहिं राखी तब सो रघुराई॥५६॥

गयी विमन हो पुष्कर सोई। शिव के ध्यान विषे थिर होई॥
तास मनोरथ शिव ने चीना। हो प्रसन्न ताको वर दीना॥५७॥

एक नारि व्रत श्री रघुराजा। अब नहिं होगा तुमरा काजा॥
द्वापर युग में मथुरा धामा। तू होवेगी इनकी वामा॥५८॥

कुब्जा भई राक्षसी सोई। सीधी करी कृष्ण ने जोई॥
बलिसुत मन्दगती यह नामा। विपुल शरीर पुष्ट बलधामा॥५९॥

चलते आगे जो कुछ आवत। गज गति सो भुज वेग गिरावत॥
मग में जरठ विप्र त्रित जोई। असुर भुजा लग गिरिया सोई॥६०॥

कुपित होय मुनि शाप उचारा। द्विप तनु होवो दुष्ट तुमारा॥
बोला बलि सुत पद धर माथा। शाप अवधि भाखो द्विजनाथा॥६१॥

हो प्रसन्न मुनि वाक उचारी। हरि कर से गति होगी थारी॥
असुर राज बलि का सुत जोई। नाम कुवलयापीडक सोई॥६२॥

मुनि उतथ्य के पांच कुमारा। रुष्ट पुष्ट तनु अति बलधारा॥
विप्र धर्म तिनने सब त्यागा। क्षत्रिय कर्म मांहि मन लागा॥६३॥

बलि के मल्ल अखाड़े जाई। मल्लन से नित करें लड़ाई॥
मुनि उतथ्य ने बहुत निवारा। नहिं माने तो शाप उचारा॥६४॥

जावो दुष्ट दैत्य तनु धरिये। मल्लों से निश दिन तुम लरिये॥
सुनकर शाप सुतन भय माना। तात पाद में वंदन ठाना॥६५॥

करुणाकर द्विज वाक उचारा। राम कृष्ण कर मोक्ष तुमारा॥
चाणूरादि मल्ल सो हूए। राम कृष्ण के कर से मूए॥६६॥

देवयक्ष अलका में होई। शिव पूजन में तत्पर जोई॥
देवकूट पृथुज खण्ड अखण्डा। दंड महागिरि गण्ड प्रचण्डा॥६७॥

ताके अष्ट पुत्र यह जाता। वीर बली सबही विख्याता॥
कमलन हित ते तात पठाये। सूंघ घ्राण से पंकज लाये॥६८॥

तिनका कर्म जनक ने जाना। कुपित होयकर शाप बखाना॥
भव पूजा हित पद्म मंगाये। सो तुम सब उचिष्ट कर लाये॥६९॥

असुरों का कृत यह तुम कीना। धरिये दैत्य शरीर मलीना॥
तात पाद में तिन शिर राखा। करुणाकर तिसने वर भाखा॥७०॥

शेष धरेंगे नर अवतारा। तिनके कर से मोक्ष तुमारा॥
देवयक्ष के देहज जोई। भये अष्ट कंसानुज सोई॥७१॥

सृष्टि सुनाम राष्ट्रपति शंकू। तुष्टि न्यग्रोध सौहन कंकू॥
तिनके भये अष्ट यह नामा। मारे हलधर जो संग्रामा॥७२॥

कालनेमि असुराधिप जोऊ। भया कंस अब दानव सोऊ॥
हरि ने पूरव बी यह मारा। जाते वैर भाव इस धारा॥७३॥

नारद-वचन दोहा

द्विज के अद्भुत वचन सुन, हर्षित भा व्रजनाथ।
कर विचार व्रज गमन को, मुनि पद नाया माथ॥७४॥

जान मनोरथ नन्द का, शौरी परम सुजान।
हस्त जोड़कर विनय से, बोला वचन प्रमान॥७५॥

वसुदेव-वचन चौपाई

तात नन्द यह पुत्र तुम्हारे। तुमने अति सनेह कर पारे॥
शिशु के मात पिता जग सोई। हितकर पालन करिहैं जोई॥७६॥

जो न शक्त सुत पोषण माँहीं। जनने मात्र पिता सो नाहीं॥
यह वेशम बी मित्र तुमारे। आवत रहना अपने द्वारे॥७७॥

नारद-वचन दोहा

पुन शौरी ने नन्द को, भूषण वसन अपार।
दिये कांस्य के कुप्य बहु, विनय करी बहु बार॥७८॥

संकर्षण गोपाल को, यशुमति गोद बिठाय।
स्त्रवत नयन सें नीर अति, बोली अति दुख पाय॥७९॥

यशोदा-वचन चौपाई

तात वत्स बलजावे मैया। संकर्षण दामोदर भैया॥
तुम बिन कौन काम व्रज मेरा। दीसत दश दिश मांहि अँधेरा॥८०॥

तुमरा तात जात तो जावो। मोको क्यों तुम पुत्र पठावो॥
तुम बिन दिवस गये जो ताता। मम दुख जानउ सोउ विधाता॥८१॥

प्रेत धाम सम निजगृह लागत। करूं वितीत रात्रि सब जागत॥
विरह सहारा जात न मो से। सत्य कहूँ मैं माधव तो से॥८२॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

इतना क्यों घबराओ माता। द्रुत आवेंगे हम युग भ्राता॥
जननी निरख कलेश तुमारे। दुखी होत सब बन्धु हमारे॥८३॥
तुमरी दशा दृष्टि जब आवत। हमरा मन बी अति घबरावत॥
तुम बिन व्रज में हमरे ताता। अतिशय दुख पावेंगे माता॥८४॥
तिनको एक वियोग हमारा। दूसर विविध कलेश तुमारा॥
कर विचार धीरज ठहरावो। तात हेत तुम व्रज में जावो॥८५॥

ब्रज-बालक-वचन चौपाई

हम नहिं जावेंगे व्रज ताता। चाहे मरें तात निज माता॥
तुमरे मन्दिर की सिवकाई। करहैंगे हम अति सुखपाई॥८६॥
तुमरा दर्शन कर नित प्यारे। सुख से जावें दिवस हमारे॥
निज शरणागत जन जग जोई। तजना योग्य न तुमको सोई॥८७॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

माँथे पर राखें हम तुमको। तुमसे अधिक कौन प्रिय हमको॥
मित्र संग दुर्लभ भव माँहीं। सखा समान बन्धु को नाहीं॥८८॥
तुमरे मात पिता प्रिय जोई। अति दुख पावेंगे पर सोई।
इसकर तुमको भेजूं भाई। बंधु खेद नहिं निरखा जाई॥८९॥

आवत जावत रहना ताता। व्रज कुछ दूर न जानो भ्राता॥
करुणा करणी मित्र विचारी। हम बी तुमरा पन्थ निहारी॥१०॥

नारद-वचन दोहा

सब विध भये उदास सब, नन्दादिक आभीर।
विरह विकल अति रुदनकर, गमने उर धर धीर॥११॥

गोप गोपिका सखा सब, जनक यशोदा मात।
संकर्षण गोविन्द को, बार बार उर लात॥१२॥

गर्ग वचन सुन नन्द ने, हृदय धरा कुछ धीर।
यशमति नारि स्वभाव से, भयी मीन बिन नीर॥१३॥

जिम किम कर व्रज में गये, करत भये बहु शोक।
और कृत्य को कर सके, बिना बुहारे ओक॥१४॥

एक दिवस व्रजवन विषे, खेल रहे व्रजबाल।
बोला विरह विषाद मन, श्रीदामा तिस काल॥१५॥

श्रीदामा-वचन चौपाई

क्या करिये क्या खेलें भाई। बिन माधव नहिं खेल सुहाई॥
कहाँ जाय अब तिनको लावें। किस विध तिनके दर्शन पावें॥१६॥

खान पान खेलन बतराना। लेन देन पट सोवन जाना॥
राम श्याम बिन विष सम सारे। जात न पापी प्राण हमारे॥१७॥

गृह वन जहिं जहिं दृष्टी जावत। बिन मुकुन्द सब शून्य दिखावत॥
सरसिज कुसुम सुगंध सुहाई। बिन प्रिय मलसम घ्राण न भाई॥९८॥
त्रिविध समीर लगत जिम तीरा। भूषण भूधर सम दें पीरा॥
रवि सम शीतल शशी जलावत। गोरस गोबर सम दर्सावत॥९९॥
आवत स्वास शिखी सम गर्मा। मानो करत भस्म तनु चर्मा॥
सखे खेलना जो तुम चावो। राम श्याम को बोल लिआवो॥१००॥

नारद-वचन दोहा

श्रीदामा के वचन सुन, विकल भये सब बाल।
भयी बुद्धि तब कृष्णमय, भूले तनु का ख्याल॥१०१॥
नाम रूप निज भूलकर, मदिरा पान समान।
देवप्रस्थ शिशु कहत भा, निज को केशव जान॥१०२॥

देवप्रस्थ-वचन चौपाई

विरह विकल क्यों होवो प्यारे। हम हैं माधव मित्र तुमारे॥
मैंने दुष्ट पूतना मारी। हम गिरिधर अघ बक वत्सारी॥१०३॥
दावानल मैं करिया पाना। काड़े शंखचूड़ के प्राना॥
सीदी कीनी कुब्जा नारी। हम हैं रजक मल्ल कंसारी॥१०४॥

नारद-वचन दोहा

सुबल मित्र बलराम का, निज को हलधर मान।
तन्मय मति तनु ख्याल नहिं, बोला प्रेम निधान॥१०५॥

सुबल-वचन चौपाई

हम तो दूर न गमने ताता। विरह विकल क्यों होवो भ्राता॥
तुमरे साथ चरावूं गैया। तुम नहिं निरखत मोको भैया॥१०६॥

मैं संकर्षण तुमरा प्यारा। मैंने धेनुक खर को मारा॥
हम प्रलंब के प्राण निकारे। कंस दुष्ट के सोदर मारे॥१०७॥

नारद-वचन दोहा

राम कृष्ण जो जो करे, मंगल चरित उदार।
सो सो सब करते भये, तन्मय भये कुमार॥१०८॥

तृणावर्त बक पूतना, वत्सासुर अघ व्याल।
खल प्रलम्ब धेनुक वृषभ, बने कोउ व्रजबाल॥१०९॥

कोउ बने कुब्जा रजक, दरजी मालाकार।
मल्ल कंस नागादि बन, लीला करें कुमार॥११०॥

खेलत खेलत भाव सो, भूल गये व्रज बाल।
विरह मानकर कृष्ण का, पूछत फिरत विहाल॥१११॥

बालक-वचन चौपाई

हे पीपल बट तुलसी माता। देखे तुम माधव युग भ्राता॥
चम्पक कुन्द कनेर कदम्बा। कंज गुलाब मालती रंभा॥११२॥

हे मृग शावक तव सम नयना। हे कोकिल तुमरे सम बयना॥
हे मयूर तव छद शिरधारे। तुमने निरखे माधव प्यारे॥११३॥

हे तमाल तुमरे सम श्यामा। देखे तुम मुकुन्द सह रामा॥
हे धरणी तुम प्रिय बतलावो। जननी हमको मती खिजावो॥११४॥

चरण चिह्न दीसत तव माहीं। क्या माधव तुम निरखे नाहीं॥
बिछुरे अब प्रिय धेनु चरावत। खोज रहे पर प्रभु नहिं पावत॥११५॥

हे पृथिवी तुम क्या तप कीना। जिससे तव पर प्रभु पद दीना॥
प्रिय के पद सपर्श कर जोई। तव शरीररुह पुलकिंत होई॥११६॥

हे संकर्षण अच्युत ताता। कहां गये तुम दोनों भ्राता॥
हे दामोदर जन अघ कर्षन। राम कृष्ण देवो निज दर्शन॥११७॥

पंकजनाभ कंजदल लोचन। निज शरणागत भव भयमोचन॥
हे गोविन्द मुकुन्द नरायण। स्वजन योगवर क्षेम परायण॥११८॥

हे नीलाम्बर सज्जन त्राता। रौहिणेय रजताचल गाता॥
शरणागत वत्सल फणि नायक। कृष्णाग्रज जनमोक्ष विधायक॥११९॥

कमलेक्षण कमलापति केशव। तव दर्शन बिन अखिल भये शव॥
निज वचनामृत पान करावो। प्रणतारतिहर स्वजन जिवावो॥१२०॥

व्रज वल्लभ मधुसूदन माधव। पाहि पाहि करुणाकर यादव॥
पद्मार्चित पद-पद्म दिखावो। प्रणत कल्पतरु नाम धरावो॥१२१॥

मंगलमय मघवा मद मोचन। लोल कपोलक अलका लोचन॥
तुम बिन वेशम जो हम जाई। पूछेंगी प्रिय तुमरी माई॥१२२॥

क्या भाखेंगे तिसको ताता। शाप देयगी हमको माता॥
इतनी ही हांसी बहु प्यारे। दर्श देहि प्रिय प्राण हमारे॥१२३॥

नारद-वचन दोहा

या विध विविध विलापकर, वनमें भटकत बाल।
प्रिय हमरे हैं मधुपुरी, पुन यह आया ख्याल॥१२४॥

रुदन करत तब विपिन से, गमने भवन मझार।
जिनकी मति प्रिय पद लगी, तिनका विषम विहार॥१२५॥

उनको यह विस्मय लगत, जिन नहिं कीना प्रेम।
प्रेम पुरी में देखिये, कहां जगत का नेम॥१२६॥

मास-पारायण सोलहवाँ विश्राम॥१६॥

पाक्षिक पारायण आठवाँ विश्राम॥८॥

राम कृष्ण के चरित अब, सुनिये चित्त लगाय।
मात पिता को पूछकर, तिन को शीश निवाय॥१२७॥

सांदीपनि के पास अथ, गये कृष्ण बलराम।
वेष धार कर वर्णि का, शशि शेखर के धाम॥१२८॥

करी वंदना विप्र पद, राम कृष्ण ने भूप।
हस्त जोड़ कर विनय से, बोले वचन अनूप॥१२९॥

श्री बलराम-वचन चौपाई

राम कृष्ण हमरा यह नामा। शौरी के सुत मधुपुर धामा॥
विद्याध्ययन करण हित आये। रावर चरण निरख सुख पाये॥१३०॥

नाथ जान हमको अनुगामी। विद्या दान दीजिये स्वामी॥
होवेगी गुरु आज्ञा जोई। करहैंगे हम सेवा सोई॥१३१॥

सांदीपनि-वचन चौपाई

तात सत्य कह तुम नर नाहीं। ईश्वर के लक्षण तुम माहीं॥
चारों वेद तुमारे श्वासा। अंग पुराण सहित इतिहासा॥१३२॥

गुप्त राख निज ईश्वरताई। आये हो तुम दोनों भाई॥
तुमको विद्या तदपि पढ़ावूं। त्रिभुवन मांहि विशद यश पावूं॥१३३॥

नारद-वचन दोहा

निगमागम वेदान्त युत, धनुर्वेद नृप नीति।
शब्द शास्त्र उपनिषद् पुन, यह सब पढ़े सप्रीति॥१३४॥

याद करे इक बार सुन, शांत दान्त युत नेम।
गुरु में ईश्वर भाव से, सेवा करत सप्रेम॥१३५॥

विद्या सब चौसठ पढ़ीं, चौसठ दिन बलश्याम।
गुरु दक्षिणा हेत तब, बोले वचन ललाम॥१३६॥

श्री बलराम-वचन चौपाई

भगवन् सब विद्या हम पाई। रावर करुणा कर द्विजराई॥
जोउ आपको अति प्रिय होई। लीजो नाथ दक्षिणा सोई॥१३७॥

मणिकर पूरण महि जो देवे। वर्ष शतक पुन गुरुपद सेवे॥
गुरु का प्रत्युपकार न होई। गुरु का ऋणी रहत शिष सोई॥१३८॥

आचारज का कुछ सत्कारा। यथाशक्ति कर वेद उचारा॥
यदपि आपको कुछ नहिं चहिये। तदपि देव हमरे हित कहिये॥१३९॥

सान्दीपनि-वचन चौपाई

मम उदंत सुनिये सब प्यारे। हम उजैन के रहने वारे॥
गये प्रभास क्षेत्र हम ताता। सहित तनूज तनुज की माता॥१४०॥

मम सुत डूबा सागर माँहीं। पुन तनूज मम हूआ नाहीं॥
जो प्रिय होवे शक्ति तुमारी। सुत लावो यह सेव हमारी॥१४१॥

नारद-वचन दोहा

एवमस्तु कह वंद्य गुरु, राम-कृष्ण यदुवीर।
बैठे स्यंदन अतिरथी, पहुँचे वारिधि तीर॥१४२॥

रत्नाकर ने जानकर, दोनों को जगदीश।
शिर निवाय कर रत्न बहु, भेंट धरी वारीश॥१४३॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

मम गुरु का सुत बालक जोई। तुम तरंग कर ग्रसिया सोई॥
पारावार निजालय जावो। तिस कुमार को झटिती लावो॥१४४॥

सागर-वचन चौपाई

मैंने ग्रस न सो शिशु स्वामी। दैत्य एक है मम जल गामी॥
शंख रूप तिसने प्रभु धारा। उसने हरिया सोउ कुमारा॥१४५॥

नारद-वचन दोहा

कूदे हरि पाथोधि में, शंखासुर को मार।
नहिं पाया गुरु का तनुज, तांके जठर मझार॥१४६॥

तिसके तनु का पांचजन, शंख लिया घनश्याम।
बैठ यान में भ्रात युग, गये शमन के धाम॥१४७॥

शंख बजाया श्याम ने, संयमनी के प्रांत।
शब्द श्रवण कर कहत भा, युग कर जोर कृतांत॥१४८॥

यम-वचन चौपाई

हे जगदीश्वर अंतर्यामी। नमो नमो तुमरे पद स्वामी॥
मोपर परम अनुग्रह कीना। जो मम गृह में दर्शन दीना॥१४९॥

आज्ञा हो सो कहिये देवा। करूँ कवन तुमरी प्रभु सेवा॥
पुण्य फले बहु आज हमारे। जो स्वामी मम धाम पधारे॥१५०॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

हमरे गुरु का सुत तुम लाये। या कारण हम तव पुर आये।
वैवस्वत शिशु लाओ तूरण। गुरु का होय मनोरथ पूरण॥१५१॥

नारद-वचन दोहा

तथा अस्तु कह काल ने, द्विज सुत अर्पण कीन।
काशी जाकर कृष्ण ने, गुरु को बालक दीन॥१५२॥

सांदीपनि-वचन चौपाई

दिया दक्षिणा तुमने जोई। दे न सकत अस मानव कोई॥
जो हम भये वत्स गुरु थारे। शेष रहें क्यों काम हमारे॥१५३॥

जावो सुत निज सदन मझारी। पावन कीरति होय तुमारी॥
विद्या सफली होवो ताता। चिर जीवो तुम दोनों भ्राता॥१५४॥

नारद-वचन दोहा

गुरु की आज्ञा पायकर, सहित अनुज बलराम।
बैठ अनिल सम रथविषे, पहुँचे मथुरा धाम॥१५५॥

राम कृष्ण को निरख कर, हर्ष भये सब लोक।
जैसे निर्धन पुरुष को, पावे धन का ओक॥१५६॥

अथ उद्धव को साथ ले, सैरंध्री के धाम।
सत्य करण निज वाक के, गये कृष्ण घनश्याम॥१५७॥

सैरंध्री लख दूर से, निज प्रिय को तत्काल।
उठी हर्ष कर मंच से, मत्त मतंगज चाल॥१५८॥

बैठारे कर पर्स के, शय्या में घनश्याम।
उद्धव को आसन दिया, प्रिय पद धोये वाम॥१५९॥

कुसुम हार ताम्बूल पुन, अतर समर्पण कीन।
पवन करत निज हस्त से, चन्दन घिसकर दीन॥१६०॥

कृष्ण वदन राकेश में, भयी चकोरि समान।
प्रेम प्रवण लख तासको, बोले तब भगवान॥१६१॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

रम्भोरू तव प्रीति निहारी। आये हम तव भवन मझारी॥
पूरण भये मनोरथ थारे। लक्ष्मी सम तू प्रिया हमारे॥१६२॥

मम पद में रति कर निष्कामा। पावेंगी तू हमरा धामा॥
प्रीति विवश हम होवत प्यारी। जावत हम अब भवन मझारी॥१६३॥

सैरंध्री-वचन चौपाई

प्राणनाथ प्रिय मैं तव चेरी। भयी न पूरण आशा मेरी॥
तुमरा वचन हृदय मैं धारी। निशदिन रावर पंथ निहारी॥१६४॥

तव दर्शन कर नहिं तृपताई। अब ही किम जावो यदुराई॥
कुछ दिन करिये इस गृह वासा। पूरण करो देव मम आसा॥१६५॥

तुमरी करुणा पावत जोई। किस विध न्यून रहत नहिं सोई॥
जन को उभय लोक सुखदाई। तुम बिन इतर कौन सुरराई॥१६६॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

भव दुख से जन के हम त्राता। सुखमय मोक्ष धाम के दाता॥
कर प्रसन्न मोको जन जोऊ। लौकिक सुख चाहित यदि सोऊ॥१६७॥

तिस सम मन्द भाग्य नहिं कोई। सुर द्रुम से विष याचत सोई।
इन्द्रिय सुख कुछ दुर्लभ नाहीं। मिलहै सो सूकर तनु माँहीं॥१६८॥

नारद-वचन दोहा

या विध कहकर तासको, गये कृष्ण निज धाम।
लज्जित हो मन शांत कर, गई द्वार तक वाम॥१६९॥

निज वाणी को याद कर, राम कृष्ण यदुनाथ।
गये भवन अक्रूर के, उद्धव को ले साथ॥१७०॥

देख दूर से तिनों को, उठा हर्ष उर धार।
कर प्रणाम गल लाय के, लाया भवन मझार॥१७१॥

बैठारे वर मंच में, करके अति सत्कार।
पाद धोयकर तिनों के, जल को शिर में धार॥१७२॥

देकर बीड़ी विनय से, अतर कुसुम की माल।
तिनके पद उत्संग धर, बोला वचन रसाल॥१७३॥

अक्रूर-वचन चौपाई

आदि जगत का कारण जोई। पुरुष प्रधान युगल तुम सोई॥
पट में ओत प्रोत पिचु जैसे। कारज वस्तु विषे तुम तैसे॥१७४॥

तूल भिन्न कुछ वसन न होई। तुमसे भिन्न जगत नहिं कोई॥
मृतिका एक रूप कर भाना। मृद्विकार घट आदिक नाना॥१७५॥

तैसे तुम भव कारण एका। तव कारज यह जगत अनेका॥
भव उत्पति पालन संहारा। होत गुणोंकर तुम अविकारा॥१७६॥

आज हमारे सदन सुहाये। सर्व देवमय जो प्रभु आये॥
जाके पद का धोवन जोई। करत पवित्र जगत को सोई॥१७७॥

मित्र कृतज्ञ भक्त पियकारी। सत्य संध जन भव भय हारी॥
को पंडित अस तुमें विहाय। इतर देव की शरणी जाय॥१७८॥

सुत कलत्र धन धाम मझारी। मोह फांस हर नाथ हमारी॥
तव सन्मुख नर होवत जबही। करत विघ्न यह दुर्जन तबही॥१७९॥

भगवन् यह तव अति उपकारा। कंस दुष्ट को सानुज मारा॥
यादव गो द्विज साधु विचारे। दुख सागर से पार उतारे॥१८०॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

पूज्यवंद्य तुम तात हमारे। पालन योग्य बाल हम थारे॥
हमरे सकल बन्धुजन जोई। तुमसम सुमति इतर नहिं कोई॥१८१॥

तांते तुम गजपुर में जावो। पांडु सुतों की खबर लिआवो॥
जनक मरे बालक थे जोऊ। अन्ध भवन में बसहैं सोऊ॥१८२॥

निज सुत तुल्य अनुज सुतमाहीं। नृप धृतराष्टर वर्त्तत नाहीं॥
अस सुनिया हम अब तुम जावो। भगिनी कुन्ती को मिल आवो॥१८३॥

नारद-वचन दोहा

या विध कह अक्रूर को, गये स्वकीय अगार।
पुन गमना गांदिनि तनय, कौरव पुरी मझार॥१८४॥
भीष्म सुयोधन कर्ण पुन, द्रोण ससुत कुरुराज।
कुन्तीसुत युत विदुर कृप, मिलिया सकल समाज॥१८५॥
बहुत दिवस रह कर तहाँ, सबके मन की जान।
पांडु सुतों का सकल दुख, कीना विदुर बखान॥१८६॥

विदुर-वचन चौपाई

पांडव अति दुखिया हैं ताता। अन्ध अधीन भये युत माता॥
धृतराष्टर निज तनुज अधीना। धर्म अधर्म न मनमें चीना॥१८७॥
ताके सुत अब अधम हमेशा। पांडु सुतन को देत कलेशा॥
तिनने गरल भीम को दीना। मारण हेत यत्न बहु कीना॥१८८॥
इनके सद्गुण तेज निहारी। जलहै दुष्ट मंडली सारी॥
प्रजानुराग करत पुन जोई। सो भी इनसे सहन न होई॥१८९॥
शिशुपन मांहि मरे निज ताता। विषम स्वभाव तात का भ्राता॥
बिन हरि इनका इतर न कोऊ। करे सहाय कष्ट में जोऊ॥१९०॥

नारद-वचन दोहा

भ्राता के ढिग बैठकर, जन्म-भूमि कर याद।
बोली कुन्ती रुदन कर, साने वचन विषाद॥१९१॥

कुन्ती-वचन चौपाई

वसुदेवादिक मम जो भ्राता। याद करत हैं मोको ताता॥
भैन भतीजे और भुजाई। सकल सुखी हैं हमरे भाई॥१९२॥

राम कृष्ण सुख से पुर माहीं। याद करत मम तनुजन ताहीं॥
अरि गृह में हम दुख से जीवत। तिनकर दिये दुखन को पीवत॥१९३॥

करूँ शोच निश दिन मैं ऐसे। वृकगण आवृत हरिणी जैसे॥
संकर्षण अच्युत कब आई। धीरज देंगे मोको भाई॥१९४॥

मम पुत्रन के संकट ब्राता। दूर करेंगे कब युग भ्राता॥
कृष्ण कृष्ण शरणागत पालक। योगीश्वर निजजन अरि घालक॥१९५॥

त्राहि त्राहि मोको गोविन्द। शरणागत तव पद अरविंद॥
सुतन समेत बहुत दुख पावूँ। रात दिवस तुमरे पद ध्यावूँ॥१९६॥

तुम बिन हमरा नहिं को त्राता। निज जन को तुम मोक्ष प्रदाता॥
भव भय से डरपत जन जोई। तसका तुम बिन प्रभु नहिं कोई॥११७॥

संकर्षण माधव भव स्वामी। सर्वातम सर्वान्तर्यामी॥
नमो नमो पद पद्‌म तुमारे। रक्षक होवो देव हमारे॥१९८॥

नारद-वचन दोहा

कुन्ती के दुख देखकर, गांदिनि सुत दुख पाय।
धीरज दीना तास को, पांडव के गुण गाय॥१९९॥

अक्रूर-वचन चौपाई

भगिनी उर में धीरज धरिये। तनुजन का कुछ सोच न करिये॥
देव अंश यह तनय तुमारे। किसकी शक्ति इनें जो मारे॥२००॥
शूर शलाघ्य वीर धनुधारी। रण में वासव सम त्रिपुरारी॥
जगत जयी यह पाँचों भाई। ता पर जिनके कृष्ण सहाई॥२०१॥

नारद-वचन दोहा

या विध तिसको धीर दे, गांदिनि सुत मतिमान।
नृप परिषद में जायके, बोला वचन प्रमान॥२०२॥

अक्रूर-वचन चौपाई

हे कुरुराज वंश यश वर्धन। हे धर्मज्ञ सुमति अरि मर्दन॥
यथा धर्म महि पालत जोई। प्रजा प्रसन्न जास पर होई॥२०३॥
सम वर्तत जो नृप सब माही। श्रीयश ताको दुर्लभ नाही॥
भूप अधर्म करत जग जोऊ। निन्दा नरक पाव है सोऊ॥२०४॥
तांते भेद भाव नहीं मानो। अनुज तनुज निजसुत कर जानो॥
बनिता देह सुतादिक जोई। सदा साथ इनका नहिं होई॥२०५॥

इकला जन्म मरण जन पावत। इकला नरक नाक में जावत॥
कर अधर्म धन संग्रह करहैं। पुत्रादिक सो धन सब हरहैं॥२०६॥
तांके फल को नरक मझारी। भोगत सो इकला अघकारी॥
जान आपने बांधव जिनको। कर अधर्म पालत हैं तिनको॥२०७॥
सो सुत वनिता आदिक सारे। इस मूरख को तजने वारे॥
धर्म विमुख पापीजन जोई। निरय जात निज अघ कर सोई॥२०८॥
तांते अस्थिर सब जग जानो। स्वप्न मनोरथ के सम मानो॥
कर विचार मन को वश करिये। प्रजा पाल उर समता धरिये॥२०९॥

धृतराष्ट्र-वचन चौपाई

दानपते तुमरी यह वाणी। प्रिया पियूष तुल्य कल्याणी॥
सुनकर मम मति तृप्त न होई। यथा अमृत को पीकर सोई॥२१०॥
सुत सनेह कर चलचित माहीं। सौम्य वाक थिर होवत नाहीं॥
ईश्वर की निज इच्छा जोऊ। तिसे मिटावन शक्त न कोऊ॥२११॥
भू कर भार उतारण हेतू। यदुकुल प्रकटे सो खग केतू॥
जो अवितर्क्य प्रकृतिकर धाता। रच कर जगत कर्मफल दाता॥२१२॥
जिसकी इच्छा कर लय होई। करत विहार स्वतंतर जोई॥
जो संसार चक्र का स्वामी। तिसके पद पंकज प्रणमामी॥२१३॥

नारद-वचन दोहा

या विध नृप के वचन से, तांके मन की जान।
श्वफल्क सुत मधुपुर गया, हरि से करा बखान॥२१४॥

अक्रूर-वचन चौपाई

तात राम अच्युत. दुष्टारी। कुन्ती तनुज समेत दुखारी॥
तुम बिन तिनका इतर न कोई। निश दिन तव मग निरखत सोई॥२१५॥
दुर्योधन आदिक जो पापी। पांडव मारण की तिन थापी॥
अंधे को हम बहु समुझाया। पर तिसके उर बोध न आया॥२१६॥

नारद-वचन दोहा

कौरव की सुन दुष्टता, कुन्ती का दुख जान।
कुरुकुल वन को अनल सम, कुपित भये भगवान्॥२१७॥
काल गती को देखकर, कोप शांत कर श्याम।
भवन भेज अक्रूर को, आप गये निज धाम॥२१८॥
करत प्रेम से गान नित, जो कोई यह ताल।
विद्या देवें तास को, राम सहित गोपाल॥२१९॥

इति श्रीमत्परमहंसोदासीनशिरोवतंसस्वामिकार्ष्णिज्ञानदासशिष्येण
स्वामिकार्ष्णिगोपालदासाह्वेन विनिर्मिते गोपालविलासे
पूर्वविश्रामे यज्ञोपवीतोत्सवविद्याध्ययनादिवर्णनं
नामैकादशस्तालः समाप्तः॥११॥

नवाह्न-पारायण पाँचवाँ विश्राम॥५॥

ॐ

श्रीवृन्दावनविहारिणे नमः

अथ द्वादशस्तालः-१२

श्लोकः

येन प्रेषित उद्धवः स्वपतिना गत्वा व्रजेशालयं
गोपीगोपशिशुभ्य आत्मविषयं ज्ञानोपदेशं ददौ।
विज्ञायोद्धवतो व्रजाधिमपि यः कृत्वा सरामो व्रजे
गोपाधेः शमनं पुरीमथ ययौ कृष्णाय तस्मै नमः॥१॥

नारद-वचन दोहा

सुर गुरु शिष्य विशाल मति, उद्धव वृष्णि प्रधान।
बोले तिसको एक दिन, कर से गह भगवान॥२॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

उद्धव तुम वृन्दावन जावो। गोपन को मम कुशल सुनावो॥
हमरे मात पिता व्रजनारी। सखा सुहृद् पुनि धेनु हमारी॥३॥
मम वियोगकर अतिदुख पावत। रात दिवस में मोको ध्यावत॥
मम हित जिनने गृह सुखत्यागा। लोक कर्म से करा विरागा॥४॥

प्राण मात्र हैं जिनके तनु में। मम मिलने की आशा मन में॥
तिनका त्याग न हमसे होई। मोर परायण सब विध जोई॥५॥
कर उपदेश तिने समुझावो। तिनके मानस शोक मिटावो॥
तात तुमें क्या बहुत बखानों। तुम मतिमान सर्वविध जानों॥६॥

नारद-वचन दोहा

बैठ यान उद्धव चला, कर प्रभु पाद प्रणाम।
पहुँचा सूरज अस्त में, नन्दराज के धाम॥७॥

मास पारायण सत्रहवाँ विश्राम॥१७॥

कृष्ण सखा को देखकर, नन्द हृदय हरषाय।
माधव सम पूजा करी, बंधु जान उर लाय॥८॥
भोजन विविध कराय के, शैय्या में बैठार।
राम श्याम को याद कर, व्रजपति वचन उचार॥९॥

नन्द-वचन चौपाई

कुशली शौरी मित्र हमारा। सहित भूप निज तनुज सदारा॥
राम मुकुन्द कुशल अति ताता। प्राणनाथ मम व्रजजन त्राता॥१०॥
कबी मात को कृष्ण समारे। जिसने हितकर बहुत दुलारे॥
जा दिन से बिछुरे बल श्यामा। ता दिन से तजकर गृहकामा॥११॥
रो रो के इस आँख बिगारी। समुझावत सब व्रज की नारी॥
समुझावूँ मैं भी बहु भाँती। पर इसके कुछ समुझ न आती॥१२॥

बालक गोपी गोप समाजा। वृन्दा विपिन धेनु गिरिराजा॥
इनको याद करत बल श्यामा। जिन बिन विपत पड़ा व्रजधामा॥१३॥

राम कृष्ण जो धेनू पारी। सब ही रुष्ट पुष्ट तनु धारी॥
भई सोउ अब कुणप समाना। खात यवस तिलकिट्ट न दाना॥१४॥

घट भर दुग्ध देत थीं जोई। पस भर क्षीर देत अब सोई॥
फिरत विपिन में हाथ न आवत। बिन शिशु जननी सम डकरावत॥१५॥

हरि के पद अंकित वन बागा। पर्वत प्रांगन प्रेंख तड़ागा॥
देख देख पुनि तिनके नाना। चरित अनूप मंद मुस्काना॥१६॥

मुख राकेश हृदय कर यादा। मन में उपजत विविध विषादा॥
बकी बकासुरादि खल मारण। सप्तदिवस गिरिवर कर धारण॥१७॥

कालिय आदि भुजगका मर्दन। धेनुक केशी का पुन अर्दन॥
वरुण उरग वर्षा से रक्षण। दावानल का सपदी भक्षण॥१८॥

तीन ताल परिमित धनु भंजन। दश सहस्र गज बल नृप गंजन॥
बिन ईश्वर यह कर्म न होई। अमर असुर कर सकत न कोई॥१९॥

राम कृष्ण ईश्वर जन त्राता। जानत बी हम निश्चय ताता॥
पर सुत भाव न उर से जावत। यद्यपि हम बहुविध दुख पावत॥२०॥

एक बार हरि व्रज में आई। सबके उर का दाह मिटाई॥
पुन जावें मथुरा पुर माही। शपथ तोर हम रोके नाही॥२१॥

राम श्याम का मुख राकेश। कब देखेंगे हम लोकेश॥
हे विधि क्रूर कृपा नहि थारे। कृष्णविरह हमको क्यों मारे॥२२॥

नारद-वचन दोहा

या विध कहत नन्द के, चला नयन से नीर।
उपबर्हण के आसरे, बैठा शिथल शरीर॥२३॥

कृष्ण प्रेम कर विकल मन, भया तूषणी नन्द।
निरखत उर आकाश में, राम कृष्ण मुख चन्द॥२४॥

सुत के सुनकर चरित शुभ, यशुमति भयी अधीर।
कृष्ण क्षेम पूछत भयी, स्रवत नयन से नीर॥२५॥

यशोदा-वचन चौपाई

हे यदुनन्दन उद्धव ताता। संकर्षण माधव युग भ्राता॥
करहैं याद कबी व्रज प्रानी। जननी दीन मीन बिन पानी॥२६॥

क्षण सम जावत था दिन जोई। युग समान अब लागत सोई॥
क्या करिये कुछ वश नहिं मेरे। काल घृणी भी आव न नेरे॥२७॥

राम कृष्ण को कर कर यादा। नित नव उपजत विविध विषादा॥
एक व्यथा मम हृदय मझारी। शूल समान देत दुख भारी॥२८॥

एक दिवस हरि मटकी फोरी। मैं बांधा तिसको बरजोरी॥
भयकर नयन नीर तिस त्यागा। भैया बाबा कहने लागा॥२९॥

याद आत जब यह निज करणी। तप्त हृदय जिम द्वादश तरणी॥
बालक पूछत नित गृह आई। कब आवेंगे माधव माई॥३०॥

श्याम सखा की सुनकर वानी। उतर न आवत होत खिसानी॥
हरि का तात प्रात गृह माहीं। देखत सुतको दीसत नाहीं॥३१॥

गिरत मंच पुन पुन अकुलावत। गृहकृत वसन सनान न भावत॥
तिन बिन रुचिकर खाय न रोटी। निर्बल भया चलत गह सोटी॥३२॥

दीरघ श्वास लेत दिन राती। रुदन करत पीटत निज छाती॥
हे संकर्षण माधव ताता। राम मुकुन्द स्वजन सुखदाता॥३३॥

जरठ तात तज कहाँ पधारे। तुम बिन वत्स न कोउ हमारे॥
निशदिन बोलत याविध वानी। सुन सुन के मम मति अकुलानी॥३४॥

प्रातर उठकर कहत सप्रीता। मैया देहि दधी नवनीता॥
करहैं भोजन सो मध्याह्ना। सुनकर कांपत हमरे प्राना॥३५॥

भूषण वसन वंसरी थारी। विविध खिलौना पुन पिचकारी॥
गृह में धरे दृष्टि जब आवत। नव नव उर में दाह बढ़ावत॥३६॥

राम कृष्ण ने हम अब त्यागे। मात पिता की सेवा लागे॥
युग युग चिरजीवो युग भाई। जननी वार वार बल जाई॥३७॥

हम बी जानत तनुज बगाने। पर धाये का नाता माने॥
सो गति हमको हरि ने दीनी। वायस से पिक ने जो कीनी॥३८॥

पिकसुत पालत काकाज्ञानी। भ्रमकर निज तनूज करजानी॥
पर लागत कोकिल को जबही। मिलत जाय बंधुन में तबही॥३९॥

वायस का पुन सार न पावत। काक काक पिक पिक हो जावत॥
हमको निज सेवक सुविचारी। कबि तो फेरा करें मुरारी॥४०॥
वत्स राम दामोदर ताता। कहाँ गये तज आँधी माता॥
तात मात को मती खिजावो। सपदी निज मुखचन्द्र दिखावो॥४१॥
तुम तो घृणी मात के प्यारे। अब क्यों भये कठोर अघारे॥
अरे दैव तव को अभिलाखा। किस दुख हित तुम हमको राखा॥४२॥

नारद-वचन दोहा

दम्पति का लख प्रेम तब, उद्धव करत विचार।
वचन न निकसत वदन से, इक टक रहा निहार॥४३॥
चकित होय कर हृदय में, याद करे भगवान।
पुन कुछ धीरज धारके, बोला वचन सुजान॥४४॥

उद्धव-वचन चौपाई

कोटिन होवे जीब हमारी। कह न सकें वर कीरति थारी॥
सांख्य योग तंप गंग सनाना। तीरथ अटन आदि गोदाना॥४५॥
इन कर अस हरि प्रीति न होई। प्रेम भक्ति पाई तुम जोई॥
गृह तज तज मुनि कानन जावत। वात अशन कर काय सुकावत॥४६॥
पर अस प्रेम न पावत सोऊ। निज गृह में पावा तुम जोऊ॥
तुम सम कौन मनुज बड़भागी। जिनकी प्रीति ईशपद लागी॥४७॥

करत प्रयत्न मुनीश्वर नाना। मन में नहिं पावत भगवाना॥
सो तुमरे उर वसत निरन्तर। जिम खग पंजर में परतंतर॥४८॥
राम कृष्ण जग कारण दोऊ। पुरुष प्रधान रूप हैं सोऊ॥
प्राण वियोग काल जब आवत। तब जो तिनमें क्षण मन लावत॥४९॥
सकल अनातम तजकर सोई। परम गती को प्रापित होई॥
तिस नारायण में तुम प्रीती। कीनी तजकर लौकिक रीती॥५०॥
रहा कृत्य नहिं तुमरा कोई। कृत्य कृतातम तव मति होई॥
हे व्रजनाथ शोच नहि करिये। हे जननी चिन्ता परिहरिये॥५१॥
भक्तिप्रिय शरणागत त्राता। द्रुत आवेंगे दोनों भ्राता॥
तुमको अच्युत भाखा जोई। सत्य करेंगे वाणी सोई॥५२॥

नारद-वचन दोहा

या विध तिनके परस्पर, करत कृष्ण की बात।
क्षण समान रजनी सकल, गमनी भया प्रभात॥५३॥

साप्ताहिक पारायण चतुर्थ विश्राम॥४॥

भवन भवन में व्रजविषे, गोपी उठकर प्रात।
दुग्ध मथत अति प्रेम से, माधव के गुण गात॥५४॥

गोपी-वचन सार छन्द

दर्शन कब देवो कंसारी॥टेक॥
दावानल से रक्षा करके, विरहानल व्रज जारी।

मूसल धारा घन वर्षा से, तुम राखे गिरिधारी।
शोकाम्बुधि में बह जाती ब्रज, अब क्यों नाथ विसारी।
यमुना से अहिविष काढ़ी तुम, मोह-गरल व्रज डारी॥५५॥
नाग अघासुर से तुम राखे, अहि को मार अघारी।
तव दर्शन अभिलाषा फणि ने, खाये व्रज नर नारी।
करुणानिधि अच्युत नारायण, क्या तुम करण विचारी।
संकर्षण गोपाल मनोहर, हम शरणागत थारी॥५६॥

नारद-वचन दोहा

दूध मथन रव से मिला, प्रमदों का कल गान।
तिसकर नभ पूरण भया, श्रवण करत अघ हान॥५७॥
नित्य क्रिया हित सरित में, उद्धव गमना प्रात।
व्रज बनितों का गान सुन, भया प्रफुल्लित गात॥५८॥
अरुणोदय में कनक रथ, निरख नन्द के द्वार।
हर्षित होकर गोपिका, करहैं विविध विचार॥५९॥

गोपी-वचन चौपाई

क्या गांदिनि सुत सो पुन आया। जिसने हमसे कीनी माया॥
राम मुकुन्द हमारे प्राना। जननी के युग नयन समाना॥६०॥
सो ले गया प्रथम ही पापी। पुन उसने क्या करणी थापी॥
अब हमरा आमिष ले जाई। निज राजा का पिंड कराई॥६१॥

नारद-वचन दोहा

या विध तिनके कहत ही, उद्धव बुद्धि निधान।
आया तक कर दूर से, जाना कृष्ण समान॥६२॥
वेष रूप माधुर्यता, सुषमा शील निहारि।
कृष्ण सखा कर तास को, जाना व्रज की नारि॥६३॥

प्रभावती-वचन चौपाई

श्याम सखे कह राम मुरारी। कब आवेंगे घोष मझारी॥
व्रज वनिता सब दर्शन प्यासी। करुणाकर शशिमुख सुखरासी॥६४॥
याद करत कबि हमको प्यारे। व्रज वल्लभ सर्वस्व हमारे॥
हरि के बाल चरित अतिपावन। भक्तन के उर सुख उपजावन॥६५॥
अग्रज युत कीने प्रभु जोई। भूल गये होवेंगे सोई॥
राम श्याम की तोतिरि बानी। चलना ठुमक मंद मुसकानी॥६६॥
उद्धव याद हृदय जब आवत। हमरी छाती फटफट जावत॥
जब हमरे गृह खेलन जाई। भाखत दादी मांसी माई॥६७॥
तिनको कुछ हम खाने देवें। भरा उदर इम कहि नहिं लेवें॥
पुन चोरी कर माखन खावें। देख हमें डरकर भग जावें॥६८॥
जाय कहें फिर काकी मैया। काका बाबा लाला भैया॥
ऐसे मधुर सुवचन उचारी। मोहे तिनने व्रज नर नारी॥६९॥

सोउ भवन भ्राता पति तनुजा। देवर मात पिता गृह मनुजा॥
राम श्याम के बिना निहारे। यम सम लागत बांधव सारे॥७०॥

श्री राधिका-वचन चौपाई

व्रज में क्यों आवेंगे श्यामा। पाई कुब्जा नारि ललामा॥
जगत विहार सदा चल आता। मिली नारि भूले पितु माता॥७१॥

साधु स्वभाव राम अति भोरा। श्याम संग कर भया कठोरा॥
तजत अतिथि भोजन कर गेहा। निर्धन में गणिका तज नेहा॥७२॥

दक्षिणा ले यजमानहिं विप्रा। प्रजा तजत दुर्नृप को क्षिप्रा॥
गुरु को वटु तज विद्या पाई। वर वर त्यागत दुष्ट लुगाई॥७३॥

बिनफल तरु को खग तज जावत। दग्धविपिन में मृग नहिं आवत॥
सूखे सर से सारस भागत। तरुण मनुज धाये को त्यागत॥७४॥

भ्रमर गंध ले कुसुमन जैसे। राम श्याम व्रज त्यागी तैसे॥
इनके कर कृपाण दो धारी। एक करे है विधवा नारी॥७५॥

दूजी घर घर भीख मँगावे। वन में वास मूंड मुँडवावे॥
तापर इनकी अति रिपु नारी। देती दूध पूतना मारी॥७६॥

शूरपणखा प्रेम कर आई। इनसे नाक कान कटवाई॥
शूर शलाघ्य धर्म धुरधारी। राघव नारि ताड़का मारी॥७७॥

इतर नारि की केतिक बाता। परशुराम मारी निज माता॥
व्यास देह इनने जब धारी। रिसकर त्रिय निन्दा कर मारी॥७८॥

इनके सन्मुख जोऊ जावत। युग गतिबिन कुछ और न पावत॥
भली बची जग व्रज की नारी। उनका नाम लेउ मत दारी॥७९॥

नारद-वचन दोहा

प्रेम लपेटे अटपटे, बहु विध वचन उचार।
निज प्रिय को कर याद पुन, रोईं व्रज की दार॥८०॥
कृष्ण दूत का श्रवण कर, व्रज के सकल कुमार।
कुशल पूछने मित्रका, आये नन्द अगार॥८१॥

श्रीदामा-वचन चौपाई

हे यदुनन्दन हरि के प्यारे। कुशली हैं मम प्राण अधारे॥
हम अबोध सूदे वनचारी। दक्षविदुष सो शहिर विहारी॥८२॥
पुन हूए मथुरा के राजा। अब हमसे तिनका को काजा॥
पर माधव सम साधू जोई। तिनको नाक राज्य किन होई॥८३॥
जिससे करत प्रीति इकबारी। तजत नही पुन सुहृद विचारी॥
तनुधन सब निज प्रिय से वारत। सर्व भांति कर प्रीती पारत॥८४॥
कठिन चलावन रति की रीती। सो जानत जिस कीनी प्रीती॥
प्रथम प्रीति ही अति दुखदाई। करत जौन सो सुख नहिं पाई॥८५॥
तापर परदेशी से नेहा। सो जानो दारुण दुख गेहा॥
जोउ कदाचित् तिससे होई। निर्मोही से करे न कोई॥८६॥

तिससे प्रेम भया जग जांका। त्याग करा पुन प्रिया ने तांका॥
तिस जीवन से भव वर मरणा। बिन प्रिय इस तनु से क्या करणा॥८७॥

निज अधीन पर मरणा नाहीं। विरह कलेश सहत जग माँहीं॥
आवेंगे इम केशव भाखा। इस आशा से हम तनु राखा॥८८॥

निश दिन जंगल मंदिर माँहीं। राम मुकुन्द भूलते नाहीं॥
विरह एक गुण हमने जाना। होवत नहिं प्रिय का अपमाना॥८९॥

नहि तो विरह समान न आगी। हृदय विपिन में निशदिन लागी॥
अनल जरावत एकहि बारे। यह पुन पुन क्षण क्षण में जारे॥९०॥

तापर राम श्याम सम प्यारे। तिनकर बिछरन कौन सहारे॥
यद्यपि माधव करुणा सागर। दीनबंधु रति गति में नागर॥९१॥

तदपि मन्द भागी जन जोई। कानन ईंधन पाव न सोई॥
सुरतरु से धन को नहिं पावत। सरिता से पुन प्यासा आवत॥९२॥

खान पान खेलन गोचारण। इनमें मित्र भाव के कारण॥
हम तिनका कीना अपमाना। सो प्रभु से उद्धव बखशाना॥९३॥

कृष्ण क्षमा निज मूरखताई। हमरे हृदय याद जब आई॥
हृदय जलत बहुविध पछतावत। पर अब कुछ कर में नहि आवत॥९४॥

नारद-वचन दोहा

इत्यादिक बहु वचन कह, भये विकल मन बाल।
गद्गद् गिरा न कह सके, रुदन करत बेहाल॥९५॥

बाल वृद्ध नर नारि सब, एक एक कर आय।
राम श्याम का पूछकर, उर के खेद मिटाय॥९६॥

व्रज वासिन का प्रेम जो, सो तो सिन्धु समान।
उद्धव की मति अल्प प्लव, लागी गोते खान॥९७॥

जिम किम कर थिर बुद्धि धर, प्रभुपद करके याद।
निगमसार वर वचन कह, सबका हरा विषाद॥९८॥

उद्धव-वचन चौपाई

हे व्रज वनिता शिशु हरि प्यारे। तुम सम धन्य न जगत मझारे॥
अमर दुराप विष्णुपद प्रेमा। मुनि पावत कर जप तप नेमा॥९९॥

प्रेम भक्ति सो तुमने पाई। जिसकर वश होवत सुरराई॥
मनुज जन्म का फल यह होई। तनु मनसे प्रभु पद रति जोई॥१००॥

तुमरे पाद प्रणाम हमारा। अमर पूज्य पद-पद्म तुमारा॥
जो देवें हरि जन्म हमारे। तो धारूं तनु वंश तुमारे॥१०१॥

जाकर सहज कृष्ण रति पावूं। ताकर पुन भव में नहिं आवूं॥
मोपर कीनी प्रभु अति दाया। जो वृन्दावन हमें पठाया॥१०२॥

हरि पद प्रिय का दर्शन जोई। संसारी को दुर्लभ होई॥
सोच गलानि करो मत भाई। तुमको याद करत यदुराई॥१०३॥

कोई व्रज की बात चलावत। प्रभु के नयन नीर सुन आवत॥
निज मुख कर हरि बारम्बारी। करत शलाघा बहुत तुमारी॥१०४॥

व्रज में आवेंगे गिरधारी। सत्य कहूँ मैं शपथ तुमारी॥
अब प्रभु का सुनिये संदेशा। मिटत जासकर विविध कलेशा॥१०५॥

श्रीकृष्ण-वचन किरीट छन्द

देह अनातम कारज है, निज कारण भूमि प्रदेश समावत।
इन्द्रिय प्राण अचेतन हैं, मन के बल से निज गोचर जावत।
त्यौं मन बुद्धि अनातम हैं, जब चेतन का प्रतिबिंब स्वपावत।
निश्चय आदि विहार करें पुन, इन्द्रिय गोचर को नित ध्यावत॥१०६॥

आतश कांच जरावत ना, रवि का प्रतिबिम्ब जबी निज धारत।
दाह करे तिम बुद्धि स्वतो जड़, चेतन संग स्वकारज कारत।
सो प्रतिबिम्ब अनातम है, जल में रति छाय समान विचारत।
है परिछिन्न अचेतन मायिक, विज्ञ न आतम रूप निहारत॥१०७॥

सुन्दरी सवैया छन्द

मति देह चराचर गोचर जो, प्रकृती कर विश्व प्रपंच विकारा।
घट आदि विकार यथा क्षिति के, वृतिका जिम स्वप्न प्रपंच पसारा।
अग जंगम आदिक वस्तु सबी, प्रकृतीमय है तिससे नहि न्यारा।
प्रकृती पुन चेतन शक्ति कही, हवनाशन का जिम दाह उचारा॥१०८॥

नहि शक्ति प्रभिन्न कबी चितसे, नभ से अवकाश नहीं जिम न्यारा।
सुख रूप विभूतस चेतन है, मति आदिक का नित जानन वारा।
मन वाक अगोचर अन्तर है, जग मायिक से नित भिन्न उचारा।
गुण में जिम दण्ड भुजंगम हैं, चितमें तिम कल्पित है जग सारा॥१०९॥

मत्तगयन्द छन्द

विश्व प्रकाशक चेतन सो, अखिलातम एक अखण्ड अपारा।
ज्ञान स्वरूप तथा नित प्रापित, मुक्त सदा वर रूप तुमारा।
सो सब रूप अरूप अलौकिक, व्यापक रूप स्वरूप हमारा।
एक अकाश यथा घट मन्दिर, कूप विषे नहिं भेद उचारा॥११०॥

या विध जोउ विचार करो, तुमरा हमरा नहिं भेद उचारा।
योग वियोग न होवत है, इक आतम में मिलना नहिं न्यारा।
जो तुम अन्तर दृष्टि करो, तब मैं तुमरे उर कंज अधारा।
आतम से भिन जानत जो, नहिं पावत बाहिर रूप हमारा॥१११॥

चन्द्रकला छन्द

निगमागम का यह सार कहा, इसके हित दान व्रतादि धरें।
तप त्याग शमादिक मन्त्र जपें, सुर पूजन सांख्य विचार करें।
कर वास प्रयाग गया बदरी, कुरुक्षेत्र विषे शिव धाम मरें।
नहिं आतम ज्ञान भया जिनको, जन मूरख सो भव कूप परें॥११२॥

हमरा नित संगम चाहित हो, तब चित्त निरोध विचार करो।
तनु दृष्टि अनातम त्याग करो, हमको निज आतम रूप वरो।
तनु योग सदा नहिं होवत है, वपु योग भये नहिं काम सरो।
बढ़ है नित प्रीति वियोग विषे, इससे हमने तव संग हरो॥११३॥

नारद-वचन दोहा

नन्द यशोदा गोपिका, बाल वृद्ध व्रज लोक।
सुनकर प्रिय उपदेश को, त्यागा मन का शोक॥११४॥

संकर्षणं गोपाल को, आतम रूप निहार।
उद्धव को गुरु समझ के, कीना अति सत्कार॥११५॥

करें निमन्त्रण तासका, निज गृह में ले जाय।
सुनें सुनावें कृष्ण गुण, भोजन विविध कराय॥११६॥

कृष्ण अनुग को गोप शिशु, जंगल में ले जात।
जहिं जहिं कीने चरित प्रभु, सो सो ठौर दिखात॥११७॥

प्रभु पद अंकित निरख क्षिति, उद्धव अति हर्षात।
दण्ड समान प्रणाम कर, रज निज शीश लगात॥११८॥

नन्दराज के भवन में, करा वास बहु मास।
गोपन के पर प्रेम कर, प्रभु का जान निवास॥११९॥

राम कृष्ण के चरित नित, करत परस्पर गान।
व्रज लोकों के दिवस सो, गमने पलक समान॥१२०॥

इक दिन उद्धव बैठ रथ, चलने भया तयार।
गोप गोपिका आय कर, देत विविध उपहार॥१२१॥

राम कृष्ण के हित वसन, भूषण बहु विध दीन।
नन्द यशोदा मात ने, विनय बहुत विध कीन॥१२२॥

यशोदा-वचन चौपाई

तात घोष की दुर्गति जोऊ। भली भांति तुम निरखी सोऊ॥
जिम किमकर तुम उनको लावो। राम-कृष्ण के दर्स करावो॥१२३॥

जो द्रुत नहिं आवेंगे ताता। जीवत नहि पावेंगे माता॥
वत्स मुकुन्द मिलावो जोई। प्राण दानफल तुमको होई॥१२४॥

यद्यपि हम कुछ लायक नाहीं। किंकर लख आवें ब्रज माही॥
विरह सिन्धु डूबत ब्रज सारा। हे सुत तूरण करिये पारा॥१२५॥

नन्द-वचन चौपाई

हमरी मनो वृत्ति सब जोई। कृष्ण पदांबुज चितवें सोई॥
प्रभु के गुण गावें मम वाणी। पद-पंकज युग सेवें पाणी॥१२६॥

मम शिर वंदे माधव चरणा। प्रिय यश सुनें निरंतर कर्णा॥
जहाँ तहाँ यदि हम जनु धारे। होवे हरि पद प्रेम हमारे॥१२७॥

नारद-वचन दोहा

विदा करन हित दूर तक, गमने व्रज के लोक।
मानो विछुरे कृष्ण अब, करत बहुत विध शोक॥१२८॥

बैठ यान उद्धव चला, पहुँचा यादव धाम।
राम कृष्ण के चरण में, कीना दण्ड प्रणाम॥१२९॥

पूछा व्रज का कुशल तब, संकर्षण भगवान।
आदि अन्त तक वृत्त सब, उद्धव करा बखान॥१३०॥

उद्धव-वचन चौपाई

प्रभु सर्वातम अन्तरयामी। जानत सकल हृदय की स्वामी॥
तव माया निर्मित संसारा। हस्तामलवत गोचर थारा॥१३१॥
व्रज का प्रेम अलैकिक देखा। अबलौं कहूँ न सुनिया पेखा॥
विरह वारिधी में व्रजवासी। डूबत पार करो अविनाशी॥१३२॥
रवि बिन कंज नीर बिन मीना। तैसे प्रभु बिन व्रज सब दीना॥
करुणाकर व्रज शरण तुमारो। एक बार प्रभु घोष पधारो॥१३३॥

नारद-वचन दोहा

निज वाणी को याद कर, उद्धव का कर मान।
मात पिता नृप उग्र को, वन्दन कर भगवान॥१३४॥

बैठ कनकमय रथ विषे, उद्धव को ले साथ।
वृन्दावन की सीम में, पहुँचे जब यदुनाथ॥१३५॥

वन में चरती धेनु सब, मुख में लीना घास।
पूछ कर्ण ऊँचे किये, पहुँचीं रथ के पास॥१३६॥

घेर लिया तिन यान को, करहैं हूँ-हूँकार।
राम-श्याम के कर चरण, चाटत बारंबार॥१३७॥

मास-पारायण अठारहवाँ विश्राम॥१८॥

पाक्षिक पारायण नवाँ विश्राम॥९॥

एक एक का नाम ले, देत तिनें हरि प्यार।
व्रज बालक तब देख के, करहैं विविध विचार॥१३८॥

श्रीदामा-वचन चौपाई

किसका यह रथ आया भाई। सकली धेनु भाग कर जाई॥
राम श्याम बिन इतरन मांहीं। धेनु प्रेम अस करहैं नाहीं॥१३९॥
दीसत माधव ही व्रज आये। करुणाकर अब उद्धव लाये॥
फरकत अंग दाहिने मेरे। चलो निरखिये रथ के नेरे॥१४०॥

नारद-वचन दोहा

जान नाथ निज दंड सम, गिरे भूमि तत्काल।
राम-कृष्ण ने कूद रथ, हृदय लगाये बाल॥१४१॥
गदगद गिरा न कह सकें, चलत नयन से नीर।
कुशल पूछकर सखन को, प्रभु ने दीना धीर॥१४२॥
घोष गये बालक कछू, नन्द भवन में जाय।
कहा यशोदा नन्द को, राम श्याम युत आय॥१४३॥

सुन कर माता शिशुन को, भूषण बहु पहराय।
सुत सनेह से हर्ष कर, मोदक तिनहिं खवाय॥१४४॥

सुन कर गोपी गोप सब, नन्द यशोदा मात।
माधव को लेने चले, हर्ष न हृदय समात॥१४५॥

विप्र उचारत वेद ध्वनि, वन्दी करत सुगान।
बाजे बहु विध बजत हैं, आगे नाग निशान॥१४६॥

नन्द यशोदा के चरण, लगे जोड़ युग हाथ।
यथा योग्य सबको मिले, विश्व रूप यदुनाथ॥१४७॥

मात पिता प्रिय बंधु सब, बार बार उर लात।
रोमांचित तनु हर्ष कर, स्रवत नयन जलजात॥१४८॥

पुन गमने निज भवन में, गोपी गोप समाज।
राम कृष्ण को द्विरद पर, बैठाया व्रजराज॥१४९॥

ब्रज में रहते कृष्ण के, सुखी भये व्रज लोक।
सेवा संभाषण दरस, कर मेटत निज शोक॥१५०॥

करें निमंत्रण गोपिका, निज सादन ले जात।
भोजन विविध कराय के, शेष आप पुन पात॥१५१॥

शिशु परिषद में एक दिन, श्री दामा कर जोर।
बोला वचन विनोद हित, देख कृष्ण की ओर॥१५२॥

श्री दामा-वचन चौपाई

तुम शिवपुरी पधारे ताता। बहु विध विद्या पढ़ी सभ्राता॥
विदुषन की तुम संगति कीनी। विविध युक्ति तुम तिनसे लीनी॥१५३॥

परकी प्रीति निरखकर कोई। करत प्रेम पुन तिसमें सोई॥
स्वयं प्रीति जन कोई करहैं। पर की अरति न मन में धरहैं॥१५४॥

काऊ के उभ विध रति नाहीं। कहो तात तुम हो किन माहीं॥
याका अर्थ बताओ मोको। तब हम जानें पंडित तोको॥१५५॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

सापेक्षिक रति करहै जोई। खर खुजाल सम जानो सोई॥
सौहृद धर्म तास में नाहीं। स्वारथ ही केवल तिस माही॥१५६॥

जो निरपेक्ष प्रीति को करहैं। मात पिता सम करुणा धरहैं॥
सौहृद धर्म तास में जानो। सब विध योग्य प्रीति सो मानो॥१५७॥

करत न प्रीति अरति जनमाहीं। प्रेमी में जिसकी रति नाहीं॥
सो जन जानो चार प्रकारा। तिनका भेद सुनो अब सारा॥१५८॥

इक योगीश्वर आतम रामा। दूसर जोऊ पूरण कामा॥
बाह्य दृष्टि अरु भेद न तांके। भोग वासना नहिं पुन जांके॥१५९॥

मूढ़ कृतघ्न तीसरा जोई। चौथा जो गुरु द्रोही होई॥
पर रति मूढ़ जानता नाहीं। अहि पय सम रति द्रोही माँहीं॥१६०॥

मोको तिनमें एक न जानो। परम सुहृद करुणाकर मानो॥
मोमे करत ज़ोउ जन प्रेमा। नित प्रति ध्यावत दृढ़तर नेमा॥१६१॥

तिनसे दूर रहत हम जोऊ। ध्यान निरन्तर के हित सोऊ॥
रति परोक्ष में होवत जैसी। सन्मुख में नहिं होवत तैसी॥१६२॥

जैसे निर्धन धन को पाई। पुन वो द्रविण नष्ट हो जाई॥
रात दिवस सो धन को ध्यावत। बिन धन और न कछू सुहावत॥१६३॥

निज भक्तों को भूलूं नाहीं। करूँ परोक्ष प्रेम तिन माँहीं॥
कृपण अल्पमति जो जन होई। सन्मुख प्रिय हित करहै सोई॥१६४॥

सुरपरोक्ष प्रियता श्रुति गावत। सोई मत संतन को भावत॥
तुमरी प्रीति सकल मैं जानूँ। प्राण तुल्य तुमको नित मानूँ॥१६५॥

तनु मन प्रीत करी तुम जोई। तांका प्रति उपकार न होई॥
हमरे हेत बहुत दुख पाये। भवन भोग तज काय सुकाये॥१६६॥

अब तुम निश्चय कहो अपाना। हमको तुमने क्या कर जाना॥
जो कुछ तुम चाहित हो प्यारे। पूरण करूँ मनोरथ थारे॥१६७॥

श्री दामा-वचन सार छंद

भाखूं क्या तुमको हरि प्यारे॥।टेक॥
अपने दुख का कारण मैं हूँ, दोष नहीं कुछ थारे।
तव माया के वश हम होकर, जाना तुमको न्यारे।

जिम दशमे जनको भिन मानत, गिनत-गिनत नरहारे।
तुम सर्वांतम सब में पूरण, सबके जानन वारे॥१६८॥
भेद भाव से मैं दुख पाया, जाना ठीक विचारे।
जिम मृग नाभि विषे कसतूरिक, भ्रमत भ्रमत वनहारे॥
जो इक तनु में प्रीति करूँ क्या, इतर न देह तुमारे।
तिनके कहाँ अगोचर हो तुम, भेद त्रिधा जिन जारे॥१६९॥

श्रीकृष्ण-वचन वार्त्तिक

प्रिय श्री दामन्! अहो भाग्य तुमारे हैं, भैया!
मुनीन्द्र कुल कुड्मलार्क।
अभ्यसित निगमागम तर्क,
दुर्लभ ममात्म विषय विज्ञान।
जा तुमको प्राप्त भया है,
पूज्यपाद यदुनाथ।
श्री १०८ रौहिणेय भगवान् के सम,
आप बी सुरेन्द्रों कर पूज्य हुए हो॥१७०॥

श्री दामा-वचन वार्तिक

हे देव यदुवंशावतंस, परमहंस सम्मान्य, परमवदान्य, साक्षाद्द्वितीय वाचस्पति, ब्रह्मविद्वरीयान् सकल गुणनिधान, भवदीय कृपापात्र, १०८ श्रीमद् उद्धवाचार्य्य, पूज्यपाद जी की, दया-दृष्टिपात के प्रभाव से हमको यह अलभ्य लाभ हुआ है॥१७१॥

श्री बलदेव-वचन वार्तिक

हे प्रियवर्य्य! आभीर कुलवीर, धीर धुरंधर,
स्वजन मतिकुमुद कलिका, कलेश दमन,
पूर्णचन्द्र वदन, सखे देववरूथ,
आपबी स्वकीय, विशदानुभव, वर्णन करिये॥१७२॥

देववरूथ-वचन सार छन्द

प्यारे मन माने पुर रहिए॥ टेक॥
तुमरी राजी में हूँ राजी, छाया सम समुझयिए।
तव पद पंकज प्रीति चहूँ नित, और नाहिं कुछ चहिए।
हमरे लायक सेवा हो जो, सोउ सर्वदा कहिए।
तव मुख चन्द्र चकोर नयन मम, पलक की ओट दुखिए॥१७३॥

तव दर्शन हित पागल डोलूं, खान पान विसरहिए।
तव हित लोक लाज सब त्यागी, सुख की नींद न लहिए।
विरह अनल उर को नित जारत, तव पद मत जल जहिए।
याहि हेत से दर्श चहूँ तव, मत मम प्रिय दुख पहिए॥१७४॥

प्रीति करोगे प्रीति बढ़ेगी, प्रेम प्रवाह बहयिए।
त्याग करोगे प्राण पयारे, विरह अग्नि जल जयिए।
दोउ भांति से मरण हमारा, किस विध जीवन हुयिए।
सज्जन तुमरा नौता करहूँ, हृदयासन बैठयिए॥१७५॥

चाह चामल कुद्वैत दाल पुन, मोह मोदकहिं खयिए।
युग भ्राता मिल भोजन करके, मम मन मंचे शयिए।
जब तक तुमरे चरण दबावूं, तब तक प्रभु न उठयिए।
विनय करूं दामोदर तुमसूं, ममहित मत दुख पयिए॥१७६॥

नारद-वचन दोहा

आनँद दे निज सखन को, कर बहु विध संवाद।
भवन गये निज मात तब, करत रही थी याद॥१७७॥

मधुपुर जाने हेत प्रभु, इक दिन भये तयार।
राख लिये नृप नन्द ने, कर वर विनय अपार॥१७८॥

जब जब होत तयार हरि, सुनकर तब व्रज लोग।
राख लेत बहु विनयकर, सह नहि सकत वियोग॥१७९॥

इक दिन सबको भाख के, चलने भये तयार।
भये एकठे नन्द गृह, बाल गोप व्रजदार॥१८०॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

करूँ वन्दना जननी तोको। आज्ञा देवो अब तुम मोको॥
हमको अशगुन बहुत दिखाई। मधुपुर में कुछ आपद आई॥१८१॥
जरासंध रिपु लड़ने हेत। आया मथुरा कटक समेत॥
दुख पावत बहु बंधु हमारे। नित प्रति हमरा पंथ निहारे॥१८२॥

यशोदा-वचन चौपाई

अंग वत्स बल जावे माता। जान न देवूं तुमको ताता॥
चाहे मथुरा सब लुट जावो। यादव बी कितना दुख पावो॥१८३॥
तुमरा विरह अनल सुत जोई। हमसे सहन न होवत सोई॥
जो तुम व्रज में बहु दुख पावो। हमें उलंघन कर सुत जावो॥१८४॥
ग्रीषम में जिम याकुल कोई। सुरसरि तिसका जीवन होई॥
जिम पीयूष मृत को जीवावत। शीतातुर को अनल सुहावत॥१८५॥
रोगारत को औषध जैसे। व्रज को तुमरा दर्शन तैसे॥
भले दैव हमरे असु लेवे। तव वियोग नहिं हमको देवे॥१८६॥

नारद-वचन दोहा

सब बन्धन से अधिक अति, प्रीती बन्धन ख्यात।
लकड़ी को काटत भ्रमर, कटत न पंकज पात॥१८७॥
प्रेम फाँस में फँस गये, चलत नहीं कुछ जोर।
तब कर विविध विचार उर, बोले कृष्ण बहोर॥१८८॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

अब तो जाने देवो माता। हम बिन सब मधुपुर दुख पाता॥
आवेंगे हम व्रज में माई। मास मास में तोर दुहाई॥१८९॥

जननी तुमरी सेवा जोई। मम मति तिसके परवश होई॥
व्रजवासी मम प्राण समाना। इन सम मोको प्रिय नहिं आना॥१९०॥

क्षण भर इनें न भूलूं माई। हमरे प्रिय बांधव सुखदाई॥
तुमरे ऋणी रहें हम माता। प्रत्युपकार न कुछ बन आता॥१९१॥

तज विषाद बैठो निज गेहा। बाल जान करना नित नेहा॥
जननी सुत को आज्ञा देवो। हर्ष धरो उर धीरज सेवो॥१९२॥

नारद-वचन दोहा

सुनकर वचन दयालु के, व्रज वासी हर्षाय।
नन्द हृदय में सकुच कर, बोला वचन सुहाय॥१९३॥

नन्द-वचन चौपाई

बस बस अब कुछ और न कहना। इनकी मरजी में हम रहना॥
इतनी ही इनकी बहु दाया। जो तुमरा नहिं वचन लुटाया॥१९४॥

इनकी इच्छा बिन जो कर्मा। प्रिये सोउ नहिं हमरा धर्मा॥
इनको सकुच जास में होई। भामिनि करने योग्य न सोई॥१९५॥

जहाँ प्रसन्न रहें युग भ्राता। तहाँ निवास करें जन त्राता॥
करुणा आवे इनके जबही। हमको दर्शन देवें तबही॥१९६॥

नारद-वचन दोहा

निज पति के सुन वचन तब, हर्षित होकर मात।
राम कृष्ण को गोद ले, पेड़ा दधी खवात॥१९७॥

मात पिता के चरण में, पुन तिन वन्दन कीन।
उर लाये तिन हर्ष कर, विविध आशिषा दीन॥१९८॥

स्रवत नीर निज नयन से, रोकत हठकर मात।
यथायोग्य सबको मिले, राम कृष्ण युग भ्रात॥१९९॥

विदा करन हित दूर तक, गमने सब नर नारि।
फेरा तिनको विनय कर, प्रभु पहुँचे निज द्वारि॥२००॥

मात पिता नृप उग्र को, कीनी जाय प्रणाम।
तिन उर लाये प्रेम कर, हर्ष भये नर वाम॥२०१॥

व्रजवासी नर नारि का, प्रेम पयोनिधि जान।
शुक्ति तुल्य मम बुद्धि जो, तामें अल्प समान॥२०२॥

सुनें सुनावें प्रेम कर, जो कोई यह ताल।
दर्शन देवें तास को, राम सहित गोपाल॥२०३॥

इति श्रीमत्परमहंसोदासीनशिरोवतंसस्वामिकार्ष्णिज्ञानदासशिष्येण स्वामिकार्ष्णिगोपालदासाह्वेन विनिर्मिते गोपालविलासे पूर्वविश्रामे उद्धवश्रीबलरामकृष्णव्रजगमनागमनवर्णनं नाम द्वादशस्तालः समाप्तः॥१२॥

ॐ

श्रीवृन्दावनविहारिणे नमः।

अथ त्रयोदशस्तालः -१३

श्लोकः

यो हत्वा समरे जरासुतबलं शैलेन्दुवारं तत-
स्त्वष्टोदन्वति तन्निनाय मनुजान्स्वान्कारयित्वा पुरीम्।
मान्धातुस्तनयेन कालयवनं प्राघातयद्रैवतो
यद्भ्रात्रे प्रददौ पुनः स्वतनयां कृष्णाय तस्मै नमः॥१॥

नारद-वचन दोहा

अस्ति प्राप्ति भगिनी युगल, भोजराज की वाम।
भयीं दुखित निज पति मरे, गईं तात के धाम॥२॥

जरासन्ध निज जनक को, कहा कंस का हाल।
सो सुन यदुकुल नाश हित, कुपित भया समकाल॥३॥

नभ गिरि वसु भू नयन गज, इतने ही रथ जान।
पदग पंच गुण त्रिगुण हय, अक्षौहिणी परिमान॥४॥

बीस तीन अक्षौहिणी, सेना लेकर साथ।
घेर लिया मथुरा नगर, तब बोले यदुनाथ॥५॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

मागध की सेना जो आई।जीती लौट न जावे भाई॥
भूकर भार रूप यह ताता।इसमें भूप अधर्मी ख्याता॥६॥
पर मागध के प्राण न हरना।हमरा इस कुछ कारज करना॥
देश देश में खल जन जोई।इकंठे कर लावेगा सोई॥७॥
तिनको मार हरो भू भारा।याहि हेत अवतार तुमारा॥
हमरा धर्म संत द्विज पालन।धर्म विमुख खल जन का घालन॥८॥

नारद-वचन दोहा

या विध तिनके कहत ही, नभ से रथ युग आय।
सूत कवच आयुध सहित, सूत कहा सिर नाय॥९॥

सूत-वचन चौपाई

ताल ध्वजा युत स्यंदन जोई।संकर्षण तुमरे हित सोई॥
हल मूसल पुन शस्त्र तुमारे।चाप बाण अरु इ़षुधि अपारे॥१०॥
शारंग धनुष गरुड़ ध्वज याना।अक्षय तूण शिलीमुख नाना॥
अच्युत प्रभु यह तुमरे हेता।दारुक सारथि अश्व समेता॥११॥
शैब्य सुग्रीव बलाहक नामा।मेघपुष्प पुन हय बल धामा॥
कौमोदकि यह गदा तुमारी।नन्दन नाम खड्ग असुरारी॥१२॥
रथ पर बैठ शत्रु बल मारो।इसी हेत अवतार तुमारो॥
यदुकुल कष्ट युक्त अति स्वामी।धर्म धुरन्धर तव अनुगामी॥१३॥

शरणागत की रक्षा करिये। वसुधा भार नाथ परिहरिये॥
यह नृप असुर अधर्मी सारे। इनकर निर्जर भये दुखारे॥१४॥

नारद-वचन दोहा

रामकृष्ण रथ बैठ रण, गये कवच तनु धारि।
अल्प वाहिनी साथ ले, पूरा शंख मुरारि॥१५॥
शंख शब्द सुन रिपुचमू, भय युत भई अधीर।
नभ में रव पूरण भया, बोला मागध वीर॥१६॥

जरासन्ध-वचन चौपाई

बाल कृष्ण मति मन्द अराती। हे पुरुषाधम बान्धव घाती॥
तुमसे करूँ न रण गृह जावो। वनितारी मत वदन दिखावो॥१७॥
राम होय जो तव तनु वीरज। मम सन्मुख आवो धर धीरज॥
रण में तनु तज सुर सुख सेवो। अथवा मम प्राणन को लेवो॥१८॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

हम नहिं सुनत वचन खल तेरे। मरण समय आया तव नेरे॥
बकत नहीं जो शूर कहावत। निज पुरुषारथ को दिखलावत॥१९॥
तुम सम बन्धु अधर्मी जोई। तिसके मारे पाप न होई॥
खल जन वनिता का धर वेषा। गो विप्रन को देत कलेशा॥२०॥

अस नारी को मारत जोई। अश्वमेध फल पावत सोई॥
जो तुम तनु में कुछ बल सेवो। जामाता का बदला लेवो॥२१॥

नारद-वचन दोहा

या विध कहते कृष्ण के, दोनों कटक मझार।
शर वर्षा होने लगी, बोलत मारो मार॥२२॥

हरि-गीतिका छन्द

सब करत मारो मार, घेरो घेर पुन पुन कहत हैं।
नर वीररस युत लड़त सन्मुख, अमित सुख उर लेत हैं।
खच्चर तुरंगम हिन हिनावत, द्विरद गण चिक्कार हैं।
निस्त्रिंश तोमर प्रास परशू, परिघ मुग्दर मार हैं॥२३॥

घन घोषसम रथ नेमि रव, खर उरग इव शर जात हैं।
धनु तड़ित सम टंकार कर हैं, शस्त्र गण चमकात हैं।
भिन कुंभ कुंभी छिन्न कंधर, तुरग महि में बहु परे।
असवार पदग ससारथी रथि, अमित इषु असि कट मरे॥२४॥

अपगा चली बहु रुधिर की, तब असित केश शिवाल हैं।
नरसीस कच्छप भुज भुजंगम, तुरग मकर कराल हैं॥
कर मीन धनुष तरंग माणिक, हार कुंडल शर्करा।
द्विप द्वीप आयुध शुक्तिका, पुन छत्र शंख भयंकरा॥२५॥

भय देत भीरू नरन को, सो शूर लख हर्षाव हैं।
तब प्रमथ भैरव भूत योगिनि, हसत नाचत गाव हैं।
भर खपर पीवत रुधिर रण, में सीस कंदुक खेल हैं।
मृत वीर देव शरीर धर नभ, अप्सरा गल मेल हैं॥२६॥

हल मूसलकर राम ने, बाणों कर भगवान।
मारी पृतना सर्व तब, रहा न नाम निशान॥२७॥

द्वन्द्व युद्ध करणे लगे, जरासंध बलराम।
भूमि पटक नृप हो हली, उर बैठे बलधाम॥२८॥

तिसके मारण हेत तब, लीना मूसल हाथ।
निज कारण हित नृपति को, छुड़वाया यदुनाथ॥२९॥

सो वन तप करणे चला, मन में लज्जा पाय।
शिशुपालादिक नृपों ने, मग में रोका जाय॥३०॥

शिशुपाल-वचन चौपाई

राजन उर में धरिये धीरा। शूर शलाघ्य समर तुम वीरा॥
दोनों दल जब संयुग करहैं। जीतत एक एक पुन मरहैं॥३१॥

सदा न जीत सदा नहिं हारा। जीत हार यह लोक विहारा॥
काल गती तुमरे अब वामा। जिससे हार भयी संग्रामा॥३२॥

नहि तो अल्प बली यह यादव। तुमको जीत सके क्या माधव॥
चलिये निज गृह उद्यम करिये। लज्जा चिन्ता भय परिहरिये॥३३॥

पुन जीतोगे नृप कुल वर्धन। हे समतिंजय अरिगण मर्दन॥
दश सहस्र गज बल तव तनु में। तुम सम कौन सोचिये मन में॥३४॥

अंग भंग जो निर्बल प्रानी। जठर दीन कुल हीन अमानी॥
वन निवास तप तिनका धर्मा। तुम सम वीरन का नहि कर्मा॥३५॥

नारद-वचन दोहा

सुनकर तिनके वचन को, उर में धीरज धार।
बार्हदरथ मृत सेन सब, इकला गया अगार॥३६॥

यदुनन्दन पर त्रिदश गण, कल्प कुसुम बरसाय।
दुन्दुभि शंख मृदंग बहु, भेरी बीण बजाय॥३७॥

कीना पुरी प्रवेश प्रभु, निज पृतना ले साथ।
उग्रसेन को रण द्रविण, दीना सब यदुनाथ॥३८॥

मागध ने इस विध कलह, करा सप्त दश वार।
उतनी सेना लाय के, गया कृष्ण से हार॥३९॥

हरि इच्छा को जान कर, तब हम तिसके धाम।
गमने बोला जरा सुत, करके दण्ड प्रणाम॥४०॥

जरासन्ध-वचन चौपाई

नाथ अल्प बल यादव जोई। हार वार बहु तिनसे होई॥
अब कुछ जीत उपाय बतावो। हमरे मन का शोक मिटावो॥४१॥

दुर्योधन पुन वंग नरेशा। नृप शिशुपाल विंध्य वसुधेशा॥
मम इत्यादि सुहृद समुदाया। सब विधि इनने करी सहाया॥४२॥
वीर अग्र गण मैं बलधारी। शस्त्र अस्त्र युत चमू हमारी॥
नहिं जानूँ इसमें क्या कारण। बार बार मम होवत हारण॥४३॥

देव ऋषि-वचन चौपाई

जय कारण तुमको बतलावूँ। यामें इक इतिहास सुनावूँ॥
गर्ग विप्र का साला जोई। भामा से हँस बोला सोई॥४४॥
अरे नपुंसक तू किस कामा। वृथा विवाही तुमने वामा॥
हँसे श्रवण कर वृष्णि कुमारा। गर्ग क्रोधकर शाप उचारा॥४५॥
अस सुत उपजावूँ जिस आगे। अभ्यागम में यदुकुल भागे॥
इसविध कह सो काबुल गमना। पहुँचा यवन राज के भवना॥४६॥
यवन भूप बिन तनय दुखारी। द्विज ढिग भेजी अपनी नारी॥
मुनि तिसकी सेवा वश आया। यवन युवति से सुत उपजाया॥४७॥
द्विज सुत कालयवन बलधारी। करे सहाये जोउ तुमारी॥
तब जय होवेगी नृप थारे। भागेंगे यदुवंशी सारे॥४८॥

जरासंध-वचन चौपाई

तांको मुने खबर तुम करिये। करुणाकर मम हित उर धरिये॥
हम भेजेंगे निज जन जोई। कर विलम्ब पहुँचेगा सोई॥४९॥

तुमको जावत देरी नाहीं। मन सम गति मुनि तव तनु माहीं॥
सन्त दयालू पर उपकारी। हरो नाथ यह व्यथा हमारी॥५०॥

नारद-वचन दोहा

तथा अस्तु कह तास को, मैं पहुँचा क्षण काल।
काल यवन को कहा तब, जरासन्ध का हाल॥५१॥

देव ऋषि-वचन चौपाई

कालयवन मागध नृप जोई। चाहित तव सहायता सोई॥
सहित वाहिनी मधुपुर जावो। आहव में तुम जय यश पावो॥५२॥
सब यदुकुल में दोउ सुवीरा। श्यामल गौर रूप रणधीरा॥
पीत नील पट कुंचित केशा। कौस्तुभ गल वनमाला वेशा॥५३॥
सुषमा धाम शरीर कुमारा। जरासन्ध नृप तिनसे हारा॥
कृष्ण राम यह तिनकर नामा। तिनसे तुम करना संग्रामा॥५४॥

नारद-वचन दोहा

कालयवन गमना यवन, तीन कोटि ले संग।
दीरघ गौर शरीर पट, नीले भुजा भुजंग॥५५॥

मास पारायण उन्नीसवाँ विश्राम॥१९॥

घेर लिया मथुरा नगर, बोलत मारो मार।
देख कृष्ण बलराम से, करहैं विविध विचार॥५६॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

आरज अब क्या करिये भाई। उभय तरफ यह आपद आई॥
संयुग जावेंगे हम जोई। मागध बी अब आवत होई॥५७॥
हम होवेंगे रण में ताता। पुर का को होवेगा त्राता॥
पुर प्रवेश कर सो बलधारी। बंधुन को दुख देगा भारी॥५८॥
ताते एक दुर्ग बनवावें। सागर में जन जान न पावें॥
बाल वृद्ध बनिता निज जोई। करें निवास कोट में सोई॥५९॥

नारद-वचन दोहा

कर विचार बलराम से, तात काल भगवान।
सुर शिल्पी को बोलकर, लगे तिसे समुझान॥६०॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

पश्चिम वारिधि में तुम जावो। द्वादश योजन कोट बनावो॥
पुर निर्माण करो इक तामें। सब विकुण्ठ की रचना जामें॥६१॥
वीथी चौंपड़ विविध बजारा। हेम शिखर मणिमय आगारा॥
प्रजा निवास रजतमय धामा। राज सभा बहु विध विश्रामा॥६२॥
कोकिल कीर कुरंग मराला। गोगज हय रथ पृतना शाला॥
सुर द्रुम वल्ली युत बहु बागा। झरने वापी कूप तड़ागा॥६३॥

नारद-वचन दोहा

एवमस्तु कह सो गया, तैसे ही सब कीन।
एक रात्रि में विरच कर, खबर कृष्ण को दीन॥६४॥

प्रभु ने योग प्रभाव कर, मथुरा के सब लोक।
पहुँचाये तब द्वारका, भिन्न भिन्न दे ओक॥६५॥

कालयवन के काल हित, द्विज वाणी सन्मान।
बिन अग्रज पुर से चले, बिन आयुध भगवान॥६६॥

दर्शनीय मुख चन्द्रद्युति, कण्ठ कंज नव हार।
अद्‌भुत रूप निहार कर, यवनप करत विचार॥६७॥

कालयवन-वचन चौपाई

लक्षण कहे मुनीश्वर जोई। इसमें दीसत हैं सब सोई॥
श्यामल वन माला गलधारी। यह ही वासुदेव कंसारी॥६८॥

बिन रथ बिन आयुध यह जावत। बिन सेना इकला पद धावत॥
बिन स्यंदन बिन शस्त्रनिकाया। समर करूँ इससे तज माया॥६९॥

नारद-वचन दोहा

या विध निश्चय कर यवन, रथ आयुध को त्याग।
हरि के पकड़न हेत तब, तिनके पीछे लाग॥७०॥

हस्त फैसले पर प्रभू, आगे भागत जात।
मुनि मति जोउ दुराप है, तांके कर किम आत॥७१॥

कालयवन-वचन चौपाई

हे यदुनन्दन कृष्ण बकारे। रिपु से भागन उचित न थारे॥
यदुकुल जन्म समति कुशलाई। बहुविध विद्या तुमने पाई॥७२॥

शूर शलाघ्य समर उर धीरा। तुमें पलायन योग्य न वीरा॥
जरासन्ध से तुमसे हारे। अब भागत क्या हृदय विचारे॥७३॥

नारद-वचन दोहा

इस विध तिसके वचन को, सुना न कुछ अखिलेश।
गिरी गुहा में कृष्ण ने, कीना क्षिप्र प्रवेश॥७४॥

तिसमें निरखा मनुज इक, सोवत पाद पसार।
गुप्त भये प्रभु तास पर, निज पीताम्बर डार॥७५॥

गया गुफा में यवन पुन, तांको कृष्ण विचार।
पद प्रहार तिसको करा, तिसने नयन उघार॥७६॥

क्रोध दृष्टि कर निरखिया, भस्म करा यवनेश।
तब सन्मुख तिस पुरुष के, प्रगट भये विबुधेश॥७७॥

मुचुकुन्द-वचन चौपाई

को तुम श्याम चतुर्भुज वारे।रविसम द्युति नहि जात निहारे॥
मत्त सिंह सम विक्रम तेरा।दूर करा कंदरा अँधेरा॥७८॥

कोमल पाद पद्मयुग थारे।किम कंटक युत विपिन पधारे॥
तेजस्विन के तेज निकाये।सो सब इकठे हो तुम आये॥७९॥

सोम विभावसु सूरज होई।सुरपति लोकपाल वा कोई॥
अथवा विधि शंकर विबुधोत्तम।जगन्नाथ तुम हो पुरुषोत्तम॥८०॥

नर केसरि जो तुमको भावो।जन्म कर्म निज गोत्र सुनावो॥
मैं इक्ष्वाकू कुल में जाता। यौवनाश्व का सुत विख्याता॥८१॥

मम मुचुकुन्द नाम यह होई।सुर नर में जानत सब कोई॥
मघवादिक सुरगण इक बारा।असुरों से आयोधन हारा॥८२॥

तब तिनकी हम करी सहाया।असुर जीतकर नाक दिवाया॥
तब देवन ने भाखा मोको।परिश्रम बहुत भया नृप तोको॥८३॥

कर विश्राम त्रिविष्टप माहीं।वसुधा तल तुमरा कुछ नाहीं॥
सचिव राज्य ज्ञाती जन धामा।भये काल वश तव सुत वामा॥८४॥

मांगो वर जो तुमको भाता।बिना मोक्ष तिसका हरि दाता॥
तब हम तिन से वचन उचारा।सोवन चाहित चित्त हमारा॥८५॥

निद्राभंग करे मम जोई।सपदि भस्म होवे जन सोई॥
वांछित वर तिन मोको दीना।यहाँ शयन मैंने तब कीना॥८६॥

अभी किसी ने हमें उठाया।निज अघ का फल तिसने पाया॥
अब तव दर्शन कर अहितारी।भया हृदय मम हर्ष अपारी॥८७॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

जन्म कर्म गुण बहुत हमारे।तिन सबको नृप कौन उचारे॥
तदपि इदानीं तनु के जोई।करिये श्रवण कहत हम सोई॥८८॥
सुर गो द्विज की रक्षा कारण।दुष्ट अधर्मी जनके मारण॥
यदुकुल में हमने तनु धारा।वासुदेव यह नाम हमारा॥८९॥
कालनेमि आदिक खल मारे।यवनप मारा तुमरे द्वारे॥
प्रथम अर्थना तुम बहु कीना।तांते तुमको दर्शन दीना॥९०॥
नृप वर मांगो तव मन जोई।देवेंगे हम तुमको सोई॥
मम शरणी मानव जो आवत।भय चिंता पुन नहि सो पावत॥९१॥

नारद-वचन दोहा

माधव को मुचुकुन्द नृप, जान विष्णु भगवान।
पद पंकज में वंदना, कीना दण्ड समान॥९२॥

मुचुकुन्द-वचन सवैया

प्रभु की प्रकृति कर मोहित है, जड़ जीव करे नहीं भक्ति तुमारी।
दुखदायिक गेह विषे रति को, सुख लाभ लिये कर है अविचारी।

परमारथ को नहि जानत है, जगदीश्वर वंचित मानव नारी।
भव दुर्लभ मानुष देह मिला, पर सो पटका गृह कूप मझारी॥१३॥
पृथिवी पति भाव मदांध भया, विरथा अबलों सब काल गवाया।
घट कुड्य समान अनातम में, जड़ देह विषे अभिमान बढ़ाया।
वनिता सुत का नित थूक चटा, तिनके हित मैं बहु जीव दुखाया।
धन धाम विषे नित प्रीति करी, हमने तव पाद सरोज न ध्याया॥१४॥

किरीट छन्द

अश्व मतंगज स्यंदन पादग, चक्र अनीकप आवृत जावत।
वृद्ध भया मन लोभ दिनों दिन, बाढ़त दुर्मद शान्ति न आवत।
होत प्रमत्त मनोरथ में नित, काल स्वरूप तुमें नहिं ध्यावत।
खावत काल तिसे क्षण में, पर मूषक को जिम व्याल चबावत॥१५॥

चामर छत्र झुलें शिर ऊपर, भूषण अम्बर गंध लगावत।
जीत मही नृप आसन बैठत, भूपन से निज पाद धुवावत।
योषित का कर कंदुक होवत, कामुक को लव लाज न आवत।
भस्म कृमी विट विग्रह होवत, सो जिसके हित पाप कमावत॥१६॥

मत्तगयन्द छन्द

कर्मन के वश मानव भ्रामत, भूमि पताल त्रिविष्टप जाई।
राग विषाद विकार ग्रसा जन, होत दुखी कुछ शान्ति न पाई।
ईश कृपा तब होय जबी तब, संत समागम में मन लाई।
साधु दया करहैं तिस ऊपर, सो प्रभु के पद को नित ध्याई॥१७॥

राज्य समाज विनष्ट भया मम, सो सब देव अनुग्रह थारा।
चाहित हैं जिसको वसुधाधिप, सो जिनने तुममें मन धारा।
त्याग करा अब सात्विक राजस, तामस रूप मनोरथ सारा।
पाहि प्रभो शरणागत हूँ तव, आप बिना नहिं और हमारा॥९८॥

सुन्दरी सवैया

तुम ज्ञान स्वरूप निरंजन हो, मति आदिक गोचर के तुम ज्ञाता।
नभ के सम व्यापक विश्वविषे, सुख रूप चिदातम वेद बताता।
पुरुषोत्तम अद्वय निर्गुण हो, भव मायिक से पर आगम गाता।
निज संतन के हित देह धरो, भव में शरणागत मानव त्राता॥९९॥

भव भोगन से भय लागत है, बहु कर्मन से हमने दुख पाया।
षट इन्द्रिय शत्रु न शान्त भये, उलटा इनने भव ताप तपाया।
भव सिन्धु पड़ा दुख पावत हूँ, अबलो मन में लव शांत न आया।
जगदीश्वर केशव देव हरे, जनको भव पार करो कर दाया॥१००॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

भूप अहैतुक प्रेम तुमारा। विमल मनीषा विरति विचारा॥
जो वर लोभ न तुम को भावा। मम जन का यह सहज स्वभावा॥१०१॥

विचर मही मन मोमें लावो। अनपायिनि भक्ती तुम पावो॥
अब तुम जाकर तप में लागो। हिंसायुत इस तनु को त्यागो॥१०२॥

विप्र जन्म होवेगा थारा। तिसमें कर निज ब्रह्म विचारा॥
सब भूतन में करुणा कारी। तब होवेगी मोक्ष तुमारी॥१०३॥

नारद-वचन दोहा

उत्तर दिश में नृप गया, हरि पद सीस निवाय।
मारे सकल मलेछ प्रभु, मथुरापुर में जाय॥१०४॥
अथ मागध पुन लड़न हित, उतनी सेना जोर।
निज जनपद के द्विजन को, बोला वचन कठोर॥१०५॥

जरासन्ध-वचन चौपाई

निन्द्य मुहूरत तुम बतलाया। मैं बहु बार हारकर आया॥
अब ऐसा क्षण कहो विचारी। मृध में होवे जीत हमारी॥१०६॥
वांस करो कारागृह माहीं। जब लग मैं गृह आवूं नाहीं॥
जो मैं माधव से जित आया। देवूंगा तुमको बहु माया॥१०७॥
तुमरा जानूंगा उपकारा। होवूँगा नित दास तुमारा॥
भयी पराजय जोउ हमारी। तब दुर्गति होवेगी थारी॥१०८॥

नारद-वचन दोहा

पूछ मुहूरत द्विजन से, सेना को ले साथ।
पहुँचा मागध मधुपुरी, देख तिसे यदुनाथ॥१०९॥
ब्रह्म वाक्य के सत्य हित, भागे दोनों भ्रात।
निरख तिने पुन सहित बल, मागध पीछे जात॥११०॥

अद्रि प्रवर्षण में चढ़े, दूर जाय यदुनाथ।
जरासन्ध खोजन लगा, आय न तिसके हाथ॥१११॥

अनल लगाई अचल में, नृप ने मारण हेतु।
गये द्वारका कूदकर, ताल गरुत्मत केतु॥११२॥

जरे जानकर तिनों को, मागध गया स्वधाम।
जय की भेरि बजाय के, द्विज पद करी प्रणाम॥११३॥

राम कृष्ण का दर्सकर, खुशी भये सब लोक।
आनंद से बसने लगे, जहां न दुख भय शोक॥११४॥

रवि वंशी आनर्त्त पति, पूरव रैवत नाम।
निज कन्या को साथ ले, गया चतुर्मुख धाम॥११५॥

नाच रही तब अप्सरा, क्षणभर कर विश्राम।
अवसर पाकर भूप ने, विधि पद करा प्रणाम॥११६॥

रैवत-वचन चौपाई

नाथ जगत के तुम पितु माता। विष्णु रूप हो तुम भवत्राता॥
रुद्र रूप तुम करो संहारा। प्रभु तुमरा नहिं पारा वारा॥११७॥

विविध विहार करो भव माहीं। पर तुमको कुछ बन्धन नाहीं॥
बाजीगर की माया जोई। नहिं मोहे स्वामी को सोई॥११८॥

स्वप्न सृष्टि सम तुम भव मानो। सत्य रूप कर लव नहिं जानो॥
ताते तुमको बन्धन नाहीं। सदा स्थिति तव आतम माहीं॥११९॥

निरावर्ण प्रभु ज्ञान तुमारा। हस्तामलवत सब संसारा॥
सब शुभ गुण युत सुन्दर काया। चिर आयू पत्नी सुखदाया॥१२०॥

मम कन्या के लायक जोऊ। देव बतावो नर वर सोऊ॥
इस हित मैं तव वेशम आया। सुत पर करो पितामह दाया॥१२१॥

ब्रह्म-वचन चौपाई

यहाँ मुहूरत भया तुमारे। महि में बीस सप्त युग चारे॥
क्षिति में रहा न जब का कोई। निरखे थे तुमने नृप जोई॥१२२॥

भये नाश तुमरे धन धामा। पुत्र पौत्र बांधवगण वामा॥
अब तुम भूपति भू में जावो। तात काल मत देर लगावो॥१२३॥

राम नाम फणिपति के अंसा। प्रकट भये यदुकुल अवतंसा॥
तिनको तुम निज तनया देवो। पारबर्ह हित हमसे लेवो॥१२४॥

नारद-वचन दोहा

सहित रेवती आय क्षिति, श्रेष्ठ मुहूरत जान।
रैवत ने बलराम को, दीना कन्यादान॥१२५॥

विपुल बरात चढ़ाय के, कर वर बहु उत्साह।
शौरी ने श्रुति रीति से, कीना तनय विवाह॥१२६॥

वाजी कुंजर रथ वसन, देकर बहु बिध दाज।
आप गया उत्तर दिशा, तप हित रैवत राज॥१२७॥

सुने सुनावे प्रेम कर, जो कोई यह ताल।
करें सहायहि तास का, संयुग में गोपाल॥१२८॥

इति श्रीमत्परमहंसोदासीनशिरोवतंसस्वामिकार्ष्णिज्ञानदासशिष्येण स्वामिकार्ष्णिगोपालदासाह्वेन विनिर्मिते गोपालविलासे उत्तरविश्रामे जरासन्धयुद्धकालयवनवधश्रीरामविवाहवर्णनं नाम त्रयोदशस्तालः समाप्तः॥१३॥

—✱✱✱—

ॐ

श्रीवृन्दावनविहारिणे नमः।

अथ चतुर्दशस्तालः -१४

श्लोकः

यस्मै कुण्डिनपत्तनाधिपसुता पत्रं पुरेऽप्रैषयद्
यस्तस्या नगरं गतो द्विजयुतः सैन्येन रामः सह।
जित्वा भूमिभुजश्च भीष्मकसुतां हृत्वाऽऽगतः स्वं पुरं
वैदर्भीमुपयेम आत्मभवने कृष्णाय तस्मै नमः॥१॥

नारद-वचन दोहा

भीष्मक भूप विदर्भ पति, कुण्डिन पुर में वास।
भये पांच सुत तास के, एक सुता गुण रास॥२॥

रुक्मी अग्रज रुक्मरथ, रुक्म बाहु पुन जान।
रुक्म केश चौथा रुक्म, माली पंचम मान॥३॥

भगिनी इनकी रुक्मिणी, लक्ष्मी का अवतार।
भयी युवा जब बन्धु सब, करत विवाह विचार॥४॥

तास समय पर मैं गया, कीना नृप सत्कार।
लाय चरण मेली सुता, भूपति वचन उचार॥५॥

भीष्मक-वचन चौपाई

अहोभाग्य अति हमरे आजू। जो दर्शन दीना ऋषिराजू॥
पावन भये भवन कुलसारे। सन्तुष्टे सुर पितर हमारे॥६॥
तुम त्रिकाल दर्शी मुनिनाथा। विश्वविदित तव जिमफल हाथा॥
देखो मम कन्या का पानी। कर रेखा फल करो बखानी॥७॥
रूप शील गुण आयुष कान्ती। विद्या वंशादिक सब भांती॥
इसके लायक वर जो होई। कहो कृपा कर नर वर सोई॥८॥

देवर्षि-वचन चौपाई

भूप सुनो यह सुता तुमारी। सिन्धु सुता सम निज पति प्यारी॥
सब गुण इसमें दोष न कोई। सौभागिनि चिर आयू होई॥९॥
इसके जन्म मात्र कर थारे। नष्ट भये दुष्कृत दुख सारे॥
पूरव पुण्य पुंज तुम कीना। तुमरे गृह इसने जनु लीना॥१०॥
इसके योग्य कहीं पति नाहीं। हम विचार देखा मन माहीं॥
द्रुहिण प्रपंच जहाँ लग होई। गुण अवगुण साना सब कोई॥११॥
इसके योग्य एक धव जानो। सब गुण खाणि विष्णु कर मानो॥
यदुकुल नन्दन शौरी तनुजा। वासुदेव संकर्षण अनुजा॥१२॥
रूप राशि द्युति शुभ गुण सागर। तेजस्वी सब विद्या नागर॥
त्रिभुवन लक्ष्मी कर में जाके। देव दनुज नर वश में तांके॥१३॥

समर अजीत स्वजन गण त्राता। नर पंचानन भव विख्याता॥
मधुर सुखद प्रिय कोकिल वानी। धर्म धुरंधर वांछित दानी॥१४॥

इत्यादिक तिनके गुण नाना। मैं कुछ तुमको अल्प बखाना॥
शारद शेष कल्पशत गावें। तिनके गुण का अन्त न पावें॥१५॥

भीष्मक-वचन चौपाई

नाथ बहुत शुभ वचन बखाने। केशव के गुण हम सब जाने॥
कंसादिक तिसने खल मारे। मागध आदिक तिनसे हारे॥१६॥

जगदीश्वर व्यापक प्रभु जोई। प्रकट भये शौरी सुत सोई॥
या विध सुनिया मैं बहु बारा। सोई प्रभु ने वचन उचारा॥१७॥

अब मेरे मन निश्चय आया। करूं तथा जिम प्रभु फरमाया॥
भाग्य होनगे जोउ हमारे। सत्य वचन होवनगे थारे॥१८॥

नारद-वचन दोहा

हमरे मुख से श्रवण कर, हरि के चरित उदार।
रुक्मिणि का मन लग गया, प्रभु के चरण मझार॥१९॥

नृप को कहकर मैं गया, पाछे भा बहु शोर।
रुक्मी द्वेषी कृष्ण का, बोला वचन कठोर॥२०॥

रुक्मी-वचन चौपाई

जनक जरठ भा तव मति मारी। साधु असाधु न करत विचारी॥
कर विश्वास द्विजन की वानी। दीसत तुमको लाभ न हानी॥२१॥
कहाँ भूप हम धर्म धुरीणा। क्षत्रिय शूर कुलीन प्रवीणा॥
नृप ययाति कर शापित यादव। कहाँ धेनु पालक यह माधव॥२२॥
अबलों गोप भवन यह रहऊ। तिनकी जूठ खाय कुछ भयऊ॥
कृष्ण सम्बन्ध न हमरे योगू। करहैंगे हासी सब लोगू॥२३॥
चेदि अधिप दमघोष तनूजा। नृप शिशुपाल चन्द्र जनु दूजा॥
धर्म धुरीण कुलीन उदारो। सो लायक सम्बन्ध हमारो॥२४॥
जो मम कहा करोगे नाहीं। गृह तज जावूंगा वन माहीं॥
तुम नहिं जननी जनक हमारे। हम भी नाहि तनूज तुमारे॥२५॥

नारद-वचन दोहा

भीष्मक सुतपरवश भया, देख मुहूरत काल।
लगन चैद्य गृह भेजिया, परिणय हित शिशुपाल॥२६॥
सुनकर तब श्रीरुक्मिणी, दुखकर भयी अचेत।
धर धीरज पुन पत्रिका, लिखी कृष्ण के हेत॥२७॥
बोल किसी वर विप्र को, तांहि पत्रिका दीन।
कर प्रणाम द्विज चरण में, विनय बहुत विध कीन॥२८॥

श्रीरुक्मिणी-वचन चौपाई

इस अवसर प्रभु करिये दाया। कष्ट समय मैं तुमें बुलाया॥
गुरो सहाय करो अब मेरी। शोकातुर मैं शरणी तेरी॥२९॥

मात पिता आदिक परिवारा। सो सब मम मत के अनुसारा॥
कुल कलंक उपजा मम भ्राता। तिसके वश बांधव पितु माता॥३०॥

चेदिप को चाहित सो देना। मैंने तिसका नाम न लेना॥
तनु मनकर मैं तिसको त्यागा। माधव के पद मम मन लागा॥३१॥

पुरी द्वारका में तुम जावो। यदुनन्दन केशव को लावो॥
बहुविध कहना विनय हमारी। आधि सिंधु से करिये पारी॥३२॥

नारद-वचन दोहा

द्विजवर गमना पत्र ले, यादव पुर में जाय।
वासुदेव का दर्स कर, उर में अति हर्षाय॥३३॥

देख विप्र को भवन में, प्रभु ब्रह्मण्य कृपाल।
कर प्रणाम तांके चरण, आसन दीन विशाल॥३४॥

भोजन विविध कराय के, निज समीप बैठाय।
कर से द्विज पद ग्रहणकर, बोले हरि हर्षाय॥३५॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

कहो विप्र वर कुशल तुमारे। मन लागत निज ब्रह्म विचारे॥
शम संतोष आदि निज धर्मा। श्रद्धाकर करहै जो शर्मा॥३६॥

सो द्विज उभय लोक सुख पावत। बिन संतोष दशो दिश धावत॥
यथा लाभ संतोषी जोई। भूत सुहृद साधू जो होई॥३७॥

निरहंकार विषय उपरामा। तिसके पद हम करें प्रणामा॥
मम गृह आये तुम जिस कारण। सो अब करिये विप्र उचारण॥३८॥

क्या करिये मुनि तुमरी सेवा। पूजनीय तुम वसुधा देवा॥
भाखोगे द्विजवर तुम जोई। भया जानिये कारज सोई॥३९॥

नारद-वचन दोहा

हरि के कर में पत्रिका, दीनी द्विज हर्षाय।
वदन जबानी बचन जो, सो सब दिये सुनाय॥४०॥

मास पारायण वीसवाँ विश्राम॥२०॥

पाक्षिक पारायण दसवाँ विश्राम॥१०॥

पत्र पढ़न के हित कहा, महिसुर को यदुनाथ।
प्रभु की आज्ञा पायकर, खत बाँचा ले हाथ॥४१॥

श्रीरुक्मिणी-वचन वार्तिक

स्वस्ति श्री १०८ श्री श्री मदनवद्यानंगानीककोटि-कमनीय सर्वांग! भोगिभोगभुजदंडधृततडिन्मार्त्तण्डकोटि-मयशारंगचंडकोदंडप्रास्त समस्तखंडान्वितकोटिब्रह्मांड, अंडजाखंडलाद्यखंड मदखंडखंडखंडन! मेघमेचकावयव! वदनविधुविमुखखलारविंदमदमर्दन! पदाम्बुरुह नखर प्रवाल वृन्द वृन्दारकार्क कोटि कन्दर्पदर्पदलन! पीताम्बरावृतांस तिरस्कृत सजलघन विद्युल्लता लक्ष्मी विस्तार! मयूर-पिच्छान्वितमुकुटमणिप्रवेकविनष्ट वैष्णवहृदयान्धकार! स्वजनकर्णप्रविष्टगुरुगुणगणामृतनिवृत्त विषयचिंतातापापार! चंद्रवंशोद्भव! भवदीयवदनचंद्रचकोरी विदर्भदेशाधिपवैदर्भी किशोरी त्वदीयांघ्रिसरसिजरेणुभ्रमरी कृतकोटिवन्दना पद्मा-करपद्मपरिमर्दितभवदीयपादपद्म पलाशों में निवेदन होवे, हे प्राणप्रिय! महत्कुलशील द्रविण विद्यावयोरूपधाम! निरुपम नर लोक मनोभिराम! आपको कौन कुलवती कन्या न अंगीकार करे॥४२॥

हरि गीत छन्द

तव पाद युगल सरोज में, निज देह मन अर्पण करा।
मम नाथ तुम स्वीकार करिये, आपको मैं पति वरा।
नर शारदूल विभाग मैं, तव इतर कोऊ मत वरे।
शिशुपाल आदि शृगाल कुछ, जिन मोर तनु घर्षण करे॥४३॥

उद्वाह दिन से प्रथम दिन, मम जनकपुर में आवना।
चतुरंग सेना साथ ले सब, समर वस्तू लावना।
पुर प्रान्त देवी पूजने हित, तास दिन हम जावना।
मथ चैद्य मागध सैन्य को, मम यान मांहि बिठावना॥४४॥

यदि कूप बाग तड़ाग जप मैं, देव गुरु अर्चन करे।
तब प्राणनाथ मुकुन्द आकर, चरण दासी को वरे।
कर ग्रहण करा न नाथ जो तुम, अन्न जल तज अब मरूँ।
शत जन्म तप कर प्रिय मिलूँगी, और को पर नहिं वरूँ॥४५॥

नारद-वचन दोहा

प्रिया पत्र वर श्रवण कर, हँस कर तब घनश्याम।
द्विज को धीरज देन हित, बोले वचन ललाम॥४६॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

कछू दिवस हैं परिणय माँहीं। अभी विदर्भ जावना नाहीं॥
करिये वास यहाँ क्षिति देवा। करहैंगे हम तुमरी सेवा॥४७॥

चलना यान बैठ मम साथा। इक दिन पहुँचेंगे द्विजनाथा॥
रण में जीत नृपति खल सारे। तिसको लावेंगे निज द्वारे॥४८॥

नारद-वचन दोहा

कुण्डिनपुर के विप्र का, कीना बहु सत्कार।
अच्युत दीने हर्ष कर, पट भूषण दीनार॥४९॥

पाणि ग्रहण से प्रथम दिन, विप्र सहित घनश्याम।
कुण्डिन पहुँचे बैठ रथ, उतरे नृपति अराम॥५०॥
रण शंका कर राम अथ, अनुज गमन को जान।
पहुँचे कृष्ण समीप तब, सेना साथ महान॥५१॥

नवाह्न पारायण छठा विश्राम॥६॥

हरिकर भेजा विप्र सो, गया रुक्मिणी द्वार।
वैदर्भी उर कर रही, आगे शोक अपार॥५२॥

श्रीरुक्मिणी-वचन हरिगीत छन्द

नहि आय अबलो श्याम प्रिय तिन, हृदय क्या सुविचारिया।
अब शर्वरी रहि एक अवधी, विप्र नाहि पधारिया।
जानूं न कारण कौन यादव, नाथ मोको त्यागिया।
यह विषम बाण विषाद भरिया, हृदय मम कस लागिया॥५३॥

मैं भुवन भूषण श्याम को अब, शरण शरणद मानिया।
निर्दोष देह मुकुन्द ने मम, दोष कोऊ जानिया।
इस हेत मम उद्वाह कारण, नलिन नयन न आयिया।
करुणा निधान मुकुन्द वा, कारुण्य भाव भुलायिया॥५४॥

हे देव दूषण धाम मैं मम, दोष अब न निहारिये।
जन शरण वत्सल नाम अपना, नाथ हृदय विचारिये।

गिरजा गणेश गिरीश गुरु विधि, विमुख मम दर्साव हैं।
दुर्भागिनी हित प्राण पति, इस समय जो नहिं आव हैं॥५५॥

हा हा विधाता करूँ क्या अब, हृदय कुछ नहीं आवता।
बिन मरण और उपाय नहिं, इस समय में दर्सावता।
अभी समय है प्रभु दर्स देवो, देर मत प्रिय कीजिये।
दुख शोक सागर डूबती का, हस्त द्रुत ग्रह लीजिये॥५६॥

नारद-वचन दोहा

या विधि बहुत विलाप कर, तजा नयन से नीर।
शोकातुर हो रुक्मिणी, महि पर गिरी अधीर॥५७॥

तात काल तब तास के, वामोरू भुज नैन।
लगे फरकने सगुन से, हृदय भया कुछ चैन॥५८॥

हर्षित मुख द्विज को निरख, उपजा मोद महान।
मानो मृतक शरीर में, उलट आय पुन प्रान॥५९॥

विप्र-वचन चौपाई

रुक्मिणी हृदय हर्ष तुम धारो। भया मनोरथ पूरण थारो॥
राम-कृष्ण आये युग भाई। साथ चमू चतुरंगिनि आई॥६०॥

केशव पद तव प्रीती जैसे। तुमको चाहित अच्युत तैसे॥
जीत चैद्य नृप मागध साथा। परिणयगे तुमको यदुनाथा॥६१॥

नारद-वचन दोहा

विप्र वचन को श्रवण कर, जान विप्र उपकार।
कर प्रणाम द्विज को दिये, वसन निष्क मणि हार॥६२॥

रुक्मिणी-वचन चौपाई

द्विजवर जो तुम कारज कीना। मोको प्राण दान सो दीना॥
अस हितकारी जनक न होई। इसका प्रत्युपकार न कोई॥६३॥
तुम मम तात बंधु गुरु भ्राता। जो हमरी तुम करी सहाता॥
सेवा करूँ कवन मैं थारी। तुमरे पाद प्रणाम हमारी॥६४॥
तुमरे योग्य वस्तु कुछ नाहीं। मैं विचार देखा भव माहीं॥
तुम प्रसन्न होवो द्विजराजा। निज स्वभाव कर करिये दाया॥६५॥

नारद-वचन दोहा

नृप विवाह उत्सव लिये, पुर का कर श्रृंगार।
ध्वज पताक तोरण लगे, सिंचन करे बजार॥६६॥
मणि मोती झालर लगे, कनक कपाट वितान।
श्रीनिवास के नगर का, को कवि करे बखान॥६७॥
भीष्मक ने यह जानिया, संकर्षण घनश्याम।
निरखन उत्सव व्याह का, आये हमरे धाम॥६८॥

राम-कृष्ण के मिलन हित, गमना कुण्डिन राज।
नानोपायन कर सहित, बाजे सचिव समाज॥६९॥

कर प्रणाम पुन भेंट धर, कर बहु विनय नृपाल।
ले आया निज नगर में, दीना सदन विशाल॥७०॥

राम कृष्ण के दर्स हित, चढ़ी अटारी दार।
दर्शन उत्कण्ठा हृदय, आये पुरुष अपार॥७१॥

संकर्षण गोपाल का, निरख मनोहर गात।
मोहित हो नर नारि सब, करत परस्पर बात॥७२॥

कुमारी-वचन चौपाई

देख सखी यह युगल कुमारा। दर्शन से मन हरत हमारा॥
नील पीत पट पांडुर श्यामा। वनमाला मणि हार ललामा॥७३॥

बाहुदण्ड शोभित कोदण्डा। जिम वासव कोदण्ड अखण्डा॥
कर पंकज शर पृष्ठ तुणीरा। सिंह स्कन्ध शूर रणधीरा॥७४॥

कटि पेटी सारसन कृपाणा। कौशेय मणिमय पद त्राणा॥
धर्म तनुज विधि सानुज रामा। इन्द्र उपेन्द्र शम्भु श्रीधामा॥७५॥

इनमें कोऊ यह युग भाई। मनुज तनुज नहिं देत दिखाई॥
सूर शशी ने धारे काये। रति मनसिज वा तनु धर आये॥७६॥

प्रौढ़ा-वचन चौपाई

सखी कहे तुमने सुर जोई। इनकी पटतर पाव न कोई॥
विष्णु चतुर्भुज विधि चतुरानन। चन्द्र कलंकित भिक्षुक वामन॥७७॥

पंच वदन शिव शूर जरावत। दशशत भग तनु इन्द्र लजावत॥
नर नारायण तापस वेषा। भोज पत्र तनु सहित कलेशा॥७८॥

नारि विरहि दाशरथी रामा। काय विना रति नायक कामा॥
इतर देव तिम दूषित सारे। पटतरता किम पाव विचारे॥७९॥

इनके सादृश कौन बखानूं। त्रिभुवन में अस को नहिं जानूं॥
सुषमा धाम निरौपम काये। रति पति शत लख इनें लजाये॥८०॥

अपने तुल्य आप यह होई। लघु लागत उपमा सब कोई॥
हमरे भाग भये अब आली। जो दर्शन दीना वनमाली॥८१॥

यह झांकी तुम दुर्लभ जानो। मरु महि में गंगा सम मानो॥
जो कृपालु होवे सुर नाहू। होय यहाँ इनका उद्वाहू॥८२॥

आवेंगे श्वशुरालय जबही। दर्शन होवेंगे तब तबही॥
मरकत सम श्यामल तनु जोई। वैदर्भी लायक यह होई॥८३॥

सो तनु गौर मनोहर वाणी। तिसके योग्य इतर नहिं प्राणी॥
शोभित रुक्म अंगूठी माही। मरकतमय नग दूसर नाही॥८४॥

आली भूपति ने क्या कीनी। केशव को तनुजा नहिं दीनी॥
अब बी समझे जो नर नाहू। सुता कृष्ण का करे विवाहू॥८५॥

तीरथ तप व्रत जो हम कीने। कनक वसन गो भोजन दीने॥
तिनका फल देवें श्री धामा। रुक्मिणि का पति होवे श्यामा॥८६॥

नारद-वचन दोहा

या विध तिनने वचन कह, पुष्प वृष्टि पुन कीन।
जय जय ध्वनि कर सर्व ने, परिणय आशिष दीन॥८७॥

करत दर्स जो जो मनुज, सो सो करत प्रणाम।
नयन सफल कर सकल के, प्रभु कीना विश्राम॥८८॥

अथ चेदिप दमघोश नृप, सुत विवाह के हेत।
पौंड्रक आदिक भूप बहु, बोले सैन्य समेत॥८९॥

कुंडिनपुर आगमन सुन, माधव का भय मान।
समर समग्री साथ ले, चली बरात महान॥९०॥

शाल्व विदूरथ जरासुत, दंतवक्त्र महि नाथ।
यह सब केशव के अरी, चले चेदिपति साथ॥९१॥

कुंडिनपुर पहुँचे सबी, बाजे विविध बजात।
दिया वास बैदर्भ ने, सत्कारी सब व्रात॥९२॥

अथ देवी पूजन लिये, सखी संग ले साथ।
चली चरण से रुक्मिणी, हृदय धार यदुनाथ॥९३॥

नग्न खड्ग कर खड़े तब, दोनों तट में वीर।
गज हय रथ पर बैठकर, लीने कर धनु तीर॥१४॥

नृत्य करत वारांगना, बाजे बजत अपार।
स्तवन करत बन्दी मनुज, पहुँचे देवी द्वार॥१५॥

कर पद धोकर रुक्मिणी, कुसुम सुगन्ध चढ़ाय।
नमस्कार उपहार धर, करा स्तवन हर्षाय॥१६॥

रुक्मिणी-वचन हरिगीत छन्द

शुभगुण कदम्बा जयतु अम्बा, जयतु निज जन-रंजनी।
दुर्गति विनाशिनि जयतु दुर्गा, जयतु भव-भय-भंजनी।
निज शरण आगत अमर नर, वर भोग मोक्ष प्रदायिनी।
तव आदि मध अवसान नाही, अजरजनि अनपायिनी॥१७॥

तू आदि कारण जगत की, ब्रह्मादि सुर नर तुम करे।
हे अम्ब तू विश्वम्भरी पुन, अन्त सबको तू हरे।
तव पाद पंकज सेव कर, संसार सागर बहु तरे।
सुरलोक गमने असुर सो, जो मात तुमरे कर मरे॥१८॥

अब करिय करुणा जगत जननी, शरण मैं तुमरी परी।
यदु वंश शिर अवतंस माधव, श्याम सुन्दर अघ-अरी।
मम पाणि पीडन सो करे प्रभु, दुष्ट नृप गण जय करे।
यह मम मनोरथ करब पूरण, चरण तव मैं शिर धरे॥१९॥

नारद-वचन दोहा

रुक्मिणि का सुन वचन तब, द्विज नारी सखि मात।
कृष्ण नाम छुड़वाय के, चेदिप नाम बतात॥१००॥
वो भाखत शिशुपाल पति, यह भाखत पशुपाल।
वो कहती दमघोष सुत, यह मम घोषप बाल॥१०१॥
बाल बुद्धि लख तास की, हँसी सर्व पुन वाम।
चली रुक्मिणी लौट के, चितवत उर घनश्याम॥१०२॥
केशव के दर्शन लिये, निरखा वदन उघार।
भये मोह वश वीर सब, तिसका लपन निहार॥१०३॥
हय गज रथ से गिर पड़े, गिरे वस्त्र धनु बान।
हरि माया मूर्छित करे, आये तब भगवान्॥१०४॥
तात काल निज रथ विषे, रुक्मिणि को बैठाय।
अग्रज सेना सहित तब, चले कृष्ण हर्षाय॥१०५॥
खुली मूरछा सकल की, मागध आदिक वीर।
हरी रुक्मिणि जान कर, बोले वचन अधीर॥१०६॥

जरासंध-वचन चौपाई

धिक् धिक् हम सबको अब भाई। धिक् धिक् हमरी रण कुशलाई॥
शस्त्र अस्त्र विद्या धिक्कारा। जो अभिभव भा समर हमारा॥१०७॥

जो हमरा यश गोपन लीना। तिनने हमको नकटा कीना॥
गृह में क्या मुख हम ले जाई। रिपु ने हमरे मुख मसि लाई॥१०८॥

ब्रात साथ हम किस हित आये। बिन विवाह दूले गृह जाये॥
अति आश्चर्य हृदय मम आवे। देखत सिंह शृगाल लिजावे॥१०९॥

अब हमको रण मरणा योगू। करहैंगे हासी सब लोगू॥
चलो रुक्मिणी फेर लिआवें। दूलह को दुलहिन दिलवावें॥११०॥

नारद-वचन दोहा

शस्त्र हस्त वाहन चढ़े, भूप ससैन्य अपार।
हरि के पाछे गये तब, बोलत गह गह मार॥१११॥

तिनको आया निरख कर, खड़े भये यदुवीर।
सन्मुख हो लड़ने लगे, चले दुतरफे तीर॥११२॥

संकषर्ण गद आदिने, छोड़े शिलमुख व्याल।
पृतना युत क्षितिपाल सब, कीने अति बेहाल॥११३॥

निज चतुरंगिणि सैन्य सब, समराजिर मरवाय।
चेदिप पक्षी नृपति सब, गमने प्राण बचाय॥११४॥

नष्ट तेज शिशुपाल नृप, गत उत्साह कुरूप।
शुष्क वदन भा तास को, समुझावत सब भूप॥११५॥

जरासंध-वचन चौपाई

नृप शिशुपाल धीर उर धरिये। नर मृगेन्द्र चिन्ता परिहरिये॥
इक विवाह की क्या है बाता। तव शत परिणय होंगे ताता॥११६॥
सदा न लाभ सदा नहिं हानी। जग विहार सब अस्थिर जानी॥
यथा दारुमय योषित जोई। कुहकाधीन नाचती सोई॥११७॥
तिस ईश्वर के वश जग जानो। तिसकर दीना सुख दुख मानो॥
मैं नव अष्ट वार रण हारा। एक वार जय भया हमारा॥११८॥
तदपि न शोक हर्ष मैं ठानूं। कालाधीन हार जय जानूं॥
यादव अल्प सैन्य बल वारे। पुन भीरू माधव रखवारे॥११९॥
शूर बली हम चमू अपारा। तदपि प्रधन हमने अब हारा॥
रिपु का विजय काल यह जानो। कुछ अरि को बलवान न मानो॥१२०॥
जब आवेगा हमरा काला। होवेंगे जब ईश दयाला॥
होवेगी तब जीत हमारी। धरो धीर यह हृदय विचारी॥१२१॥

नारद-वचन दोहा

मागध शिशुपालादि नृप, निज निज गये अगार।
स्वसा हरण से कुपित मन, रुक्मी वचन उचार॥१२२॥

रुक्मी-वचन चौपाई

जो बिन केशव मारे आवूँ। भगिनी को जो फेर न लावूँ।
तो कुण्डिन नहिं करूँ प्रवेशा। सत्य प्रतिज्ञा सुनो नरेशा॥१२३॥

नारद-वचन दोहा

कवच पहिर रथ बैठ के, खड्ग चर्म ले चाप।
देख कृष्ण को पंथ में, रुक्मी कीन प्रलाप॥१२४॥

रुक्मी-वचन चौपाई

तिष्ठ तिष्ठ हे यदुकुल अपसद। क्षण में दूर करूँ अब तव मद॥
मम भगिनी को हर कर चोर। अब तू जावेंगा किस ठोर॥१२५॥
मम शित शर कर अंग तुमारे। जब लग गिरे न भूमि मझारे॥
गोप मन्द तज स्वसा हमारी। जो जीवन की आशा थारी॥१२६॥

नारद-वचन दोहा

या विध कहकर कुमति ने, मारे आशुग तीन।
धनुष सहित तिसके विशिष, खण्ड-खण्ड प्रभु कीन॥१२७॥
रथी सारथी तुरगध्वज, इनको क्रम कर बान।
षट् युग अष्टक तीन तब, द्रुत मारे भगवान्॥१२८॥
पुन मारे तिस पांचशर, इतर धनुष ले हाथ।
विशिष खायकर चाप को, काटा पुन यदुनाथ॥१२९॥
शक्ति शूल तोमर परिघ, मुग्दर गदा कुठारि।
जो जो कर में लेत सो, सो सो कटत मुरारि॥१३०॥

उतर यान से कृष्ण पर, कीना खड्ग प्रहार।
तिल तिल काटा बाणकर, हरि ने सो तरवार॥१३१॥

पटक भूमि में तास को, उर बैठे खग केतु।
नन्दन नाम कृपाण कर, लीना मारण हेतु॥१३२॥

भ्राता का बध निरखकर, रुक्मिणि भयी विहाल।
भर्त्ता के पद में गिरी, बोली वचन दयाल॥१३३॥

श्री रुक्मिणी-वचन सवैया

हे जगदीश्वर अर्न्तयामी। देव देव सर्वातम स्वामी॥
मम भ्राता को प्रिय मत मारो। शरण जान करुणा उर धारो॥१३४॥

नारद-वचन दोहा

रोवत लख कर प्रिया को, बध से हट विश्वेश।
बाँध बिठाया तास को, काट शमश्रू केश॥१३५॥

रुक्मी की ध्वजिनी सकल, मार आय यदुवीर।
खोल तास को अनुज सन, बोले तब बलबीर॥१३६॥

श्री बलदेव-वचन चौपाई

कृष्ण अनुचित कर्म यह थारा। जोउ शमश्रू केश उतारा॥
ऐसा कर्म न हमरे योगू। करत कृत्य यह नापित लोगू॥१३७॥

बन्धुन की विरूपता जोई। बध समान होवत जग सोई॥
बन्धु करे जो बध का कर्मा। तदपि तास का हनन न धर्मा॥१३८॥
निज किल्विष कर मरिया सोई। मूए का क्या मारण होई॥
खल जन कर हैं जो अपराधू। तिसकी करत उपेक्षा साधू॥१३९॥
निरख सहोदर का अपमानो। रुक्मिणि मन में मत कुछ आनो॥
सुख दुख दाता इतर न कोई। अपना करा पाव सब कोई॥१४०॥
क्षत्र धर्म यह रचा विधाता। भ्राता को मारत रण भ्राता॥
यद्यपि प्राणी बध अति क्रूरा। पर यह हमरा कौन कसूरा॥१४१॥
पुन निज पर मति जोउ तुमारी। भ्रमकर तुमने सो निर्धारी॥
देहातमदर्शी जन जोऊ। पर सुख दुख निज मानत सोऊ॥१४२॥
आतम एक असंग विकारा। सुख दुख निज पर तनु से न्यारा॥
मूरख जानत कर्ता नाना। घट जल में नभ सूर समाना॥१४३॥
पंच भूत मय तनु को जानो। मिथ्या स्वप्न समान बखानो॥
शास्त्र शून्य जो जड जन जल्पत। सो चेतन में तनु के कल्पत॥१४४॥
निज में जानत तिसके धर्मा। पावत नहिं सो किंचित शर्मा॥
निज अज्ञानज शुक परिहरिये। ज्ञान विचार स्वस्थ उर करिये॥१४५॥

नारद-वचन दोहा

राम वचन से रुक्मिणी, ब्रह्म तत्त्व को चीन।
त्याग शोक को बोधकर, निज मन को थिर कीन॥१४६॥

रुक्मी हत बल तेज तब, गया न अपने धाम।
रहा वहाँ बनवाय के, नया भोजकट ग्राम॥१४७॥

रामकृष्ण निज सैन्ययुत, गये द्वारका धाम।
जय की भेरि बजाय के, सहित रुक्मिणी वाम॥१४८॥

केशव वेद विधान से, तिससे करा विवाह।
मारग शीरष मास में, बहु विध कर उत्साह॥१४९॥

पांडव गोपी गोप पुन, कुन्तभोज नरभूप।
कैकय सृंजय आदि बहु, शौरी बोले कूप॥१५०॥

करी अलंकृत पुरी तब, ध्वजा पताक लगाय।
धूखे धूप केशर अतर, नीर पंथ छिड़काय॥१५१॥

हय गज रथ प्यादे अमित, चढ़ी बरात अपार।
उत्सव देखन अमर सब, आये नर तनु धार॥१५२॥

हरिगीतका छन्द

गंधर्व चंचल चलत टपकर, चरण भूमि न लाव हैं।
ध्रुव लक्ष वेधत कुन्त कर, बहु कोउ खात टपाव हैं।
पुन शंकु छेदत विशिख कर, को खड्ग कर बहु खेल हैं।
कहुँ मल्ल लीला करत हैं, जन नाग से गज मेल हैं॥१५३॥

सब फिरत फूले हर्ष कर, नर वारनारि नचाव हैं।
सुन्दर सुहागिनि निष्क कंठी, युवति हरि गुण गाव हैं।
बंदी उचारत वंश को पुन, विप्र वेद उचार हैं।
श्री वर वधू पर देवकी तब, वारने कर डार हैं॥१५४॥

गुरु द्विज बांधव निकर को, तब कर अति सत्कार।
गज रथ हय भूषण वसन, शौरी दिये अपार॥१५५॥

गुण गावत गोपाल के, गये स्वदेश महीश।
शोभित वैदर्भी सहित, मन्दिर में जगदीश॥१५६॥

लक्ष्मी लक्ष्मी नाथ का, यह उद्वाह महान।
महा दरिद्री अल्प मति, कवि किम करे बखान॥१५७॥

पढ़त सुनत यह ताल जो, हृदय धार यदुनाथ।
होवे परिणय तास का, मुक्ति बधूटी साथ॥१५८॥

इति श्रीमत्परमहंसोदासीनशिरोवतंसस्वामिकार्ष्णिज्ञानदास-
शिष्येण स्वामिकार्ष्णिगोपालदासाह्वेन विनिर्मिते गोपाल-
विलासे उत्तरविश्रामे श्रीरुक्मिणीविवाहवर्णनं नाम
चतुर्दशस्तालः समाप्तः ॥१४॥

मास-पारायण इक्कीसवाँ विश्राम॥२१॥

ॐ

श्रीवृन्दावनविहारिणे नमः ।

अथ पंचदशस्तालः -१५

श्लोकः

भद्रां जाम्बवतीं च कौशलपतेः, कन्यां तथा लक्ष्मणां
कालिन्दीमनुविन्दभूपभगिनीं, श्रीसत्यभामां तथा।
हत्वा भूमिसुतं सुरागमनयद्, भौमालयस्था गृहे
यः कन्या उपयेम एकदिवसे, कृष्णाय तस्मै नमः॥१॥

निजपैतृष्वसेयेन असंगस्य स्वसा हृता।
सन्ततिर्दारसंसर्गः अहो माया विडम्बनम्॥२॥

नारद-वचन दोहा

सत्राजित यादव रहा, तप कीना बन जाय।
तिसे स्यमंतकमणि दिया, सविता ने हर्षाय॥३॥

गया द्वारका पुरी में, तिसको निज गल धार।
पुरवासी गोविन्द को, बोले तिसे निहार॥४॥

पुरवासी-वचन चौपाई

हे यदुनन्दन भव भय मोचन। तव दर्शन हित आत विरोचन॥
निज किरणोंकर पुरी जरावत। इसके तरफ न निरखा जावत॥५॥

खोजत मुनि सुर पंथ तुमारा। यदुकुल में सुनकर अवतारा॥
जान नाथ निज तुमको तरणी। आवत अब प्रभु तुमरी शरणी॥६॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

कुलनन्दन तुम मत भय मानो। इसको चंडाशू नहिं जानो॥
सत्राजित तपकर गृह आवत। तिसके गल में मणि चमकावत॥७॥

तिसने अर्क अराधन कीना। हो प्रसन्न रवि ने मणि दीना॥
इन सम मणिका तेज अपारा। देत अष्ट नित हाटक भारा॥८॥

मरी अरिष्ट भुजंगम आधी। प्रेत दुकाल अशुभ बहु व्याधी॥
इनसे तहाँ न आवत कोई। जहाँ स्यमंतक पूजन होई॥९॥

नारद-वचन दोहा

सत्राजित ने गृह विषे, मणि को स्थापित कीन।
नित प्रति पूजत तास को, इष्टदेव सम चीन॥१०॥

सत्राजित को एक दिन, बोले श्री भगवान्।
मणि लेने के कारणे, तांका कर सन्मान॥११॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

हे कुल दीपक परम उदारा। मणि रखना गृह धर्म न थारा॥
सुनो तात अस आगम गावे। उत्तम वस्तू जो कुछ पावे॥१२॥
सो सब पृथिवी पति को देवे। नित प्रति तिसको सुर सम सेवे॥
नृप को ईश्वर का तनु जाने। मानव मति तिसमें नहिं आने॥१३॥
प्रजा पालना हृदय विचारी। ईश्वर ने नरपति तनुधारी॥
देत विविध सुख सो सन्तुष्टा। डारत निरय भूप पुन रुष्टा॥१४॥
नृप गुरु से सब विध लघुताई। प्रजा शिष्य की आगम गाई॥
प्रजा भवन में वस्तू जोई। यदि नृप गृह में वस्तु न सोई॥१५॥
नाम मात्र सो राजा जानो। तिसकी प्रजा अधर्मी मानो॥
तांते करिये मणि नृप अर्पण। इससे मम ईश्वर का तर्पण॥१६॥
मणिहित मैं बहुविध दुख पाया। कठिन तपस्या कर वन लाया॥
कैसे भूपति को मणि देवूं। निर्धनता का दुख किम सेवूं॥१७॥
जो मणि चाहित नृप वन जावो। निज तप कर दिनकर से लावो॥
यह महीप का धर्म न होई। द्रविण प्रजा का हरणा जोई॥१८॥

नारद-वचन दोहा

याविध कहकर तास ने, नृप को मणी न दीन।
चुप कर रहे मुकुन्द तब, तांको लोभी चीन॥१९॥

अथ प्रसेन तिसका अनुज, मणि को गल में डार।
हय अरूढ़ हो विपिन में, गमना हेत शिकार॥२०॥

हय युत तांको मार कर, मृगपति मणि गह लीन।
तिसे मार पुन जाम्बवत, मणि कन्या को दीन॥२१॥

गया न भवन प्रसेन जब, सत्राजित दुख पाय।
इत उत में कहने लगा, हरि को अंक लगाय॥२२॥

सत्राजित-वचन चौपाई

भया भूप अब अति अन्याई। को रहगा इस पुर में भाई॥
देखो केशव की करतूती। पर की देख न सकत विभूती॥२३॥
इस मणि मांगा हम नहिं दीना। कृष्ण द्वेष तब मोसे कीना॥
मणि लेना इस हृदय विचारा। वन में मम भ्राता को मारा॥२४॥

नारद-वचन दोहा

लांछन धोवन गये हरि, विपिन संग बहु वीर।
हय प्रसेन मृगराज तब, निरखे मृतक शरीर॥२५॥

ऋक्ष गुफा में प्रभु गये, बाहिर मनुज बिठाय।
देख कृष्ण को जाम्बवत, आया लड़ने धाय॥२६॥

अष्टविंश दिन भया रण, जान ऋक्ष निज नाथ।
हस्त जोड़ कहने लगा, श्रीपति पद धर माथ॥२७॥

जाम्बवंत-वचन चौपाई

त्राहि त्राहि मैं दास तुमारा। क्षमा करो अपराध हमारा॥
बिन जाने मैं आगस कीन्हा। प्रभु को प्राकृत मानव चीना॥२८॥

तुम परमेश्वर अन्तर्यामी। स्थिर चर सुर नर सबके स्वामी॥
सब में सहबल ओज तुमारा। रावणादि खल तुमने मारा॥२९॥

तुम ही हो प्रभु रघुकुल केतू। सागर पर तुम बांधा सेतू॥
बिन राघव भव में अस नाही। जो मोको जीते मृध माही॥३०॥

परम अनुग्रह मोपर कीना। भगवन् जो निज दर्शन दीना॥
आज्ञा होय करूँ सो सेवा। तुम मम इष्ट नाथ प्रिय देवा॥३१॥

नारद-वचन दोहा

तिसके तनुमें हस्त निज, फेरा निज जन जानि।
व्यथा रहित तिसको करा, बोले सारँग पानि॥३२॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

तव मिलने की मन में आई। मुख्य हेतु यह भालू राई॥
खल ने मिथ्या दोष लगाया। पुन मणिहित तव बिल में आया॥३३॥

जाम्बवन्त-वचन चौपाई

मम तनु धन मन नाथ तुमारा। सब विध मैं शरणागत थारा॥
जाम्बवती मम तनुजा श्यामा। रूप शील सद्गुण की धामा॥३४॥

इसको निज दासी कर वरिये। मोपर परम अनुग्रह करिये॥
लेवो यह मणि इसके साथा। वंदू तव पद धर निज माथा॥३५॥

नारद-वचन दोहा

मणि महिला को साथ ले, बाहिर आये श्याम।
द्वादश दिन तक देख के, गये मनुज निज धाम॥३६॥

नहि निकसे बिल से हरी, सुनकर सब पुरलोक।
शौरी माता देवकी, करत विविध विध शोक॥३७॥

देवकी-वचन चौपाई

सत्राजित के बच्चे मरियो। हे विधि इसकी दुर्गति करियो॥
इसने मिथ्या अंक लगाया। रीछन से मम सुत मरवाया॥३८॥
जैसे जरत हमारी छाती। तिम तिसकी पजरे दिन राती॥
सुख से नहिं जीवो तुम पापी। कुल कलंक खल अनृत प्रलापी॥३९॥

नारद-वचन दोहा

गिरजा गणपति गोत्रपति, तिनने बहुत मनाय।
इतने में मणि युवति युत, माधव पुर में आय॥४०॥

मात पिता प्रिय बंधु ने, खुश हो कंठ लगाय।
सत्राजित को मणि दिया, हरि ने सभा बुलाय॥४१॥

लज्जित हो मुख अधः कर, मणि ले गया अगार।
निज कलंक के शांत हित, कर है विविध विचार॥४२॥

सत्राजित-वचन चौपाई

देखो मेरी मूरखताई। बलवानों से द्वेष बढ़ाई॥
किम हमरा यह आगस जावे। किस विधि हरि प्रसन्नता पावे॥४३॥
किस कृत कर हित होय हमारी। लोक न देवें हमको गारी॥
मम मति तुच्छ अदीरघ दर्शी। धन लोभी अति मूढ़ अमर्षी॥४४॥
सतभामा मम कन्या जोई। मणियुत हरि को देवूँ सोई॥
इससे जावेगा अपराधू। इतर उपाय न दीसत साधू॥४५॥

नारद-वचन दोहा

रतन सहित रमणी रतन, तिसने हरि को दीन।
तिन दोनों का कृष्ण ने, विधि से कर ग्रह कीन॥४६॥
इन्द्र प्रस्थ में एक दिन, गये कृष्ण भगवान्।
कुन्ती सुत ने बहुत दिन, राखे कर सन्मान॥४७॥
अर्जुन युत रथ बैठ के, कानन गये मुरार।
यमुना तीरे विचरते, मारे बहुत शिकार॥४८॥
श्यामा में तप कर रही, देखी अद्भुत दार।
हरि कर भेजा तास सों, बोला पांडु कुमार॥४९॥

अर्जुन-वचन चौपाई

मृग नयनी तू किसकी जाई। किस हित घोर विपिन में आई॥
विधु वदनी तू अति सुकुमारी। तपकर क्यों यह देह बिगारी॥५०॥

करभोरू कह अपना नामा। सुश्रोणी कह पुन निज धामा॥
जानूं पति की वांछा तोको। तदपि हाल कह अपना मोको॥५१॥

यमुना-वचन चौपाई

कालिन्दी यमुना मम नामा। जनक रचित मम जल में धामा॥
मैं हूँ सवितासुर की तनुजा। बिन हरि वरूँ न सुर नर दनुजा॥५२॥
विष्णु वरद को वर हित वरहूँ। इस हित उग्र तपस्या करहूँ॥
सो मुकुन्द प्रभु दीन दयाला। मम कर ग्रहण करें तत्काला॥५३॥

नारद-वचन दोहा

तैसे भाखा फालगुन, केशव के ढिग आय।
तिसको सादन ले गये, हरि निज रथ बैठाय॥५४॥
अथ अवन्ति पुर भूप की, कन्या नारि ललाम।
नाम मित्रविन्दा स्वयं, वर जित लाये श्याम॥५५॥

सासाहिक पारायण पाचवाँ विश्राम॥५॥

अथ कौशलपति, भूप धर्म का धाम।
सत्या तांकी कन्यका, नागनजिति बी नाम॥५६॥
रचा स्वयंवर सुता का, बोले नृपति समाज।
सेना अर्जुन सहित तब, गये कृष्ण यदुराज॥५७॥
भूपति ने सत्कार कर, वास सदन में दीन।
विनय प्रेम करजोर के, सेवा बहु बिध कीन॥५८॥

परिषद में चारों तरफ, कांचन मंच अनूप।
तिन पर बैठे हर्ष कर, देश देश के भूप॥५९॥
सुन्दर ऊँचे मंच पर, हरि अर्जुन बैठाय।
सचिव सुमति अवधेश का, बोला सकल सुनाय॥६०॥

मन्त्री-वचन चौपाई

सुनो अयोध्यापति की वानी। करो यत्न निज निज बल जानी॥
सप्त बैल यह दुर्मद भाई। मानव गन्ध न इनें सुहाई॥६१॥
तीक्षण श्रृंग महा बल धारी। अति दुर्धर्ष दुष्ट मनुजारी॥
इनको बलकर नाथै जोई। यश कन्या पावै भट सोई॥६२॥
बिन नाथे नहिं होत विवाहू। भले कुमर क्वारी रह जाहू॥
तुमरे प्राण परीक्षा कारण। नरपति करी प्रतिज्ञा दारुण॥६३॥

नारद-वचन दोहा

सचिव वचन सुन उठे नृप, कटि में कसे दुकूल।
पास जात जो जन तिसे, वृषभ धुनत सम तूल॥६४॥
को मारे को अधमरे, गये कोउ भय चीन।
रहा एक तट वृष नथन, किसी सपर्श न कीन॥६५॥
नृपति नग्नजित सकुचकर, खड़ा भया कर जोर।
बोला परिषद में वचन, देख कृष्ण की ओर॥६६॥

नग्नजित-वचन चौपाई

यदुनन्दन जगदीश नरायण। शरणागत के परम परायण॥
तुम सर्वातम सकल अधारा। निजजन हित तव नर अवतारा॥६७॥
प्रभु मैं घोर प्रतिज्ञा कीनी। लाभ हानि नहिं मन में चीनी॥
रही कुमर मम जोउ कुवारी। हासी होगी जगत मझारी॥६८॥
जोउ प्रतिज्ञा सत्य न होई। मूरख भाखेंगे सब कोई॥
वीर विधुर वसुधा जो जानत। तब हम ऐसा प्रण नहिं ठानत॥६९॥
यादव नाथ शरण मैं तेरा। पालन करो देव व्रत मेरा॥
वृषभन को अपने वश करिये। मम कन्या निज दासी वरिये॥७०॥

नारद-वचन दोहा

तात काल उठ कृष्ण ने, सप्त रूप निज धार।
सबके देखत वृषभ सब, बांधे तक इक वार॥७१॥
पुष्प वृष्टि नभ से भयी, करत सुजय जय नाद।
जय दुन्दुभि बजने लगी, अवध भयी अविषाद॥७२॥
सखी सहित सत्या गई, कर जय माला धार।
हरि के गल पहिरायकर, पुन गमनी आगार॥७३॥
ताका रूप निहार के, नूपुर का सुन नाद।
मोहित होकर दुष्ट नृप करन लगे बकवाद॥७४॥

दुष्टनृप-वचन चौपाई

अहो अवधपति अती अनीती। यह जानत नहि नृप कुल रीती॥
क्या नृपकुल महि में नहि कोई। देत सुता गोपन को जोई॥७५॥
वृषभ दमन से काज न सरहै। हम देखत को कन्या वरहै॥
धन वनिता बलवत के होई। हमको मृध में जीते जोई॥७६॥
सो धन यश युवती को पावे। नहि तो रिक्त भवन में जावो॥
जो हम क्षत्रिय कुल के जाये। तो बिन रण को कन्या पाये॥७७॥

नग्नजित-वचन चौपाई

अरे वृथा क्यों जल्पत भाई। निरखी तुमरी सूरमताई॥
बोलत वचन न तुम शरमावो। मुख मसि लाये गृह किन जावो॥७८॥
ऋषभ साथ तुमरी ऋषभाई। माधव ध्रुव में बांध बिठाई॥
जो होवे कुछ भाग तुमारो। अच्युत का मुख चन्द्र निहारो॥७९॥
मोह मत्सरा मद परिहरिये। हरिपद सेव सफल जनु करिये॥
इनके बल को तुम नहि जानत। जो संग्राम करन मन मानत॥८०॥
शाल्व विदूरथ मागध राजा। रुक्मी आदिक भूप समाजा॥
तिनसे प्रथम पूछकर आवो। तो संयुग की बात चलावो॥८१॥
उत्पति प्रलय करत प्रभु जोई। केशव को जानो तुम सोई॥
जिनका दीना प्राण तुमारा। तिनसे तुमने समर विचारा॥८२॥

अरे कृतघ्न मूढ़ अभिमानी। काल गाल जनि परिये जानी॥
अर्जुन के बल जलधि मझारी। क्यों तुम डूबन की उर धारी॥८३॥

यह नर नारायण का अनुजा। इस सम कौन वीर जग मनुजा॥
द्रुपद स्वयंवर अजर मझारे। कौरवादि इससे नृप हारे॥८४॥

अब बी इसके रद छन फरकत। पर माधव के मुख को निरखत॥
जो अच्युत ने आयुस दीया। तो तुम पावोगे निज कीया॥८५॥

नारद-वचन दोहा

नग्नजीत के वचन सुन, भया न तिनको बोध।
नाशकाल विपरीत मति, ते बोले कर क्रोध॥८६॥

दुष्ट नृप-वचन चौपाई

केशव के बल को हम जानत। वीरन से जो रण भय मानत॥
मागध यवन नृपति के आगे। मृगयू से मृग सम जो भागे॥८७॥

गांडीवी बी जग जस वीरा। जस इसके भ्राता रण धीरा॥
सो हम भली भांति नृप जाने। इनसे हम कुछ भय नहि माने॥८८॥

जिनने शत्रुन से भय पाई। छिपे फिरे भिक्षा कर खाई॥
भूपति द्रुपद दाज कुछ दीना। तिससे तनु पोषण इन कीना॥८९॥

अब सबका बल देखो भाई। तव अन्तःपुर में हम जाई॥
नागनजिति का गहकर हाथा। गृह ले जावेंगे निज साथा॥९०॥

नारद-वचन दोहा

या विध कहकर मूढ़ नृप, खड़े भये तत्काल।
गांडीवी को नयन से, आज्ञा करी गुपाल॥११॥

तातकाल गांडीव का, अर्जुन कर टंकार।
शारदूल सम गर्ज के, बोला तब ललकार॥१२॥

अर्जुन-वचन चौपाई

जिस क्षत्राणी का पय पीया। संयुग विद्या में श्रम कीया॥
सो कुदंड ले सन्मुख आवो। तिसे शपथ शत जो भग जावो॥१३॥
भिक्षा भोजन का बल जोई। अबी समर में निरखो सोई॥
जो तुम हमसे रण जय पावो। तो तुम बधू भवन ले जावो॥१४॥
लोट जानगे धाम मुरारी। मैं तुमसे नागनज़िति हारी॥
वा मम शरकर तनु तज जावो। नाक बधू सन व्याह करावो॥१५॥

नारद-वचन दोहा

या विध तिसके कहत तब, चले दुतरफे तीर।
अर्जुन के शर शल्य कर, को धर सकत सुधीर॥१६॥

को मारे को भग गये, कोई करत पुकार।
कोउ कहत मैं शरण तव, धनुष हस्त से डार॥१७॥

रहा न रण में एक नृप, तब भा जय जय कार।
बाजे बजे अनेक विध, उत्सव भया अपार॥१८॥

वेद विधी से नग्नजित, करिया कन्या दान।
नर नारी के नगर में, उपजा हर्ष महान॥९९॥

दासी तीन सहस्त्र पुन, दश सहस्त्र गो मान।
नव सहस्त्र गज तास से, दश गुण स्यंदन जान॥१००॥

रथ से दश गुण हय ततः, दश गुण दास प्रमान।
नग्नजीत ने सुता को, दीना दाज महान॥१०१॥

देकर बहु विध आशिषा, नृप वाणी हर्षाय।
जामाता तनुजा उभय, कर्णी रथ बैठाय॥१०२॥

विह्वल भये सनेह से, बन्धु मात पितु भ्रात।
नागनजिति गोविन्द को, वार वार उर लात॥१०३॥

बधू वाहिनी सहित प्रभु, गये स्वकीय अगार।
मिलकर बांधव वर्ग को, दीना हर्ष अपार॥१०४॥

अथ कैकय भूपाल की, तनया भद्रा नाम।
दीनी हरि को प्रीतिकर, रूप शील गुण धाम॥१०५॥

अथ मद्राधिप भूप मणि, बृहत्सेन तस नाम।
सुता तास की लक्ष्मणा, ललना लक्ष ललाम॥१०६॥

रचा स्वयंवर नृपति ने, सुन आये महिपाल।
अति ऊचे इक यूप में, बांधा मत्स्य विशाल॥१०७॥

उदक पात्र तांके अधः, जिसमें झषकी छाय।
बृहत्सेन के सचिव ने, सबको कहा सुनाय॥१०८॥

मन्त्री-वचन चौपाई

सुनिये भूपति का प्रण भाई। इस विध कुमर विवाही जाई॥
अति ऊचे के कारण ताता। बिन प्रतिबिम्ब न बिम्ब दिखाता॥१०९॥
झष छाया में दृष्टी लावो। ऊपर नभ में बाण चलावो॥
या विधि शफरी बेधे जोई। कन्या को उद्वाहे सोई॥११०॥

नारद-वचन दोहा

सुनकर वचन वजीर के, उठे सर्व भूपाल।
कोउ उठाय न सकत धनु, बैठ जात तत्काल॥१११॥
चिल्ला खैंच न सकत को, चाप हस्त में धार।
कोई खैंचत शिंजिनी, गिरत धरित्रि मझार॥११२॥
मागध चेदिप कर्ण पुन, भीम सुयोधन वीर।
गुण चढ़ाय छोड़ा विशिख, झष तक गया न तीर॥११३॥
पुन पारथ ने बाण को, छोड़ा लख पाठीन।
झष सपर्श कर शर गिरा, वेधा नहिं तिस मीन॥११४॥
निवृत भये जब भूप सब, हरि धनु शर कर लीन।
मार बाण तब व्योम में, महि में पटका मीन॥११५॥

सुर प्रसून वर्षा करी, जय जय शब्द उचार।
नभ महि में दुंदुभि बजी, हर्ष भये नर नार॥११६॥

हरिगीतिका छन्द

ललना ललामा लक्ष्मणा, बधु दक्ष जो सम दक्षिणा।
उद्वाह मंगल गात सखि गण, मध्य में शुभ लक्षणा।
पद पद्म नूपुर क्षौम पट, तनु रत्न मय उर हार हैं।
कर कंज कंकणकंठकुंतल, कुसुम कबरि मझार हैं॥११७॥

दशषट् शृंगार उदार तनु में, हंस कुंजर गामिनी।
राकेश शत सम वदन शोभा, तेज तनु जिम दामिनी।
तब रंग भूमि पधार कर नृप, मोह वश तिसने करे।
जयमाल मेली कृष्ण के गल, देख खल क्षितिपति जरे॥११८॥

गयी बधू सखि सहित गृह, हृदय हर्ष अति धार।
भया विवाह विधान से, दीना दाज अपार॥११९॥

मात पिता अति प्रेम कर, रथ में तिसें बिठाय।
विरह विकल भा बन्धु सब, तनुजा तजी न जाय॥१२०॥

शारंगी शारंग कर, चले स्वदार समेत।
पहुँचे द्वारावती में, रथ फरकत खगकेतु॥१२१॥

मास पारायण बाईसवाँ विश्राम॥२२॥

पाक्षिक पारायण ग्यारहवाँ विश्राम॥११॥

अथ विनोद हित द्वारका, मैं गमना इक बार।
करा दर्स गोविन्द का, भीष्मक सुता अगार॥१२२॥

पारजात का कुसुम इक, मैं हरि अर्पण कीन।
तिन ने शिर पर धार कर, पुनि रुक्मिणि को दीन॥१२३॥

सत्राजित की सुता के, पुन मैं गया अगार।
कोप करावन हेत तब, तिस से वचन उचार॥१२४॥

देवऋषि-वचन चौपाई

हे सतभामे तू अति भोरी। प्रीति करत हरि तुमसे थोरी॥
तू जानत मैं प्रभु की प्यारी। करहैं तुमसे कपट मुरारी॥१२५॥
जैसे प्रभु रुक्मिणी को मानत। तैसे तुमको सो नहि जानत॥
मैं सुर-पादप कुसुम लिआया। दामोदर नहि तुमें दिखाया॥१२६॥
सो वैदर्भी को तिन दीना। तिसको तिन निज प्यारी चीना॥
तिनके भवन बहुत वर नारी। सो किम जाने तुमको प्यारी॥१२७॥

नारद-वचन दोहा

मम गमने सो कोप गृह, गयी हृदय दुख पाय।
तिनके मन की जानकर, बोले हरि समुझाय॥१२८॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

सुन्दरि क्या दुख तव उर माही। जो तव मुख प्रसन्नता नाही॥
नारद ने भाखा कुछ तोको। निश्चय होवत प्यारी मोको॥१२९॥

विग्रह प्रिय तिसको तुम जानो। तिसके वचन सत्य नहिं मानो॥
कौतुक देखन की मन आई। मुनि ने तू झूठे बहकाई॥१३०॥
विधुमुखि भामिनि तू अतिभोरी। मुनि ने तुमसे कीनी खोरी॥
तदपि तुमारे सुख के हेत। लावूं सुमनस विटपि समेत॥१३१॥
एक कुसुम की कौन चलाई। पारजात तव भवन लगाई॥
हो प्रसन्न निज सदन पधारो। निश्चय जानो वचन हमारो॥१३२॥

नारद-वचन दोहा

परिषद में माधव गये, प्रमदा को समुझाय।
सोबी निज मन्दिर गयी, हृदय परम सुख पाय॥१३३॥
अथ माधव की सभा में, आया सुमनस् नाथ।
केशव ने आसन दिया, बोला पद धर माथ॥१३४॥

इन्द्र-वचन चौपाई

सुनिये नाथ कलेश हमारा। सुर गो द्विज हित तुम तनु धारा॥
विद्यमान प्रभु भये तुमारे। हरत दैत्य पति भोग हमारे॥१३५॥
देव प्रागज्योतिषपुर माही। वसत भौम सो मम वश नाहीं॥
तिसने मम मणिगिरि हरलीना। छत्र वरुण का तिसने छीना॥१३६॥
मम माता के कुण्डल लाया। हमको तिसने बहुत दुखाया॥
मुर असुरादि तास सहकारी। तिनसे सुर सेना सब हारी॥१३७॥
गिरिजल वह्नी आयुध वाता। पाँच कोट पुर के विख्याता॥
दुर्गन कर सो पुर अति दुर्गम। दुर्ग भेदने होत बहुत श्रम॥१३८॥

नभ नभ भू रस भूमि प्रमानो। इसके आलय कन्या जानो॥
भूपति सुर सिद्धन से लाया। भया न तिनसे अबी व्यवाया॥१३९॥
बीस सहस्त्र जमा जब होई। तब उद्वाह करेगा सोई॥
तिसके गृह सो सब दुख पावत। पुन भूमर को दुष्ट सतावत॥१४०॥
करो कृपा तिसके पुर जावो। सो सब कन्या निज गृह लावो॥
तिसे मार जन करो सुखारे। देव देव हम शरण तुमारे॥१४१॥

नारद-वचन दोहा

याविध कहकर गोत्रभित, गया त्रिविष्टप धाम।
खगपति पर आरूढ़ हो, गये भौम गृह श्याम॥१४२॥
पांचजन्य निज शंख को, पूरा तब यदुनाथ।
तोड़े कोट कुदंड शर, गदा चक्र असि साथ॥१४३॥
मुर भौमादिक मारकर, गये भौम के धाम।
निरख रूप गोविन्द का, मोहित होई वाम॥१४४॥
रथ हय गज पुन कन्यका, शिविका में बैठाय।
भेजे द्वारावती में, आप त्रिविष्टप जाय॥१४५॥
कुण्डल देकर शक्र को, पारजात ले साथ।
सतभामा के भवन में, गये कृष्ण यदुनाथ॥१४६॥
तिन कन्या से कृष्ण ने, कीना तब उद्वाह।
उतने तनु धर एक दिन, करके बहु उत्साह॥१४७॥

रुक्मिणि आदिक नारि सब, रूप शील गुण धाम।
हाव भाव निज गुणों से, किये न परवश श्याम॥१४८॥

तिनके पद रज दास जो, सो न गिनत कुछ वाम।
आतम रति सुख भव विरति, किम मोहे सो श्याम॥१४९॥

एक एक हरि नारिका, दश दश सुत गुणवान।
एक एक कन्या तथा, संतति भयी महान॥१५०॥

पुत्र पौत्र परपौत्र पुन, तिनके भये अपार।
पृथिवी कण सम तिनों का, को कर सकत शुमार॥१५१॥

एक समय द्वारावती, बांधव मिलने हेतु।
कृष्ण दर्स उत्साह कर, गमना कपिपति केतु॥१५२॥

नाम सुभद्रा बलस्वसा, अर्जुन पांडु कुमार।
भये काम वश परस्पर, आयु रूप निहार॥१५३॥

मान हृदय भय राम का, तिसको दुर्लभ जान।
बोला तब गोविन्द से, निज हितकारी मान॥१५४॥

अर्जुन-वचन चौपाई

अच्युत सुनिये व्यथा हमारी। राम स्वसा मैं आज निहारी॥
हमरा मन तिसने हर लीना। तिसका बी मन मैंने चीना॥१५५॥

मात पिता तव बिन हलधारी। दुर्योधन को देन विचारी॥
सो मम रिपु नहिं तुमको भावे। कैसे तव भगिनी को पावे॥१५६॥
अरि का परिणय जिमिनहि होई। करो उपाय तात अब सोई॥
मैं तिसको निज गृह ले जावूं। सीर पाणि से पर भय पावूं॥१५७॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

अर्जुन तू प्रिय सखा हमारा। तुमसे अधिक न हमको प्यारा॥
तनु धन धाम हमारा जोई। सो सब भक्तन के हित होई॥१५८॥
जो कुछ चाहित भक्त हमारे। सो हम करहैं बिना विचारे॥
जो तुमरे मन में अस आवो। तो तिसको निज गृह ले जावो॥१५९॥
हम समझा लेवेंगे भ्राता। बांधव यादव जननी ताता॥
आरज से मत भय कुछ आनो। मोको निज हितकारी जानो॥१६०॥

नारद-वचन दोहा

मेले में तक तास को, अर्जुन अवसर पाय।
ले भाग मातुल सुता, निज स्यंदन बैठाय॥१६१॥
निज पुर पहुँचा जीत क़र, शूरन को बलवान।
सुन संकर्षण देव ने, कीना कोप महान॥१६१॥

श्री बलदेव-वचन चौपाई

कौन वीर अस वसुधा माही। हमरा बलजो जानत नाही।
दुर्मति अर्जुन बिन नहि कोई। मम भगनी का हर्त्ता जोई॥१६२॥

अब तिसको निजबल दिखलावूँ। बन्धु सहित यमपुर पहुँचावूँ॥
तिसका बल अभिमान निकारूँ। बिना शस्त्र तांको रण मारूँ॥१६३॥

मम अपमान करे जन जोई। जीवित रहे भूमि में सोई॥
हम तो तिसको जानत भाई। अहो दुष्ट की अति ढीठाई॥१६५॥

नारद-वचन दोहा

या विधि कह कर राम तब, सेना को ले संग।
इन्द्रप्रस्थ पुर को चले, मानो प्रलय भुजंग॥१६६॥

हाथ जोड़ कर राम के, चरण गिरे गोपाल।
तांकी शांती करन हित, बोले वचन रसाल॥१६७॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

मोपर देव अनुग्रह करिये। कोपानल को प्रभु परिहरिये॥
क्रोध करो तुम जिस पर ताता। तांका त्रिभुवन में नहिं त्राता॥१६८॥

अल्पन से कुछ अनुचित होई। करत क्षमा तिन पर गुरु जोई॥
बंधुन साथ विरोध न योगू। हास्य करेंगे जग रिपु लोगू॥१६९॥

नहिं राखत गृह कन्या कोई। किसी पुरुष को देनी होई॥
निज रुचिकर गमनी तिस साथा। इसमें कौन दोष यदुनाथा॥१७०॥

मात पिता नृप बन्धु हमारे। भये प्रसन्न श्रवण कर सारे॥
अष्ट प्रकार विवाह मझारे। यह राक्षस उद्वाह उचारे॥१७१॥

प्रायः क्षत्रिय कुल जन जोई। यह उद्वाह करत जग सोई॥
अब तो उचित हमें यह काजा। तिनको देना चाहिये दाजा॥१७२॥

नारद-वचन दोहा

सुनकर वचन मुकुन्द के, शान्त भये बलराम।
वसन अश्व गज रथ रतन, भेजे तिनके धाम॥१७३॥

को कृपालु गोपाल सम, सब बिध जन हितकार।
जो न भजे पुन तास को, तिस सम कौन गमार॥१७४॥

जो कोई इस ताल को, करत प्रेम से गान।
कृष्ण तनय सम तास के, सुत होवें गुणवान॥१७५॥

देहं गेहं स्वसारं च, कीर्तिं कान्तिं श्रियं गतिम्।
कृष्णो ददाति दासाय, दयालुः को हि तादृशः॥१७६॥

इति श्रीमत्परमहंसोदासीनशिरोवतंसस्वामिकार्ष्णिज्ञानदास-शिष्येण स्वामिकार्ष्णिगोपालदासाह्वेन विनिर्मिते गोपाल-विलासे उत्तरविश्रामे सत्यभामादिविवाहभौमादिवधवर्णनं नाम पंचदशस्तालः समाप्तः॥१५॥

—***—

ॐ

श्रीवृन्दावनविहारिणे नमः।

अथ षोडशस्तालः -१६

श्लोकः

हत्वा यस्य सुतो हि शम्बररिपुं येनाहृतः सूतके
प्रद्युम्नः स्वरतिं च मातुलसुतां पौत्रश्च बाणात्मजाम्।
साम्बः कौरवराजपुत्रतनयां यस्योपयेमे सुतो
हास्यं यश्च चकार भीष्मसुतया कृष्णाय तस्मै नमः॥१॥

नारद-वचन दोहा

अथ रुक्मिणि का सुत भया, प्रथम प्रद्युम्न नाम।
रति पति का अवतार सो, सुन्दर जिम घनश्याम॥२॥

सूतक में तिस बाल को, शंबर असुर सुरारि।
निज माया से हरण कर, पटका सिन्धु मझारि॥३॥

ग्रसा मीन ने बाल को, तिसे पकड़ झषमार।
दीना शम्बर दैत्य को, सूपकार झष फार॥४॥

निकसा तांके उदर से, जीवत सो हरिबार।
असुर सुता मोहित भयी, तांका रूप निहार॥५॥

तब मैं शम्बर नगर में, मायावति के धाम।
गया तिसे समुझाइया, शिशु के जनि गुण नाम॥६॥
पाला तिसने तास को, अपना भर्त्ता मान।
बोला मायावती को, हरि सुत जननी जान॥७॥

प्रद्युम्न-वचन चौपाई

मैं तव सुत तू मात हमारी। उलटी मति किम भई तुमारी॥
तनय भाव तुमने तज दीना। मो में पती भाव किम कीना॥८॥

रति-वचन चौपाई

नाथ कहूँ सब कथा पुरानी। मोको नारद यथा बखानी॥
मनसिज तुम मैं रति तव नारी। तव मिलने हित मैं तनुधारी॥९॥
पशुपति ने तुमको रिपु चीना। तुमरा देह दाह तिस कीना॥
अब तुमने मानव तनु धारा। यदुनन्दन हरि तात तुमारा॥१०॥
वैदर्भी प्रिय तुमरी माता। पुरी द्वारिका में विख्याता॥
शंबर खल तुमको हर लाया। तिसने सागर मांहि बहाया॥११॥
तहाँ मीन ने तुमको ग्रासा। हरि प्रताप तव भया न नासा॥
मत्स्यमार ने सिन्धु मझारी। सो झष पकड़ा जाल पसारी॥१२॥
तिस शंबर के अर्पण कीना। सूपकार को तिसने दीना॥
मीन उदर को तिसने फारा। तिससे निकसा देह तुम्हारा॥१३॥

पालन हित तिस मोको दीना। मैं तुमको निज भर्त्ता चीना॥
मायावी शंबर रिपु थारो। निज मायाकर इसको मारो॥१४॥

शोक करत अति तुमरी माता। कुररी सम नित प्रति कुरलाता॥
सुत सनेह कर व्याकुल सोई। बिना वत्स धेनू जिमि होई॥१५॥

रिपु से मत कुछ भय उर धारो। पिता तुल्य तुम अति बलवारो॥
उत्पति प्रलय करत प्रभु सोई। तिससे तुमरी यह तनु होई॥१६॥

पिता पुत्र का नहि कुछ भेदा। सुत को पिता बखानत वेदा॥
केशव शिशुपन दानव मारे। तुम तो यौवन तनु मम प्यारे॥१७॥

देवासुर नर माया जोई। नाथ जानती मैं सब सोई॥
सो सब विद्या देवूं थारे। जिन कर प्रिय रण में रिपु मारे॥१८॥

नारद-वचन दोहा

पत्नी कर बोधित भया, खड्ग चर्म कर धार।
शम्बर को तब समर हित, ललकारत भा मार॥१९॥

मायावी मयकर रचित, जो जो माया डार।
माया पति का पुत्र सो, सो सो करत निवार॥२०॥

शम्बर के शर शूल असि, शस्त्र अस्त्र समुदाय।
निष्फल भये अनंग में, जिम बुध कर्म निकाय॥२१॥

भयी निवृत जब शाम्बरी, चन्द्रहास कर धार।
शिर काटा अरि का मदन, नभ में भा जयकार॥२२॥

पुष्प वृष्टि सुर ने करी, जय की भेरि बजाय।
पत्नी युत नभ पन्थ से, रुक्मिणि के गृह आय॥२३॥

चकित भयीं सब हरि बधू, ताका रूप निहार।
पति सम ताकी निरख छवि, रुक्मिणि करत विचार॥२४॥

श्रीरुक्मिणी-वचन चौपाई

यदुनंदन सम सुन्दर श्यामा। कौशेयांबर सुषमा धामा॥
भुज प्रलम्ब मुखचन्द्र विशाला। नीलवक्र कच गल मणिमाला॥२५॥

किस सौभागिनि ने यह जाया। धन्य सोउ जिस गोद खिलाया॥
यह को है इसके संग नारी। मानो कुसुमायुध की प्यारी॥२६॥

मम तनूज जीवत जग जोई। इससे सम स्वरूप वय होई॥
शारंगी का जोउ स्वरूपा। गति आकृति वर हास अनूपा॥२७॥

सो सब इसने किस बिध पाया। मत होवे यह हमरा जाया॥
इसमें मम रति होत घनेरी। वाम नयन भुज फरकत मेरी॥२८॥

नारद-वचन दोहा

मात पिता युत कृष्ण तब, आये रुक्मिणि धाम।
यद्यपि सब कुछ जानते, पर नहि बोले श्याम॥२९॥

मैंने करा बखान सब, तब हरि मन्दिर जाय।
शम्बर हरणा मरण तस, सुनकर सब हर्षाय॥३०॥

पुत्र बधू को रुक्मिणी, बार बार उर लात।
पुरवासी नर नारि सब, सुनकर सब हर्षात॥३१॥

रचा स्वयंवर रुक्मि ने, रुक्मवती के हेत।
रौक्मिणेय ने सो वरी, जित कर नृप रण खेत॥३२॥

तिस से तनय प्रद्युम्न का, जन्मा पिता समान।
द्रुषण अंश अनिरुद्ध सो, रूप धाम बलवान॥३३॥

निज पौत्री दौहित्र को, रुक्मी ने पुन दीन।
यद्यपि द्वेषी कृष्ण का, स्वसा स्नेह उर चीन॥३४॥

बाजे विविध बजाय के, राम सांब घनश्याम।
व्रात साथ यादव अमित, गये भोज कटग्राम॥३५॥

दिये दान बहु द्विजन को, विधि से परिणय कीन।
रुक्मी को कालिंग नृप, दुष्ट मंत्र तब दीन॥३६॥

कालिंग-वचन चौपाई

कृष्णादिक यह यादव सारे। हे वैदर्भ अमित्र तुमारे॥
पर यह समर वीर बलधारी। रणकर जय नहि होत तुमारी॥३७॥

एक यत्न हम तुमें बतावें। इस कर तू इनसे जय पावें॥
जूवा खेलन राम न जाने। पर उदार अपने को माने॥३८॥

तिसको तुम अब बोल लिआवो। पासों से इसको खेलावो॥
जीतेगा इनको इस रीती। फिर मानेंगे तुमसे भीती॥३९॥

नारद-वचन दोहा

काल बली कर प्रेरिया, रुक्मी राम बुलाय।
लगे खेलने द्यूत तब, बहु धन दाव लगाय॥४०॥

दश सहस्र पण राम ने, हारा पहली बार।
हसत भया कालिंग तब, ऊँचे दांत उघार॥४१॥

लक्ष निष्क तालांक ने, जीता दूसर बार।
बोला रुक्मी कितव तब, यह बी दाव हमार॥४२॥

जीता मन्मथपाल ने, पुन अर्बुद दीनार।
कहत भये धूरत सबी, भयी राम की हार॥४३॥

सीर पाणि ने क्रोध कर, करे नयन निज लाल।
सुर वर्तम वाणी भयी, जनक राज तिस काल॥४४॥

आकाशवाणी-वचन सवैया

धर्म वचन कर हलधर जीता। रुक्मी ने मिथ्या छल कीता॥
कालिंगादि भूमिपति जोई। झूँठी साक्ष देत सब कोई॥४५॥

नारद-वचन दोहा

कितव नृपों कर प्रेरिया, करा न तिसने ख्याल।
मुसली को बोला कुमति, रुक्मी ढिग जस काल॥४६॥

रुक्मी-वचन चौपाई

तुमने शिशुपन से गो चारी। कर्षक सुत तुम विपिन विहारी॥
पासे खेलन तुम क्या जानो। हल मूसल कृत तुमें सुहानो॥४७॥
नृपति पुत्र पुरवासी जोई। विद्यावान वीर जो होई॥
सो जानत शर अक्ष चलाने। तव सम नर इसको क्या जाने॥४८॥

नारद-वचन दोहा

कटू वचन सुन हास लख, कोपे रेवति नाथ।
शिर काटा वैदर्भ का, निशित परिघ के साथ॥४९॥

रद तोड़े कालिंग के, दश में पद में जाय।
दशन प्रकट कर जो हँसा, भूपति इतर पलाय॥५०॥

साले का मरणा निरख, कहा न कुछ भगवान।
वैदर्भी बलराम के, प्रीति भंग भय मान॥५१॥

सहित बधू अनिरुद्ध को, कर्णी रथ बैठाय।
गयी ब्रात द्वारावती, बाजे विविध बजाय॥५२॥

अथ बाणासुर बलितनय, शोणितपुर में वास।
शिव प्रसाद कर जास से, दिविषद मानत त्रास॥५३॥
भक्ति विवश हो शम्भु तब, भये बाणपुर पाल।
बलि सुत बोला एक दिन, हर पद धर निज भाल॥५४॥

बाणासुर-वचन चौपाई

देव करूँ तव चरण प्रणामा। तुम पूरत हो निज जन कामा॥
भुज सहस्त्र तुम दीनी जोई। भार रूप सो मोको होई॥५५॥
भुज खुजाल के मेटन कारण। गिरि तोड़े छेड़े दिग्वारण॥
भाग गये दिग्गज भय मानी। भुज की खुजली नाहि मिटानी॥५६॥
फिर देखा मैं त्रिभुवन माही। तुम बिन योधा दीसत नाही॥
सुर नर असुर निकट नहि आवत। मोको देख भाग कर जावत॥५७॥

श्री महादेव-वचन चौपाई

मूढ़ करत तू गुरु अपमाना। तुमको बल का बहु अभिमाना॥
तुमरे भवन शिखर ध्वज जोई। जिस दिन इसका भंजन होई॥५८॥
मम समान कोई बलधारी। आवेगा तव नगर मझारी॥
तुमरा दर्प दलेगा सोई। तिसके साथ तोर रण होई॥५९॥

नारद-वचन दोहा

सुनकर वचन गिरीश के, दुष्ट हृदय हर्षाय।
ध्वज को निज निरखा करे, कब मम वैरी आय॥६०॥

मास पारायण तेइसवाँ विश्राम॥२३॥

ऊषा कन्या तास की, चन्द्रमुखी सुकुमारि।
सोई सो अनिरुद्ध युत, निशि में स्वप्न मझारि॥६१॥

जागी तब विह्वल भयी, पड़ा न दृष्टि कुमार।
विरह दुखित हो तास ने, कीना शोक अपार॥६२॥

ऊषा-वचन चौपाई

कहाँ गये हे सुन्दर प्यारे। प्राणनाथ प्रिय कान्त हमारे॥
अधर सुधा इक बार पिवाई। पुन अब क्यों निज तनू छिपाई॥६३॥

नारद-वचन दोहा

विरह वचन सुन तास के, तनुकी दशा निहार।
चित्रलेख तांकी सखी, बोली वचन विचार॥६४॥

चित्रलेखा-वचन चौपाई

किसको खोजत तू मृगनयनी। तोर मनोरथ क्या मम भयनी॥
भया न अब लो तव उद्वाहू। किसको तू भाखत निज नाहू॥६५॥

उषा-वचन चौपाई

निरखा मैं नर स्वप्न मझारी। श्याम वर्ण पीताम्बर धारी॥
भुज प्रलम्ब मन मोहन गाता। शशधर वदन नयन जलजाता॥६६॥

खोजूं मैं सो अपना प्यारा। हरा जासने चित्त हमारा॥
दुख अर्णव में मोको त्यागी। कहाँ गया वो नर बड़ भागी॥६७॥

चित्रलेखा-वचन दोहा

दूर करूँगी आधि तुमारी। जो वो मनुज त्रिलोक मझारी॥
लावूंगी मैं तिस को जाई। जिससे तुमने प्रीति लगाई॥६८॥

नारद-वचन दोहा

याविध तिसने भाख के, बहु विध चित्र बनाय।
देव दनुज चारण मनुज, सबके चित्र दिखाय॥६९॥

कृष्ण काम का चित्र लख, लज्जा तिसने कीन।
निरख चित्र अनिरुद्ध का, नीचे मुख कर लीन॥७०॥

बोली ऊषा सोउ यह, चित्र लेख निश आय।
योग शक्ति कर सो उड़ी, पुरी द्वारका जाय॥७१॥

सुप्त भये अनिरुद्ध को, ऊषा के ढिग लाय।
देख बाण की कन्यका, हृदय परम सुख पाय॥७२॥

सब से तिसे छिपाय के, राखा अपने पास।
हँसना निरखन बोलना, करत सुभोग विलास॥७३॥

एक दिवस में देख के, राखे नृप ढिग जाय।
कन्या के व्यभिचार के, तिससे हाल सुनाय॥७४॥

द्वारपाल-वचन चौपाई

नृप तव तनुजा ऊषा जोई। तिसके मन्दिर मानव कोई॥
कन्या ने कुल दूषित कीना। तिसका व्यभीचार हम चीना॥७५॥
निशदिन हम करहैं रखवारी। खड़े रहत हम द्वार मझारी॥
द्वारे से तो जान न पाया। गगन पंथ कोई नर आया॥७६॥

नारद-वचन दोहा

दोष श्रवण कर सुता का, गमना तिसके द्वार।
पासे खेलत तास से, देखा काम कुमार॥७७॥
हुकुम दिया नृप सैन्य को, तिसके पकड़न हेतु।
परिघ पाणि ले उठ खड़ा, यदुनन्दन झषकेतु॥७८॥
सारमेय को सूर सम, मारे वीर अपार।
शेष सैन्य घायल भयी, भागी तज हथियार॥७९॥
कुपित भया तब बाण नृप, पृतना मरी निहार।
नाग पाश से असुर ने, बाँधा मदन कुमार॥८०॥
बिन निरखे अनिरुद्ध के, द्वारावती मझार।
शोक करत भये बन्धु सब, गये महीने चार॥८१॥

तब हमने जाकर कहा, प्राद्युम्नी का हाल।
सुनकर यादव उठ चले, शोणितपुर तत्काल॥८२॥

द्वादश अक्षौहिणि चमू, सहित राम घनश्याम।
घेर लिया शोणित नगर, तोड़े भवन अराम॥८३॥

बाणासुर सेना सहित, गया समर के हेत।
भक्त सहायी भूतपति, गमने भूत समेत॥८४॥

भया घोर संग्राम तब, को कवि करे बखान।
चली रुधिर की सरित सुर, निरखत बैठ विमान॥८५॥

गुह गिरीश गणनाथ पुन, भूत प्रेत गण ग्राम।
बाणासुर की वाहिनी, हार गये संग्राम॥८६॥

क्रुद्धित हो तब बलि तनय, हरि के सन्मुख जाय।
पंच शतक ले चाप कर, उतने विशिख चलाय॥८७॥

अच्युत ने निज चक्र से, चाप नराच समेत।
द्रुम शाखा सम बाण की, काटीं भुज रण खेत॥८८॥

रही शेष जब चतुर्भुज, भक्त पक्ष उर धार।
तब शंकर कर जोर कर, हरि का स्तवन उचार॥८९॥

शिव-वचन हरिगीत छन्द

जय देवदेव अखण्ड पूरण, नाथ अग जग आतमा।
तव आदि मध अवसान नहि, जगदीश तुम परमातमा।
सनकादि विधि मम आदि निर्जर, अन्त तव नहि पाव हैं।
आनन्द चिद् घन सत्य तोको, निगम संतत गाव हैं॥१०॥

तुम एक अद्वय पुरुष तुर्या, आद्य ज्योती रूप हो।
अविकार विमल अनीह अक्रिय, अगुण रूप अनूप हो।
निज शक्ति कर गुण कर्म आदिक, रूप तव परकास हैं।
जिम फटक मणि में असित लोहित, रंग बहु विध भास हैं॥११॥

प्रभु जनक जग के जगत मय, पुन जगत् को प्रतिपाल हो।
पुन समय पाकर विश्व को, निज प्रकृति में तुम डाल हो।
सो प्रकृति तुम में लीन होवत, आप स्वयं प्रकाश हो।
निज इच्छया कर काल पाकर, रूप बहु विध भास हो॥१२॥

प्रभु तोर माया मोह वश, जो तनुज दार अगार में।
संसक्त हो सो डूब है, संसार सागर धार में।
इस मनुज तनु को तव दया से, यत्न बिन जन पाव हैं।
तव पाद प्रीति न करत आतम, डिंबि सोउ कहाव हैं॥१३॥

हम सर्व विध प्रभु शरण हैं तव, पाद पद्म नमामि है।
हरि जोरकर हम आप से, अभिशस्ति एक वदामि है।
निर्भय दिया हम बाण को, मम दयित सेवक जानिये।
करुणा करो तुम दास पर, बलि तुल्य इसको मानिये॥१४॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

प्रिय आतम तुम गिरिश हमारे। करूँ सोउ तुम जोउ उचारे॥
करो अनुग्रह तुम शिव जिसपर। हमरी बी करुणा अति तिसपर॥९५॥
हम प्रलाद को वचन उचारा। मारेंगे नहिं वंश तुमारा॥
तिसकी कुल उपजा यह जोई। तांते मम कर बध्य न होई॥९६॥
इसके दर्प दलन के हेता। काटी बाहू सैन्य समेता॥
शेष रही इसकी भुज चारी। इनसे सेवा करे तुमारी॥९७॥

नारद-वचन दोहा

हरि पद करा प्रणाम बलि, सुत ने उर हर्षाय।
सुता सहित अनिरुद्ध को, लाया यान बिठाय॥९८॥
सौंपे शारँग पाणि को, दीना बहु विध दाज।
बधू पौत्र सेना सहित, गये भवन यदु राज॥९९॥
अथ दुर्योधन की सुता, नाम लक्ष्मणा एक।
रचा स्वयंवर तास का, गमने भूप अनेक॥१००॥
जांबवती का सांब सुत, इकला गजपुर जाय।
तिसको हर कर ले चला, निज रथ में बैठाय॥१०१॥
कुपित भये कौरव सकल, निज अपमान निहार।
बोला दुर्योधन कुमति, उर अभिमान अपार॥१०२॥

दुर्योधन-वचन चौपाई

दुर्विनीत यह बालक भाई। कीनी इसने अति ढीठाई॥
शिशु ने नहि जाने हम कोई। हरी कन्यका बलकर जोई॥१०३॥
चलो बाँधकर उसको लावो। माधव से मत कुछ भय पावो॥
सुत को बांधा सुनकर सोई। आवेंगे सेना युत जोई॥१०४॥
क्या कर लेंगे कृष्ण हमारा। हार जायँगे सह परिवारा॥
हमरे दिये राज्य को जोऊ। भोगत करत अवज्ञा सोऊ॥१०५॥

नारद-वचन दोहा

कर्ण सुयोधन भूरिशल, भीषम पुन मख केतु।
गमने रथ पर बैठ के, शिशु सन लड़ने हेतु॥१०६॥

लखकर तिनको सांब तब, धनुष बाण कर धार।
खड़ा करा रथ समर हित, छोड़े विशिख अपार॥१०७॥

रथी सारथी अश्व सब, तिसने घायल कीन।
करी शलाघा सांब की, तिनने चीन प्रवीन॥१०८॥

हरि सुत के हय धनुष रथ, तोड़ सारथी मार।
पकड़ बाँधकर सांब को, ले गमने आगार॥१०९॥

यादव सुन मम वदन से, रण हित भये तयार।
बन्धु विरोध अयोग्य लख, बल ने करे निवार॥११०॥

विप्र वृद्ध उद्धव सहित, गये राम गज ग्राम।
पुर से बाहिर बाग में, करा राम विश्राम॥१११॥

भेजा उद्धव दूत तब, कुरुकुल राज निवास।
सुन तिससे कौरव सकल, गये हली के पास॥११२॥

दुर्योधन मिल प्रेम से, दिये विविध उपहार।
पूछ कुशल तब परस्पर, बोले राम विचार॥११३॥

श्री बलराम-वचन चौपाई

उग्रसेन नृप भाखा जोई। सुनिये मन लगाय कर सोई॥
अति अधर्म तुमने यह कीता। षट् ने मिल इकला शिशु जीता॥११४॥

पुन जो बालक बाँधा तुमने। सोबी क्षमा करी अब हमने॥
बंधुन से विग्रह है जोउ। प्रिय नहिं लागत हमको सोऊ॥११५॥

बधू सहित बालक अब दीजो। जो तुम चाहित निज प्रिय कीजो॥
नहि तो वृष्णिन के शर मारे। पते न लागनगे जग थारे॥११६॥

नारद-वचन दोहा

संकर्षण के वचन सो, कुल बल के अनुरूप।
सुनकर बोला दुष्ट मति, कुपित सुयोधन भूप॥११७॥

दुर्योधन-वचन चौपाई

अहो चित्र देखो यह भाई। काल-गती कुछ कही न जाई॥
मुकुट जुष्टशिर में पदत्राना। चढ़ हैं यह अन्याय महाना॥११८॥

बन्धु भाव हमने उर जाना। कीने यादव आप समाना॥
हमरे दिये राज्य को पाई। हमरी सो पुन करत बुराई॥११९॥

जैसे अहि को दुग्ध पिवानो। तिम वृष्णिन से हित तुम जानो॥
अति निर्लज्ज यदूकुल होई। आज्ञा करहै हम पर जोई॥१२०॥

नारद-वचन दोहा

दुर्जन दुर्योधन करण, अति दुर्वचन उचार।
श्री बल बंधु मदांध दृक्, गये स्वकीय अगार॥१२१॥

सुनकर वचन अवाच्य पुन, शठता तिनकी जान।
बोले हँसकर कोप युत, संकर्षण भगवान्॥१२२॥

श्री बलदेव-वचन चौपाई

मद उन्मत्त दुष्टमति भ्रान्ती। कौरव चाहित नहि अब शान्ती॥
शठ खर दमन दंड कर होई। शिक्षा तिनको लगत न कोई॥१२३॥

क्रुद्धित माधव यादव सारे। जिम किमकर हम सोउ निवारे॥
दुष्टन का हित कर हम आये। पर मूढ़न को कलह सुहाये॥१२४॥

इन नहि जाना मम उपकारा। उलटा बहु दुर्वचन उचारा॥
लक्ष्मी जिनके युग पद सेवत। लोकपाल सब बलि वर देवत॥१२५॥
सभा सुधर्मा जिनके द्वारे। पारजात तरु जास अगारे॥
शक्रादिक जस आज्ञा कारी। सो नहिं भूपति का अधिकारी॥१२६॥
यादव कुल पदत्राण समाना। अपने को तिन शिर सम जाना॥
तिनका दीना राज्य समाजा। भोगत उग्रसेन यदुराजा॥१२७॥
अहो शठन की अति कटु वाणी। कौन समर्थ सहारे प्राणी॥
करूँ अकौर व वसुधा सारी। दुर्जन पर नहिं दया हमारी॥१२८॥

नारद-वचन दोहा

लांगलाग्र कर हली जब, हस्तिन नगर उखार।
गंगा में पटकन लगे, तब भा हा हा कार॥१२९॥
सहित लक्ष्मण साम्ब को, कौरव लेकर साथ।
हलधर की शरणी गये, वन्दे पदधर माथ॥१३०॥

भीष्म-वचन हरिगीत छन्द

हे राम वसुधाधार भगवन्, अतुल बलधर यदुपते।
हम शरण तुमरी शरण वत्सल, घार्ण्यसिन्धो सद्गते।
निज दास रक्षक रक्ष कौरव, वंश को अब काल से।
नहि इतर त्राता धरिणि में, तव कोप विषधर व्याल से॥१३१॥

दुर्बुद्धि श्रीमद् मूढ़ कौरव, तव प्रताप न जान हैं।
जगदीश जगदाधार को हम, मनुज करके मान हैं।
तव श्वास के लव ग्रास होवत, प्रलय में स्थिर चर सबी।
तुमरे सहस्त्र विशाल सिर में, भूमि छत्रक सम छबी॥१३२॥

जगदादि अन्त अनन्त हो तुम, जगतमय जग से परे।
निश्शेष भव के शेष कारण, निगम तुमरी स्तुति करे।
तव कोप शिक्षा हेत जनके, द्वेष मत्सर नहि करो।
तुम शुद्ध सत्व विकार वर्जित, नित्य आतम मति धरो॥१३३॥

नारद-वचन दोहा

देख प्रभाव फणीश का, भीषम ने स्तव कीन।
हो प्रसन्न तालांक ने, निर्भयता तब दीन॥१३४॥

द्वादश शत गज अयुत हय, षट् सहस्त्र रथ मान।
दाज सुयोधन ने दिया, दश शत दासी जान॥१३५॥

बधू पुत्र को साथ ले, गये राम निज धाम।
बन्धुन को मिल सुख दिया, करा सदन विश्राम॥१३६॥

कृतवर्मा के तनय को, रुक्मिणि तनया दीन।
सब कन्या के तथा विध, परिणय केशव कीन॥१३७॥

अथ मणिमय मन्दिर विषे, कांचन पलंग नवीन।
दुग्ध फेन निभ तल्प में, सुख से हरि आसीन॥१३८॥
रत्न दण्ड मय व्यजनकर, रुक्मिणि करत बयार।
धन्य भाग्य निज जान है, प्रभु का वदन निहार॥१३९॥
तिससे हांसी करन हित, केशव हृदय विचार।
प्रेम परीक्षा हेत पुन, बोले वचन मुरारि॥१४०॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

राजपुत्रि तुमने क्या कीना। शिशुपालादिक को तज दीना॥
जो सुन्दर भूपति बलवाना। लोकपाल सम सम्पद नाना॥१४१॥
पिता भ्रात ने तिसको दीनी। तुमने त्यागा क्या मन चीनी॥
किसि विध समता नहिं मम थारी। हमें वरा तुम बिना विचारी॥१४२॥
रिपु भूपन से डर उर पाये। सागर की शरणी हम आये॥
बलवानों से वैर बढ़ाया। नृप आसन हमने नहिं पाया॥१४३॥
युवति प्रीति लौकिक आचारा। सो बी नहिं कुछ प्रकट हमारा॥
हम सभ पुरुषन के गृह नारी। सुन्दरि प्राया होत दुखारी॥१४४॥
हम निष्किंचन धन न हमारे। निष्किंचन जन मोको प्यारे॥
इससे जग धनाढ्य जन जोई। हमसे प्रेम करत नहि कोई॥१४५॥
धन जनि कुल वैभव सम जिससे। परिणय मैत्री करिये तिससे॥
न्यून अधिक से करत न कोई। तव मम सो समता नहिं होई॥१४६॥

हम निर्गुण नहिं कीरति पाई। भिक्षुक जन मम करत बड़ाई॥
अब बी जो तुम बनो सयानी। निज अनुरूप वरो पति जानी॥१४७॥

जिससे उभय लोक सुख पावो। मम गृह के सब खेद मिटावो॥
शिशपालादिक भूपति जोई। हमसे द्वेष करत थे सोई॥१४८॥

तिनके मान भंग के कारण। तुमको हरा समर कर दारुण॥
सुत वित वनिता मम प्रिय नाहीं। सदा उदास रहत गृह माहीं॥१४९॥

आतम लाभ परम सुख दाता। निश दिन हमको सोउ सुहाता॥
विषय विलास अमित दुखदाई। इससे हमें न नारि सुहाई॥१५०॥

नारद-वचन दोहा

या विध कह कर चुप भये, दर्प दलन भगवान।
चिंतातुर रोवन लगी, रुक्मिणि साँची जान॥१५१॥

पद नखसे खोदत मही, नीचे दृष्टि लगाय।
वलय व्यजन कर से गिरे, गिरी मूरछा खाय॥१५२॥

द्रुत उठकर पर्यंक से, केशव करुणा धाम।
कंठ लगाकर तास को, बोले वचन ललाम॥१५३॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

मत भय मानो भामिनि प्यारी। जानत हैं हम प्रीति तुमारी॥
प्रणय कोप युत वदन तुमारा। देखन चाहित चित्त हमारा॥१५४॥

इस कर हमने हांसी कीनी। वैदर्भी तुम साची चीनी॥
मम तव विरह होत नहि कैसे। जन जन की छाया का जैसे॥१५५॥

नारद-वचन दोहा

धीर धरी उर रुक्मिणी, हरि की हांसी जान।
पती त्याग भय त्याग के, बोली वचन प्रमान॥१५६॥

श्री रुक्मिणी-वचन चौपाई

सत्य वचन तुम नाथ उचारे। भगवन् नहि मैं तुल्य तुमारे॥
कहाँ जगत् पति आतमरामा। कहाँ त्रिगुणमय मैं जड़ वामा॥१५७॥

सेवत पंडित ज्ञानी तोको। अज्ञ सकामी पूजत मोको॥
विषय नृपति अविषय रुक् थारा। हृदय सिंधु में वास तुमारा॥१५८॥

बलवत् कुत्सित इन्द्रिय जोई। तत्वज्ञन के बैरी सोई॥
तव पद पंकज के जो दासा। दुखद राज्य की करत न आसा॥१५९॥

करत न नारि प्रीति दुखदाई। निज अचार पुन नहि दिखलाई॥
विषयासक्त मूढ़ जो नारी। सो विरक्तगृह होत दुखारी॥१६०॥

ब्रह्मादिक तव सेवा कारी। त्रिभुवन लक्ष्मी नारि तुमारी॥
सुर पति संपद तुमरी दाया। तुम निष्किंचन किम युदराया॥१६१॥

पाय राज्य जो तृण सम त्यागत। त्रिभुवन लक्ष्मी विष सम लागत॥
अस निष्किंचन तोको प्यारे। कामी लोभी प्रिय नहि थारे॥१६२॥

जो धनाढ्य नहि तुमको ध्यावत। काल गाल में सो दुख पावत॥
यद्यपि तुमरे सम नहि कोई। तदपि तोर शरणागत जोई॥१६३॥

भृंगिकीट सम सो बड़भागी। तव समता पावत अनुरागी॥
गुण ही सर्व दोष के करणा। पुन पुन देत मृत्यु जनि मरणा॥१६४॥

सो मायिक गुण तुममें नाहीं। दिव्य अलौकिक गुण तव माहीं॥
कीरति तुमरी त्रिभुवन छाई। निगम पुराण शास्त्र ने गाई॥१६५॥

शत्रु मित्र जिस मुनि ने त्यागा। ब्रह्म विचार विषे मन लागा॥
अस विद्वान न भिक्षुक होई। ज्ञान रत्न का दाता सोई॥१६६॥

विधि इन्द्रादिक देव निकाया। शिशुपालादिक नृप समुदाया॥
तुमरे काल चक्र के मारे। नष्ट भोग सुख आयू सारे॥१६७॥

परम प्रेम अस्पद शिव रूपा। अजर अमर तुम सुर नर भूपा॥
अस विचारकर तुमको वरिया। शिशुपालादिक को परिहरिया॥१६८॥

अंग भरत पृथु नाहुष राजा। गय आदिक तज राज्य समाजा॥
तव पद पंकज शरणी आये। क्या उनने कुछ लव दुख पाये॥१६९॥

मुनि मुख से सुन तव गुणराशी। करत मनुज को जो अविनाशी॥
अस को त्रिय जो तुमको त्यागे। दुख मय पति के पाछे लागे॥१७०॥

तिसके पति होवन नृप सोई। नलिन नयन तुम भाखे जोई॥
जिसने सुनी न कथा तुमारी। भोग मोक्ष के देने वारी॥१७१॥

यद्यपि तुम नित आतम सत्ता। मम आदिक से परम विरक्ता॥
होवो मम तव पद अनुरागा। तव दर्शन से मम बड़ भागा॥१७२॥

कृपा दृष्टि कर निरखो जोई। परम अनुग्रह मानूं सोई॥
भये विवाह पुनर जो नारी। अन्य पुरुष से यदि रति वारी॥१७३॥

अस असती को बुध गृह माहीं। क्षण भर रहने देवे नाहीं॥
राखत ललना लोभी जोई। उभय लोक दुख पावत सोई॥१७४॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

सुन्दरि ऐसे वचन तुमारे। सुनने को हम चित्त विचारे॥
ताते भाखी कुछ कटु वानी। अंतर हृदय प्रेम रस सानी॥१७५॥

मम वचनों का उत्तर दीना। जो तुमने सो साँचा चीना॥
पतिव्रत धर्म प्रिये तुम पाया। हमने तुमको बहु बहकाया॥१७६॥

पर तुमने अणु मति नहि टारी। मोमें दृढ़ तर भक्ति तुमारी॥
जप तप नेम करत ज़ो वामा। जाकी मम पद प्रीति सकामा॥१७७॥

ऐन्द्रिय सुख चाहित पुन जोई। मम माया कर मोहित सोई॥
सो तो सूकर तनु बी पाता। हम अपवर्ग मोद के दाता॥१७८॥

जैसी मोमें प्रीति तुमारी। ऐसी और न कर है नारी॥
भवन आय पृथिवी पति जोऊ। तृण सम त्यागे तुमने सोऊ॥१७९॥

विप्र भेजकर हमें बुलाया। भयी देर मृति सम दुख पाया॥
भ्राता का कुरूपता करणा। पुन ताका तुम निरखा मरणा॥१८०॥

सो सब दुख तुमने उर पीया। शशि मुखि इस कर मैं वश कीया॥
रहो प्रेम तुमरा तुम माहीं। तुम सम हमसे होवत नाहीं॥१८१॥

नारद-वचन दोहा

माया मानुष विष्णु के, इत्यादिक व्यवहार।
कृष्ण विमुख जन मूढ़ को, करत विमोह अपार॥१८२॥

जो हरि भक्त विचार रति, सुन सुन के हर्षात।
हरि चरितामृत कर्ण से, पीवत नाहिं अघात॥१८३॥

जस-जस तनु हरि धरत हैं, तस-तस करत विहार।
कर विचार जो देखिये, सो अक्रिय अविकार॥१८४॥

सुने सुनावे प्रेम से, जो कोई यह ताल।
प्रेम भक्ति अनपायिनी, देवें तिसे गुपाल॥१८५॥

प्रेमहास्यं प्रपन्नानां प्राणान् हरति यस्य हि।
स्नेहिनां तत्पराणां च कोपस्तस्य तु कीदृशः॥१८६॥

नमः श्रीवासुदेवाय, संकर्षणमहात्मने।
प्रद्युम्नायानिरुद्धाय, चतुर्व्यूहात्मने नमः॥

इति श्रीमत्परमहंसोदासीनशिरोवतंसस्वामिकार्ष्णिज्ञानदास-शिष्येण स्वामिकार्ष्णिगोपालदासाह्वेन विनिर्मिते गोपाल-विलासे उत्तरविश्रामे प्रद्युम्नानिरुद्धादिजन्मविवाहादिवर्णनं नाम षोडशस्तालः समाप्तः॥१६॥

मास-पारायण चौबीसवाँ विश्राम॥२४॥
पाक्षिक-पारायण बारहवाँ विश्राम॥१२॥

ॐ

श्रीवृन्दावनविहारिणे नमः।

अथ सप्तदशस्तालः-१७

श्लोकः

कूपाद्येन समुद्धतो नृगनृपो ब्रह्मस्वदोषान्वितो
गार्हस्थ्यं निजदर्शितं प्रतिगृहे देवर्षये येन तु।
चैद्यं पांडवराजसूयसवने शाल्वं रणे योऽवधीत्
कारूषं च विदूरथं निज पुरे कृष्णाय तस्मै नमः॥१॥

नारद-वचन दोहा

माधव के सुत एक दिन, करते विपिन विहार।
भये पिपासे उदक तब, खोजत . भये कुमार॥२॥

गज सम इक कृकलास को, देखा कूप मझार।
ताको बाहिर काढ़ने, हित तिन करा विचार॥३॥

चर्म डोर से बाँधकर, खैंचा सब बल लाय।
नहिं निकसा तब कहा तिन, केशव के ढिग जाय॥४॥

काढ़ा सो कर वाम से, तहाँ कृष्ण ने जाय।
हरि के हस्त स्पर्श से, छूटा सरट कुकाय॥५॥

देवदेह तिसने धरा, द्युति तपनीय समान।
प्रकट करण हित कर्म तस, पूछत भा भगवान॥६॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

को तू प्रिय बड़भागी भाई। विबुधोत्तम सम देत दिखाई॥
कौन कर्म तुमने अस कीया। जिसकर यम ने यह तनु दीया॥७॥

हे सुभद्र सो कथा तुमारी। सुनबे को अति रुची हमारी॥
सोउ कदाचित् गोप्य न होई। सोम्य सुनावो निज कृत सोई॥८॥

नारद-वचन दोहा

अच्युत के सुन वचन नृप, दर्शन कर हर्षाय।
बोला देव शरीर नृग, हरि पद सीस नवाय॥९॥

नृग-वचन चौपाई

अव्याहत प्रभु ज्ञान तुमारा। अखिल विश्व द्रष्टा अविकारा॥
जानत तुम सब जग सुरराई। तदपि कहूँ तव आज्ञा पाई॥१०॥

इक्ष्वाकू सुत नृग मम नामा। सुना होयगो तुम श्रीधामा॥
जितनी वर्षित घन की धारा। क्षिति कण जितने नभमें तारा॥११॥

इतनी धेनु दान मम जानो। और दान का नाहि प्रमानो॥
शील रूप पय युत सो तरुणी। हेम विषाण रजत मय चरणी॥१२॥

मालाभरण वसन युत जोई। कांस्य पात्र बछरा युत सोई॥
जो द्विजवर जप तप व्रतवाना। गृही कुटुम्बी शुभ गुण खाना॥१३॥

दिये दान तिनको कर जोरी। हय गज हाटक धाम करोरी॥
भूमि रजत तिल कन्यादाना। वसन रत्न शय्या मख नाना॥१४॥
वापी कूपादिक शुभ कर्मा। बाग तड़ागादिक बहु धर्मा॥
किसी विप्र की धेनु भुलाई। हमरे गो गण में मिल आई॥१५॥
सो हम दान करी निज जानी। पुन तिस द्विज ने गौ पहचानी॥
सो कह मोको नृग ने दीनी। वो कह हमरी हमने चीनी॥१६॥
दोनों झघड़त मम ढिग आये। दोनों ने निज वचन सुनाये॥
एक कहत तुम मोको दीनी। एक कहत तुमने हर लीनी॥१७॥
लक्ष धेनु तुम हमसे लेवो। यह इक गो तुम इसको देवो॥
हम पृथिवी पति किंकर थारे। तुम दोनों द्विज पूज्य हमारे॥१८॥
धर्म कष्ट से राखो मोको। बार-बार मैं प्रणमो तोको॥
या विध मैंने दोनों ताही। भाखा धर्म जान मन माहीं॥१९॥
पर तिन देनों ने हठ ठाना। हमरा कहा न तिनने माना॥
पावें तो यह ही गो पावें। नहिं तो रिक्त भवन में जावें॥२०॥
इस विध दोनों हठ वश भयए। धेनु भवन मम ते तज गयए।
इतने मांहि काल मम आया। दूतन ने यम पुर पहुँचाया॥२१॥
राजन् तुमरे पुण्य अनेका। द्विजगोहरणा पातक एका॥
प्रथम कौन फुल्ल चहिये तोको। या विध पूछा यमने मोको॥२२॥
मैंने भाखा पाप भुगावो। यमने कहा सरट तनु पावो॥
पुण्य प्रभाव अनुग्रह थारा। नष्ट भया नहि ज्ञान हमारा॥२३॥

देव अनुग्रह अति तुम कीना। जो भव मोचन दर्शन दीना॥
जांको योगीश्वर जन जोई। विमल हृदय में चिंतत सोई॥२४॥

सो तुम सन्मुख भये हमारे। प्रभु तव करुणा कोन उचारे॥
भव अपवर्ग होत जब जांको। प्रभु का दर्शन होवत तांको॥२५॥

जो भगवन् तब आज्ञा पावूं। तो मैं देव लोक को जावूं॥
अस करुणा करिये जनत्राता। भूलूं नहि तव पद जलजाता॥२६॥

जगन्नाथ गोविन्द सुरोत्तम। नारायण अच्युत पुरुषोत्तम॥
ब्रह्म अनन्त शक्ति तुम देवा। कोउ न जानत तुमरा भेवा॥२७॥

नेति नेति कर वेद बखानत। पर तव कृपा पात्र सो जानत॥
शरणागत वत्सल श्रीधामा। तव पद पंकज करूँ प्रणामा॥२८॥

नारद-वचन दोहा

या विध कहकर भूप नृग, हरि पद सीस निवाय।
कर प्रदक्षिणा कृष्ण की, तिनकी आज्ञा पाय॥२९॥

गया शक्र के लोक को, बैठ वरिष्ठ विमान।
प्रभु ब्रह्मण्य स्वजनन को, लगे धर्म समुझान॥३०॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

विप्र वस्तु किंचित बी जोई। तेजस्वी को दुर्जर होई॥
जो संसारी भूपति मानी। तिसको तो यह नरक निशानी॥३१॥

विष को हम कुछ बहुत न माने। जाके विविध उपाय बखाने॥
विप्र अंश तिससे बलवाना। जिसका प्रतिविधि नहि कुछ ठाना॥३२॥

इक भक्षक जन को विष मारत। तजकर मूल अनल नग जारत॥
यह ब्रह्मस्व दहन विष जोई। मूल सहित कुल जारत सोई॥३३॥

बिन जाने जो इसको खावत। कुल त्रय तिसकी रौरव जावत॥
बल से हरकर भोगत जोई। डारत नरक बीस कुल सोई॥३४॥

वस्तु गये ब्राह्मण जब रोवत। जितने क्षिति कण गीले होवत॥
उतने वर्ष नरक दुख पावत। जो ब्राह्मण की वस्तू खावत॥३५॥

निज वा पर कर दीनी होवे। ब्रह्म वृत्ति को जो जन खोवे॥
साठ सहस्त्र अब्द शठ सोई। विष्ठा माँहि कीट तनु होई॥३६॥

जो जन ताकी इच्छा कर है। ताका द्रविण इतर नर हर है॥
यदि महिसुर अपराध कमावे। मम जन तदपि न तिसे दुखावे॥३७॥

गारी देवे वा द्विज मारे। तदपि विप्र पद में शिर धारे॥
हम द्विजाति को मानत जैसे। तुमबी मानो तिनको तैसे॥३८॥

अनथा वर्तेगा जन जोई। हमसे दण्ड पायगा सोई॥
भयी कुगति नृग भूपति की जिम। विप्र वस्तु अपहर्त्ता की तिम॥३९॥

नारद-वचन दोहा

या विध कहकर कंस रिपु, गये स्वजन युत धाम।
सकल लोक पावन प्रभू, पतित उधारक नाम॥४०॥

एक कृष्ण वनिता विविध, कैसे करत मुरारि।
सह न सकत सापत्न्य दुख, नारी कलह अगार॥४१॥
हरि लीला देखन लिये, मैं गमना प्रभु धाम।
तात काल उठ कृष्ण ने, मम पद करा प्रणाम॥४२॥
चरण धोय कर नीर सो, शिर में धारण कीन।
हस्त जोड़ ब्रह्मण्य प्रभु, बोले गुरु सम चीन॥४३॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

धन्य-धन्य गुरु भाग हमारे। जो तव पद मम भवन पधारे॥
गृही सदन में दर्स तुमारा। जिम मरु महि में गंगाधारा॥४४॥
कोटि जन्म के अघगण जोई। साधु दर्श से नाशत सोई॥
सब विध तुम पूरण मुनिराई। हम क्या करें तोर सिवकाई॥४५॥

देव ऋषि-वचन चौपाई

हे ब्रह्मण्य देव यदुराई। तुम निज जनको देत बड़ाई॥
यह प्रभु में कुछ अद्भुत नाहीं। गुरु राखत गौरव उरमाहीं॥४६॥
तुम जगदीश्वर जगके त्राता। विधि सुत मैं तुम तिसके ताता॥
तव पद धोवन गंगा जोई। त्रिभुवन पावन करहै सोई॥४७॥
सो तुम मम पद जल शिर धारा। जग शिक्षा हित तव आचारा॥
किस विध जन को तुम अपनावो। चाहे पूजो नाथ पुजावो॥४८॥

तव पद युगल सरोज परागा। करत सुतप मुनिगण तिस लागा॥
ब्रह्मादिक जिसको शिरधारत। जो जन के भयभीति निवारत॥४९॥
तिस पद को मैं नित प्रति ध्यावूँ। तव गुण गावत जहिं जहिं जावूँ॥
करो कृपा सोई जन ताहीं। जिससे प्रभु पद भूले नाहीं॥५०॥

नारद-वचन दोहा

पुन मैं गमना इतर गृह, हृदय धरा खग-केतु।
योगीश्वर जगदीश की, माया जानन हेतु॥५१॥
अक्षन से खेलत तहाँ, देखे उद्धव साथ।
कर प्रणाम मम चरण में, बोले यादव नाथ॥५२॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

कब आये हो श्रीमुनिराया। हम पर करी आपने दाया॥
बहुत दिवस से दर्शन दीना। मम मन्दिर अब पावन कीना॥५३॥
करो दास को आज्ञा कोई। हमरा जन्म सफल प्रभु होई॥
यद्यपि तुमको कुछ नहिं चहिये। तदपि मोर हित कुछ अब कहिये॥५४॥

नारद-वचन दोहा

चुप कर मैं तब इतर गृह, गया तहाँ गोपाल।
बालन को लालन करत, देखे परम कृपाल॥५५॥

पुन निरखे मैं इतर गृह, मज्जन करते श्याम।
कहीं हवन जप दान पुन, कहीं करत विश्राम॥५६॥
जितने प्रभु के भवन हैं, तिन सब में तब जाय।
नव-नव कृत करते तहाँ, देखे यादव राय॥५७॥
तब मैं गत-विस्मय भया, हरि प्रभाव को जान।
प्रभु गुण गावत मैं चला, प्रिय पद का कर ध्यान॥५८॥
धर्मराज अथ भूप मणि, राजसूय मख हेतु।
बहुत भांति से विनय कर, बोले खगपति केतु॥५९॥
सुग्रीवादिक हयन को, स्यन्दन में जुतवाय।
पांचजन्य नंदन खडग, कौमौदकि धरवाय॥६०॥
चतुरंगिनि सेना सहित, धनुष सुदर्शन हाथ।
पहुंचे दारुक सारथी, इन्द्रप्रस्थ यदुनाथ॥६१॥
आगे को लेने चले, पांडव सहित समाज।
बाजे बहुविध बजत हैं, वेद पढ़त द्विजराज॥६२॥
धर्मराज पुन भीम को, प्रभु ने कीन प्रणाम।
अर्जुन को गल लायके, मिले प्रेम से श्याम॥६३॥
नकुल सहित सहदेव ने, प्रभु पद वन्दन कीन।
हरि ने कंठ लगाय के, बहु विधि आशिष दीन॥६४॥

यथा योग्य सबको मिले, कीना नगर प्रवेश।
कुन्ती के पद वंदना, कीनी तब विश्वेश॥६५॥
प्रभु कीना विश्राम पुन, निरख बंधु हर्षाय।
धर्म तनय अथ विनय से, बोला अवसर पाय॥६६॥

युधिष्ठिर-वचन चौपाई

राजसूय क्रतु करण विचारा। चाहित हम प्रभु तोर सहारा॥
सम्पादन करिये मख सोई। तव सहाय बिन कृष्ण न होई॥६७॥
जो तव पद पंकज के ध्यावत। भव अपवर्ग सोउ जन पावत॥
जन जो इच्छा कर मन माहीं। तव प्रताप कुछ दुर्लभ नाहीं॥६८॥
विष्णु विभूति देवता जोऊ। मख में पूजेंगे हम सोऊ॥
इसमें सब विध तुमरी पूजा। माधव हमरा भाव न दूजा॥६९॥
मख मिष तुमरी जन पर दया। निरखेंगे सब जीव निकाया॥
जो तव सेवक जोउ विमुख खल। प्रकट दिखावो दोनों को फल॥७०॥
यद्यपि निज पर भेद न थारे। सर्वातम समदर्शी प्यारे॥
सुर तरु सम सेवक फल दाता। विषम स्वभाव न तव जनत्राता॥७१॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

बहुत श्रेष्ठ तव भूप विचारा। होगा जगत विमल यश थारा॥
पितर सुहृदजन सुरमुनि जोई। चाहित सब तुमरा मख सोई॥७२॥

लोकपाल सम तुमरे भाई। तापर नृप हम तोर सहाई॥
देव दनुज नर अस नहि कोई। अभिभव करे भक्त का जोई॥७३॥
दुर्जय हम नहि होत अधीना। पर निज गुणकर तुम वश कीना॥
जगती जय हित अनुज पठावो। याग समग्री सब मँगवावो॥७४॥

नारद-वचन दोहा

अनुजन को नृप ने दिशा, जय हित आज्ञा दीन।
प्रभु प्रताप कर तिनों ने, सब नृप निज वश कीन॥७५॥
भीमसेन प्राची गया, अर्जुन गया उदीचि।
दक्षिण दिशि सहदेव पुन, गमना नकुल प्रतीचि॥७६॥
लगे करन मख धर्म सुत, देख मुहूरत काल।
विविध उपायन साथ ले, गये अनेक नृपाल॥७७॥
व्यास वसिष्ठासित च्यवन, वामदेव भरद्वाज।
धौम्य पराशर गर्ग क्रतु, कौशिकादि द्विजराज॥७८॥
यज्ञ समग्री जोड़ कर, वेद विधी अनुसार।
प्रथम पूज्य के हेत तब, करहैं विप्र विचार॥७९॥
गणपति भक्त गणेश को, सबसे उत्तम मान।
खड़ा होय कर सभा में, बोला वचन सुजान॥८०॥

गाणपत-वचन सवैया

सब मंगल कारज आदि विषे, गणनायक पूजन वेद बखानत।
तिसके बिन पूजन कारज सो, सिध होत नहीं इम पंडित जानत।
सुर मानव दानव लोक सबी, द्विरदानन का प्रथमार्चन ठानत।
सब विघ्न-विनाशक सो तिसको, भव कारण व्यास मुनीश्वर मानत॥८१॥

त्रिपुरासुर मारण काल विषे, हरि शंकर आदिक देव निकाये।
गणनाथ समर्हण भूल गये, रण से सब देव पराजित आये।
त्रिदिवेशन ने अनुताप किया, विध से निज इष्ट गणेश मनाये।
तब तो त्रिपुराधिप दैत्य मरा, गज-आस्य दया त्रिपुरारि कहाये॥८२॥

नारद-वचन दोहा

भक्त भगवती मात का, मस्तक चित्रक लाल।
बोला शाक्तिक उठ पुना, जपा पुष्प गलमाल॥८३॥

शाक्त-वचन मत्तगयन्द छन्द

भूप सुनो यह झूठ बखानत, पूज्य गजानन को जनि जानो।
दानव देव मनुष्य सबी इक, शक्ति बिना शव के सम मानो।
शक्ति धरी उर देह विषे जिस, सो जन शाक्तिक ईश्वर ठानो।
शक्ति उपासक कुंजर-आनन, जाकर सो भव पूज्य बखानो॥८४॥

शंभु गजानन विष्णु रबी, सबका इक कारण शक्ति बखानी।
कारण को तज के श्रुति ने, जग कारज की नहि पूजन ठानी।

नाम अनेक कहे तिसके, दुरगा जननी जगदम्ब भवानी।
चार पदारथ देवत सो, निज पूजक को करुणारस सानी॥८५॥

नारद-वचन दोहा

भस्म तिलक रुद्राक्ष गल, शिव-शिव वचन उचार।
शाक्तिक पर कर कोप तब, बोला शैव विचार॥८६॥

शैव-वचन किरीट छन्द

हे पृथिवी पति दुष्टमती यह, झूँठ प्रजल्पत लाज न मानत।
शंकर की दुरगा प्रिय योषित, है तिसको शिव मात बखानत।
लोक पुराण प्रसिद्ध यही, हर को गिरजापति ही जन जानत।
योषित पूज्य न होत कबी, हर अर्चन को सुर मानुष ठानत॥८७॥

शक्ति अधीन रहे शिव के, जड़ शक्ति स्वतन्त्रकता नहि पावत।
शंकर श्रीशिव अन्य अशंकर, देव सबी अशिवांग डरावत।
विष्णु उपासक त्र्यबंक के, दिवसेश त्रिलोचन को उर ध्यावत।
शुंभुपुरी तनु त्यागत जो, नर नारि सबी पुन गर्भ न आवत॥८८॥

नारद-वचन दोहा

बोला सूरज भक्त पुन, कान्ती सूर समान।
रवि निन्दा के श्रवण से उपजा कोप महान॥८९॥

सौर-वचन मदिरा छन्द

वेष अमंगल जो प्रमथाधिप, देख जिसे अति धीर डरे।
आप पड़ा शमशान विषे, जनका किम शम्भु दरिद्र हरे।
शाकुन से नहिं मुक्ति करी, निज सो जनका किम मोक्ष करे।
जीवपना त्रिपुरान्तक का, यह दीसत जो नित ध्यान धरे॥९०॥

सूर बिना नहि देव किसी कर, लोक विषे कुछ काल सरे।
विश्व विहार सबी रवि से, बिनु भानु दिवौकस अंध परे।
अग्नि क्षपाकर आदि प्रकाशक, अंश दिवाकर की उचरे।
उत्पति पालन मोक्ष महालय, लोकन का रवि देव करे॥९१॥

गोचर देव विरोचन हैं, इक भावमयामर और करे।
ब्रह्म प्रकाश स्वरूप कहा, श्रुति सोउ प्रभाग्रह नाथ धरे।
हंस उपासक जो जग में, तिन देवन के तनु तेज भरे।
भानु उपासन के बल से, पुरुषोत्तम से सुर दैत्य डरे॥९२॥

नारद-वचन दोहा

वैष्णव चूड़ामणि पुना, विदित शास्त्र श्रुति भेव।
उर्ध तिलक तुलसी गले, बोला तब सहदेव॥९३॥

सहदेव-वचन चौपाई

दिन रात्रि चले हरिके डर जो, जन को भय से किम सूर बचावे।
दिवसेश कृशानु सदैव तपें, जिसके भय से इम आगम गावे।

भ्रम है भव सूर उपासक जो, स्व उपास्य स्वभाव उपासक पावे।
तनु तेज कहाँ रवि दर्शन से, उल्टी निज नेत्र प्रभा घट जावे॥१४॥

सब कारज विश्व विनाश भये, रवि शक्ति गणेश हरादिक नासे।
विधि व्योम विधू पृथिवी न रहे, तब चेतन एक अखंड प्रकासे।
तिससे पुनि सृष्टि भयी सकली, जिसके यजु साम ऋगादिक श्वासे।
धर रूप अनेक प्रपालत सो, तिससे सुर मानव दानव त्रासे॥१५॥

चन्द्रकला छन्द

अब धेनु द्विजामर संतन के हित, अच्युत ने नर देह धरा।
विधि शंभु सुरेश जलेश्वर ने, यम ने इनका वर स्तोत्र करा।
भव में सबके यह पूज्य प्रभू, इनका शिव ने नित ध्यान धरा।
प्रभु कृष्ण स्वयं सुर अंशकला, इम व्यास मुनीश्वर ने उचरा॥१६॥

तज संशय संघ कुतर्क सबी, हरि का प्रथमार्हण आप करो।
हरि पूजन से सब देवन की, अरचा निगमागम ने उचरो।
द्रुम मूल विषे जल सिंचन से, सब क़ांड लता दल होत हरो।
सब विघ्न विनाशक माधव श्री, पति नाम जपो प्रभु ध्यान धरो॥१७॥

नारद-वचन दोहा

वचन सुनत सहदेव के, द्विज नृप सब हर्षाय।
साधु-साधु सबने कहा, वक्ता के गुण गाय॥१८॥

पीत वसन कौशेय के, भूषण कुसुम मँगाय।
अच्युत का पूजन करा, धर्म तनुज सुख पाय॥९९॥
भव पावन पद उदक को, शिर में धारण कीन।
सानुज महिषी धर्म-सुत, केशव पद शिर दीन॥१००॥
हस्त जोड़कर सभा सब, प्रभु पद करा प्रणाम।
जय जय ध्वनि सबने करी, वर्षे सुमन सुदाम॥१०१॥
हरि की पूजा निरख कर, चेदि भूप शिशुपाल।
भुज उठाय कर क्रोध से, बोला वचन कराल॥१०२॥

शिशुपाल-वचन चौपाई

अहो कालगति अति बलवाना। सत्य वचन यह वेद बखाना॥
बाल वचन को मन में धारी। पंडित जरठों की मति हारी॥१०३॥
वेद ज्ञान व्रत शम दम धारे। तप कर नष्ट भये अघ सारे॥
ब्रह्मनिष्ठ द्विजवर मुनि जोई। लोकपाल कर पूजित होई॥१०४॥
सो अस पूज्य योग्य तुम त्यागे। गोपालक की पूजा लागे॥
पुरोडास जिम वायस खावे। तिम माधव पूजन करवावे॥१०५॥
वर्णाश्रम कुल से यह हीना। सर्व धर्म से बाहिर कीना॥
श्रुतिपथ त्याग स्वतंत्र विहारी। किम यह पूजा का अधिकारी॥१०६॥

इनका कुल ययाति ने शापा। भूप वंश से बाहिर थापा॥
श्रेष्ठ देश इनने तज दीना। पारावार भवन निज कीना॥१०७॥

प्रजा दुखद तस्कर सब यादव। तिनमें अति अपसद यह माधव॥
जिसके विद्या तप नहि कोई। पूजा योग्य कृष्ण किम होई॥१०८॥

नारद-वचन दोहा

मृत्यु ग्रास शिशुपाल के, सुनकर वचन कराल।
शिवा वचन को सिंह सम, बोले नहि गोपाल॥१०९॥

निन्दा सुनकर सभासद, मूँदें निज-निज कान।
गारी देते चैद्य को, गये दोष को जान॥११०॥

कृष्ण कृष्ण के जनों की, सुनत विनिन्दा जौन।
निन्दक दुर्जन के सदृश, दुर्गति पावत तौन॥१११॥

मास-पारायण पच्चीसवाँ विश्राम॥२५॥

कैकय सृंजय पाडु सुत, चेदिप मारण हेतु।
खड़े भये कर शस्त्र ले, वरजे तब खगकेतु॥११२॥

सीस उतारा चक्र से, चेदिप का गोपाल।
ज्योति तासकी कृष्ण में, लीन भई तत्काल॥११३॥

मख पूरण कर धर्म-सुत, सबको पूजा दीन।
चैद्य मोक्ष विस्मय निरख, प्रश्न भूप ने कीन॥११४॥

युधिष्ठिर-वचन चौपाई

दुष्ट चैद्य ने निन्दा कीनी। माधव तिसको गतिकिम दीनी॥
शिशुपन से प्रभु का रिपु सोई। ताकी दुर्गति क्यों नहिं होई॥११५॥

कृमि पड़ने चहिये मुख ताके। महाघोर कल्मष गण जाके॥
हरिनिन्दक की बी गति होई। भक्ति करेगा क्यों कर कोई॥११६॥

देव ऋषि-वचन चौपाई

किस विध माधव को जन ध्यावे। धर्म तनूज सोउ गति पावे॥
पेशस्कृत का भयकर ध्याना। होत अपर कृमितास समाना॥११७॥

वैर भाव मन लागत जैसे। भक्ति भाव मन लगत न तैसे॥
तनु आतम दर्शी जन जोई। निन्दा स्तुति को देखत सोई॥११८॥

देह-देह अभिमान न जांके। स्तोत्र असूया युग सम तांके॥
मोक्ष नरक जन देत न कोई। सब में मन ही कारण होई॥११९॥

मनकर जो जिसको जस ध्यावत। अन्त समय सो तिसको पावत॥
दन्तवक्त्र चेदिप नृप जोऊ। यह तो परम भागवत दोऊ॥१२०॥

विप्र शापकर महि में आये। वैर भावकर हरि पद पाये॥
यामे कहूँ एक इतिहासा। जाकर तव संदेह विनासा॥१२१॥

एक समय सनकादिक चारे। हरि दर्शन वैकुण्ठ पधारे॥
द्वारपाल ने रोके द्वारी। तिन अमर्ष कर शाप उचारी॥१२२॥

यहाँ वास नहि योग्य तुमारे। दुष्ट स्वभाव भेद मतिवारे॥
अब तुम दोनों महि में जावो। बहुत जन्म दानव तनु पावो॥१२३॥

सुन जय विजय अमित दुख पाया। तिनकी चरणी सीस निवाया॥
शाप अवधिहित याचन कीना। विप्रन ने तिनको वर दीना॥१२४॥

श्रीपति भक्ति करोगे जोई। सप्त जन्म तुमरी गति होई॥
वैर भाव कर चित्त लगावो। तो तुम तीन जन्म हरि पावो॥१२५॥

तिनद्रुत माधव मिलन विचारा। हरि से वैर भाव उर धारा॥
कनक कशिपु पुन कांचननयना। भये युगल दानव बल अयना॥१२६॥

क्रोड नृसिंह देह हरि धारे। दैत्याधिप दोनों सो मारे॥
रावण कुम्भकर्ण पुन हूए। राघवेन्द्र के कर से मूए॥१२७॥

भये युगल सो अब बल धामा। दन्तवक्त्र शिशुपालक नामा॥
अब इनका पुन जन्म न होई। विष्णु पारषद होंगे सोई॥१२८॥

नारद-वचन दोहा

याविध सुनकर वचन मम, हृदय कुतर्क उठाय।
निस्संशय हो धर्मसुत, मम पद सीस निवाय॥१२९॥

इन्द्रप्रस्थ में कछुक दिन, कर निवास घनश्याम।
निज सेना के सहित पुन, गये द्वारका-धाम॥१३०॥

शाल्व विदूरथ सैन्य युत, दन्तवक्त्र भूपाल।
गये द्वारका निज सुहृद, चेदिप का सुन काल॥१३१॥

मार समर में सकल को, हरि ने शुभ गति दीन।
दन्तवक्त्र की ज्योति तब, भयी कृष्ण में लीन॥१३२॥

सुने सुनावे प्रेम से, जो कोई यह ताल।
तिस जन को भव कूप से, काढ़े श्रीगोपाल॥१३३॥

इति श्रीमत्परमहंसोदासीनशिरोवतंसस्वामिकार्ष्णिज्ञानदास-शिष्येण स्वामिकार्ष्णिगोपालदासाह्वेन विनिर्मितगोपाल-विलासे उत्तरविश्रामे नृगोद्धारराजसूययज्ञशिशुपालदन्तवक्त्र-वधादिवर्णनं नाम सप्तदशस्तालः समाप्तः॥१७॥

—***—

ॐ

श्रीवृन्दावनविहारिणे नमः।

अथ अष्टादशस्तालः-१८

श्लोकः

श्रीदाम्ने श्रियमेव यश्चिपिटकान् विप्राय जग्ध्वा ददौ
यो गत्वा कुरुतीर्थमात्मसुहृदो वानन्दयित्वा बहून्।
आदित्य-ग्रहणे स्वगेहमगमज्ज्ञानं स्वपित्रे ददौ
देवक्याः पुनरानयन्मृतसुतान् कृष्णाय तस्मै नमः॥१॥

नारद-वचन दोहा

सखा एक गोविन्दका, विप्र सुदामा नाम।
शांत जितेन्द्रिय ब्रह्मवित्, तास सुशीला वाम॥२॥

दैवेच्छा कर मिलत जो, तिससे तनु निर्वाह।
करत भजन निष्काम निज, त्याग विषय की चाह॥३॥

निर्धनता के खेदकर, कृष तनु तिसकी वाम।
निज कुटुम्ब को क्षुधित लख, बोली युवति ललाम॥४॥

सुशीला-वचन सवैया

बिन भोजन छादन नाथ दुखी, वनिता तनुजा भगिनी सुत थारे।
तव आश्रित होय कलेश सहें, इनका अघ लागत विप्र तुमारे।
निज बान्धव पोषण यत्न करे, सुगृही नर के यह धर्म उचारे।
तुम भिक्षुक तुल्य उपाय तजा, किम होवनगे निर्वाह हमारे॥५॥

सुदामा-वचन सवैया

किसके तनु आश्रित कौन रहे, जगदीश्वर आश्रित है जग सारा।
जिस ईश्वर ने यह विश्व रचा, प्रभु सो सबका नित पालन वारा।
बहु भाँति प्रयत्न करे नर बी, बिन भाग्य नहीं कुछ लाभ निहारा।
निज बान्धव हेत करे अघ जो, दुख देत तिसे यमराज अपारा॥६॥

सुशीला-वचन सवैया

बिन पाप उपाय कहूँ तुमको, यदुनन्दन माधव मन्दिर जावो।
तुमरे प्रिय मित्र मुकुंद प्रभू, जन-वत्सल श्रीपति से धन लावो।
निज भक्ति अधीन उदार हरी, तिनको अपना तुम हाल सुनावो।
सुर संपत देवनगे तुमको, द्विज पालक सो नहिं संशय पावो॥७॥

सुदामा-वचन सवैया

धन हेत अराधत जो हरि को, तिसके सम मूढ़ नहीं जग कोई।
सुर पादप से विष याचत जो, वसु यांचक बी तिसके सम होई।
सब पाप अगार हिरण्य सुरा, इसका लव पान करे जन जोई।
नहि ध्यान समाधि बने तिससे, निरयालय में नर जावत सोई॥८॥

सुशीला-वचन सवैया

धन के सम और नहीं जग में, धनवान सभासद आदर पावत।
अति नीच कुरूप मली सम बी, खल अंध नपुंसक शास्त्र न आवत।
मतिमान कुलीन प्रवीन धनी, पुरुषोत्तम सुन्दर सोउ कहावत।
द्विज कोविद वैद्य गुणी धन के, हित आढ्यन के पद द्वंद्व दबावत॥९॥

सुदामा-वचन किरीट छन्द

जीव बधानृत दंभ बिनाछल, स्तैन्य बिना धनको नहि पावत।
जोउ मिले अभिमान मदादिक, लोभ तमोगुण वैर बढ़ावत।
मात पिता गुरु बाँधव में, द्रवणाधिप को विश्वास न आवत।
द्यूत सुरा परयोषित संगम, बंधु-वियोग हिरण्य करावत॥१०॥

सुशीला-वचन सवैया

धन के बल तीरथ श्राद्ध करे, अतिथी द्विज बाँधव साधु जिमावत।
मख होम विवाह धनी कर है, उपकार अनेकन द्रव्य करावत।
वसुधातल में वसुवान सुखी, बिन वित्त गृही गृह में दुख पावत।
सुत श्याल सखा सब बंधु बनें, धनसे जनलोक त्रिविष्टप जावत॥११॥

सुदामा-वचन मत्तगयन्द छन्द

संग्रह में श्रम होत महा दुख, पावत रक्षण में सब कोई।
चोर हरें गृह खर्च करे तब, तीर लगे सम व्याकुल होई।

जावत हूँ पर अच्युत के गृह, होवनगे प्रभु दर्शन जोई।
मोह हरें मम बन्धुन के प्रभु, संत गती करुणा कर सोई॥१२॥

भामिनि देहि हमें ललने कुछ, जो उपहार अगार तुमारे।
साधु दिवौकस इष्ट प्रभू इन के, नहिं रिक्त मिलाप उचारे।
अच्युत का चरणोडुप जो जन, संसृति सागर पार उतारे।
पूरव भागन से तिसको अब, देखनगे युग नेत्र हमारे॥१३॥

नारद-वचन दोहा

चार मुष्टि चूड़ा दिये, भीख माँगकर लाय।
फटे चीर में निरखकर, बोले द्विज दुख पाय॥१४॥

सुदामा-वचन सवैया

मघवा विधि वारिपतीन* विधू, इनकी बलि जो नहिं हाथ लगावत।
फल चैत्र रथादिक बागन के, जिसके गृह मोदक श्वान न खावत।
जिसके पद पंकज को कमला, कर कोमल से भय मान दबावत।
यह तंडुल शुष्क कणी तिनको, अब अर्पण में मम चित्त लजावत॥१५॥

सुशीला-वचन चौपाई

विदुरालय शाक तथा कदली, फल के छुलका जिस भोग लगाये।
शबरी कुलहीन मलीन तनू, तिसने फल बेर उच्छिष्ट खवाये।
महिपालक रंति कबंध दिया, गजराज सरोजनि भेंट चढ़ाये।
नहिं श्रीपति को प्रिय भोग लगे, लख प्रेम पियूष हरी हरषाये॥१६॥

नारद-वचन दोहा

संशय तजकर पृथुक ले, चले विप्र हर्षाय।
कृष्ण भवन पूछत भया, पुरी द्वारका जाय॥१७॥
द्वारपाल ने तास को, नहिं रोका द्विज जान।
देख दूर से सदन में, झटिति उठे भगवान॥१८॥
कंठ लगाया मित्र को, नयन स्रवत हर्षाय।
निज पर्यंक बिठाय के, तिसके चरण दबाय॥१९॥
स्नान कराया तास को, वसन दिव्य पहराय।
मधुर उपायन अर्प कर, विविध सुगंध लगाय॥२०॥
चरण धोयकर उदक को, शिर में धारण कीन।
व्यजन करत तब रुक्मिणी, हरि ने बीड़ी दीन॥२१॥
अन्तःपुर की योषिता, द्विज का लख सन्मान।
विस्मय होकर परस्पर, तांके भाग्य बखान॥२२॥

अन्तःपुरचरी-वचन चौपाई

कौन पुण्य भिक्षुक ने कीना। इसको निज आसन प्रभु दीना॥
महा दरिद्री यह दरसावत। शुष्क देह जनु अन्न न खावत॥२३॥
जो त्रिलोक गुरुने निज हाथा। इसके पद धोये रति साथा॥
निज अग्रज सम कंठ लगाया। जानी जात न माधव माया॥२४॥

नारद-वचन दोहा

पुन श्रीपति अति प्रेम से, गहकर द्विज का हाथ।
गुरुकुल की गाथा सकल, कहत भये यदुनाथ॥२५॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

गुरुकुल से प्रिय जब तू आया। परिणय करा न वा द्विजराया॥
गृह धन में द्विज चित्त तुमारा। लगत नहीं हमने निर्धारा॥२६॥
तदपि विरतिरति बी जन कोई। गृह आश्रमकृत करहै सोई॥
मम सम विषय वासना त्यागत। जन संग्रह हित गृहकृत लागत॥२७॥
त्रय गुरु द्विज के जग विख्याता। पिता पुरोहित ज्ञान प्रदाता॥
श्रेष्ठ जनक से वेदाध्यापक। पूज्य ईश सम आतम प्रापक॥२८॥
वर्णाश्रम में सो बड़भागी। गुरु शुश्रूषा जो अनुरागी॥
ब्रह्मन् पंडित सोउ बखाना। जिस द्विज ने निजआतम जाना॥२९॥
ब्रह्मतत्त्व नहिं जानत जोई। आतम घाती जानो सोई॥
पूजा श्रुति तप उपशम करणा। मम प्रसाद नहि इन आचरणा॥३०॥
हम प्रसन्न जस गुरु सेवा कर। गुरुसेवा सम धर्म न को वर॥
गुरु गृह वास चरित्र हमारे। याद होनगे तुमको प्यारे॥३१॥
ईंधन हित सब विप्र कुमारा। इक दिन वन भेजे गुरुदारा॥
वात वर्ष तब भयी घनेरी। घन गर्जत दशदिश अंधेरी॥३२॥

रवि गमना अस्ताचल माही। नीच ऊच मग दीसत नाहीं॥
पवन नीर कर हम दुख पाये। हस्त ग्रहण कर इत उत धाये॥३३॥

दिवस भये तब गुरु सुन पाया। हमको देखन हित वन धाया॥
जब आतुर निज छात्र निहारे। करुणाकर गुरु वचन उचारे॥३४॥

अहो पुत्र तुमने मम कारण। सहे विपिन में दुख अति दारुण॥
निज शरीर सबको अति प्यारा। मम हित तुमने सो न निहारा॥३५॥

यही शिष्य का धर्म बखाना। गुरु सेवा में तन मन लाना॥
तुष्ट भया अब चित्त हमारा। तुमरा सेवक भाव निहारा॥३६॥

उभय लोक में आनंदकारी। सफली होवो विद्या थारी॥
इत्यादिक गुरु आशिष दीना। सफल जन्म तब सबने चीना॥३७॥

सुदामा-वचन चौपाई

विद्याध्ययन गुरू गृह वासा। अच्युत तव नर नाट्य विलासा॥
देव देव श्रुति श्वास तुमारा। काय सकल कल्याण अगारा॥३८॥

तुम जगदीश्वर आतम रामा। विद्यानिधि सब पूरण कामा॥
पूरण काम भये हम नाथा। जो प्रभु वास करा तव साथा॥३९॥

नारद-वचन दोहा

सर्वान्तर्यामी प्रभू, द्विज के मन की जान।
प्रेम अमृत साने वचन, बोले तब भगवान्॥४०॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

मित्र भवन से तुम अब आये। हमरे हित प्रसाद क्या लाये॥
अर्पण करत भक्तियुत जोई। चाहे पत्र पुष्प फल होई॥४१॥
सो हम तिसको भोग लगावत। बिन रति बहुव्यञ्जन नहिं भावत॥
जो कुछ हो सो देवो प्यारे। क्षुधा लगी अब मित्र हमारे॥४२॥

नारद-वचन दोहा

या विध हरि का वचन सुन, द्विजवर हृदय लजाय।
श्रीपति को नहि दिये तब, राखे पृथुक छिपाय॥४३॥
पोट निरखकर तास से, खैंच लीन तत्काल।
चिपिट खोलकर देखके, बोले तब गोपाल॥४४॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

प्रिय उपहार लाय तुम जोई। मोको अति प्रिय लागे सोई॥
विश्वरूप मोको यह प्यारे। तृप्त करेंगे तंडुल थारे॥४५॥

नारद-वचन दोहा

या विध कहकर कवल इक, प्रभु ने भक्षण कीन।
पुनर्ग्रास के लेत ही, रुक्मिणि कर ग्रह लीन॥४६॥

श्रीरुक्मिणी-वचन चौपाई

द्विजपर प्रभु अति करुणा कीनी। उभय लोक की संपद दीनी॥
अब क्या देना नाथ विचारा। इनमें वा कुछ स्वाद निहारा॥४७॥

जन उपहार आपही जेंवो। निज प्रसाद हमको नहि देवो॥
घृत पीयूष शर्करा माहीं। ऐसा स्वाद दीसता नहीं॥४८॥

कंद मूल फल रस नहि ऐसा। प्रीतियुक्त विषमें रस जैसा॥
ब्रह्मादिक का जो उपहारा। तांको करत न तुम स्वीकारा॥४९॥

नंदन चैत्ररथांघ्रिप फल जो। तुमको लगत न रस संकुल सो॥
शुष्क चिपिट यह रसयुत लागे। अहो भाग भिक्षुक के जागे॥५०॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

मत संशय आनो उर मांही। भक्त-तुल्य प्रिय मोको नाहीं॥
कोटि भाँति निज जनहित ठानूं। सुत प्रिय बाँधव जनको जानूं॥५१॥

विद्या जप तप नियम अपारी। इनकर हम वश होत न प्यारी॥
सत्य कहूँ सीमंतिनि तोको। निज वश करत भक्तजन मोको॥५२॥

उभयलोक सुख मम हित त्यागत। निशदिन मम चिंतन में लागत॥
मम बिन जिसको नहि कुछ प्यारा। सोजन हरहैं चित्त हमारा॥५३॥

इसने पूरव बहु जन माही। धन हित कर्म करा कुछ नाहीं॥
सब निष्काम कर्म इस ठाने। सदा परम प्रिय मोको जाने॥५४॥

पतिव्रत निज पत्नी प्रिय हेता। धन हित आया मोर निकेता॥
देवूं द्रविण जान जो दासा। कर्म पंथ तो होत विनासा॥५५॥

कर्म गती को देखूं जोई। भक्ति पंथ की हानी होई॥
युग्म पंथ यह किये हमारे। भवसागर से पार उतारे॥५६॥

जिस विध नष्ट न होवें दोऊ। हमको करन उचित अब सोऊ॥
उग्र कर्म जो जो बन आवत। तातकाल तिसका फल पावत॥५७॥

विश्वरूप हम खावें जाका। उग्र कर्म सो होवत ताका॥
तिसका फल पुन होत अपारा। कृत में पात्र प्रभाव विचारा॥५८॥

यह विचारकर चिपिटक खाये। इस विध मारग युगल दृढ़ाये॥
सुरपति संपद दुर्लभ जोई। पृथुकन का फल देवूं सोई॥५९॥

नारद-वचन दोहा

भयी असंशय रुक्मिणी, घृणी कृष्ण को चीन।
विविध भाँति पकवान निशि, द्विज को भोजन दीन॥६०॥

बसुधासुर ने स्वर्ग सम, समुझा सुख सन्मान।
चले भवन निज विप्र पुन, प्रभु ने वंदन ठान॥६१॥

गये दूर तक साथ तब, ताको मित्र विचार।
पुन केशव सुर शिल्पिसे, बोले वचन उदार॥६२॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

विप्र सुदामा के गृह जावो। ताका भवन विशाल बनावो॥
स्तंभमणीमय कनक कपाटा। स्फटक कुड्य पुन हाटक खाटा॥६३॥
पयः फेन सम शय्या नाना। मुक्तादाम बिलम्ब विताना॥
वसनाभरण अनेक प्रकारा। दासी दास मनोज्ञ अपारा॥६४॥
पंकजयुत जल मिष्ट तड़ागा। चंपक कुन्द प्रफुल्लित बागा॥
कूजत खग कुल चातिक मोरा। कोकिल सारस हंस चकोरा॥६५॥
गो रथ नाग तुरंगम नाना। अनल इन्दु रवि तेज विमाना॥
त्रिदिव तुल्य सब वस्तु बनावो। एक रात्रि में देर न लावो॥६६॥

नारद-वचन दोहा

प्रभु की आज्ञा सीस धर, सुरपति शिल्पि प्रवीन।
जिस विध माधव ने कहा, तैसे तिसने कीन॥६७॥
उत केशव का सखा द्विज, प्रभु की कृपा निहार।
मारग जाते हर्ष युत, करहै विविध विचार॥६८॥

सुदामा-वचन चौपाई

अति ब्रह्मण्य देव यदुराई। इनकी महिमा कही न जाई॥
कहाँ दरिद्री मैं अति दीना। दुर्बल विग्रह वसन मलीना॥६९॥
कहाँ कृष्ण श्रीपति भगवाना। गुरु सम मम कीना सन्माना॥
जिसके दास शिवादिक देवा। तिसने कीनी मम पद सेवा॥७०॥

राज्य स्वर्ग अपवर्ग अनन्दा। सब कर कारण प्रभु पद द्वन्द्वा॥
पर हरि करत कृपा जिस माहीं। तिसको संपद देवत नाहीं॥७१॥
निर्धन नर जब धन कुछ पावत। होत मत्त नहि प्रभु पद ध्यावत॥
यहहि विचार कृष्ण ने कीना। करुणाकर ने धन नहि दीना॥७२॥

नारद-वचन दोहा

पहुँचा भवन समीप सो, या विध करत विचार।
तर्क करत भा चकित चित, निज आगार निहार॥७३॥

सुदामा-वचन चौपाई

अहो कौन के गृह मैं आया। किसने मणिमय धाम बनाया॥
पर्णकुटी थी जोउ हमारी। किसी भूप ने सोउ उखारी॥७४॥
सहित कुटुम्ब ब्राह्मणी मेरी। कीनी तिसने निज गृह चेरी॥
अथवा उटज बिना दुख पाई। भटकत होगी कानन जाई॥७५॥
हमरे मन का वा भ्रम कोई। इतर ठौर मम आश्रम होई॥
भला भया प्रभु बंधन काटा। जोउ बिगाड़ा गृह का ठाटा॥७६॥
गंगा तट निवास अब करहूँ। तप कर निज कल्मष परिहरहूँ॥
जाकर पुन संसार न आवूं। चरण कमल अच्युत के पावूं॥७७॥

नारद-वचन दोहा

या विध तिसके चितवते, निरख सुशीला वाम।
निज अनुचर को भेजकर, बोले ब्राह्मण धाम॥७८॥

अनुचर-वचन चौपाई

द्विजवर यही तुमारा धामा। सह कुटुम्ब भीतर तव वामा॥
तुम पर दया कीन यदुराई। यह संपत तव हेत पठाई॥७९॥

हम सब सेवक विप्र तुमारे। निश्चय जानो वचन हमारे॥
चलो भवन करिये विश्रामा। मारग देखत तुमरी वामा॥८०॥

नारद-वचन दोहा

मंदिर के अंदर गया, अनुचर युत द्विजराज।
अति विस्मय भा निरखकर, सर्व त्रिविष्टप साज॥८१॥

लक्ष्मी सम सुन्दर तनू, अपनी नारि निहार।
निष्क कंठ दासी सहित, हरि की कृपा विचार॥८२॥

सुदामा-वचन चौपाई

अहो देखिये प्रभु प्रभुताई। संपद दिया न हमें जनाई॥
जन का हित परोक्ष प्रभु ठानत। निज उपकार अल्पकर जानत॥८३॥

भृत की किंचित् कृत बी जोई। हरि महान् कर मानत सोई॥
जिस जिस योनि विषे मैं जावूं। दास्य सख्य केशव का पावूं॥८४॥

हरि संतन का होवे साथा। जाकर मिलत श्रीश यदुनाथा॥
इन सम घृणी कृतज्ञ उदारा। देव मनुज नहि कोउ निहारा॥८५॥

नारद-वचन दोहा

या विध निश्चय बुद्धि द्विज, हरिपद चित्त लगाय।
भोगे सुख सम्पद विषय, हृदय न अति हर्षाय॥८६॥

भया न लम्पट विज्ञवर, बंधन कारक जान।
प्रभु पर ध्यान प्रताप से, पाया पद निर्वान॥८७॥

सासाहिक पारायण छठवाँ विश्राम॥६॥

राम कृष्ण वसुदेव युत, सूर ग्रहण के हेत।
गमने अथ कुरुक्षेत्र में, गज रथ बंधु समेत॥८८॥

कर सनान तब राम हृद, वसन कनक गोदान।
बहु विध भोजन द्विजन को, दीने कर सन्मान॥८९॥

पांडव आदिक भूप बहु, देश देश से आय।
राम कृष्ण का दर्सकर, सबने अति सुख पाय॥९०॥

माधव का आगमन सुन, यदु परिवार समेत।
व्रजवासी नन्दादि सब, गये मिलन के हेत॥९१॥

नन्दराज को शूर सुत, मिला स्वकंठ लगाय।
तांका उपकृत याद कर, नयन नीर चल आय॥९२॥

मात पिता के चरण में, संकर्षण गोपाल।
करी वन्दना तिनों ने, उर लाये तत्काल॥९३॥

पास बिठाकर सुतन को, नन्द यशोदा मात।
फेरत कर सुत पृष्ठ पर, रोमांचित भा गात॥९४॥
भये सकल गद्‌गद् गिरा, चलत नयन से वार।
चित्र लिखे से सब भये, मन में हर्ष अपार॥९५॥
देवक तनया रोहिणी, यशमति को उर लाय।
तांकी प्रीती याद कर, बोली उर सकुचाय॥९६॥

देवकी-वचन चौपाई

तव सम कौन बन्धु व्रजरानी। जिसकी प्रीति न जात बखानी॥
चाहे सुरपति संपति पावूं। तव उपकार न हृदय भुलावूँ॥९७॥
भगिनी प्रीति करी तुम जोई। तिसका प्रत्युपकार न होई॥
राम कृष्ण तुम पाले कैसे। रखत पलक लोचन को जैसे॥९८॥
इन सुख पाये तव गृह माहीं। मात पिता निज जानत नाहीं॥
तुमको मात पिता कर जाना। तुमने बी निज सुतकर माना॥९९॥
संतन की यह प्रकृती होई। निज पर भेद न मानत कोई॥
आज दिवस अति उत्तम आया। जो बहुदिन तव दर्शन पाया॥१००॥

यशोदा-वचन चौपाई

मैं जननी यह पुत्र हमारा। तव मम यह व्यर्थ अहंकारा॥
यह सबके सुत सबके ताता। आतमभाव सर्व से नाता॥१०१॥

हम यह अति बालशता ठानत। जगत पिता को सुतकर जानत॥
निज आतम सबको प्रिय होई। प्रिय पोषण करहै सब कोई॥१०२॥
जामें किसका को उपकारा। सर्वातम प्रिय कृष्ण उचारा॥
भगिनी यह तव साधु स्वभावा। जो तुम मम उपकार बतावा॥१०३॥

मास-पारायण छब्बीसवाँ विश्राम॥२६॥

नारद-वचन दोहा

गोप गोपिका सकल को, कुशल पूछ भगवान्।
भोजन जल पट शिविर दे, कीना अति सन्मान॥१०४॥
भीषम विदुर विराट नृप, धर्म तनुज सह नारि।
केकय सृंजय द्रुपद से, पूछा क्षेम मुरारि॥१०५॥
नग्नजितादिक नृपन का, कीना बहु सन्मान।
धर्म तनय कर जोड़ तब, बोला धर्म निधान॥१०६॥

युधिष्ठिर-वचन चौपाई

तव पद पंकज आश्रित जोई। तिनको कहाँ अमंगल होई॥
संत वदन कर तव गुण गाना। काटत भव कारण अज्ञाना॥१०७॥
तिसको जो श्रुति पान करे है। काल त्रास से सो न डरे है॥
निगमागम स्तुत शिवयश थारा। विशद वेदमय वचन तुमारा॥१०८॥
अच्युत तव चरणोदक जोई। करत पवित्र भुवन को सोई॥
पद सपर्श तव क्षिति सुख माना। देत प्रजा को संपद नाना॥१०९॥

निगम पंथ के रक्षण कारण। आनंदघनमय तव तनु धारण॥
तीन अवस्था पर तव धामा। तुमरे पाद सरोज प्रणामा॥११०॥
फलयुत यात्रा भयी हमारी। जो तव दर्शन करे अघारी॥
तीरथ जप तप संयम नाना। सब कर फल तव दर्स बखाना॥१११॥

नारद-वचन दोहा

पांडव के सुन वचन तब, सबको भया हलाद।
मन ही मन वंदन करा, राम कृष्ण के पाद॥११२॥
व्यास चवन देवल असित, कौशिक भृगु भरद्वाज।
गये राम हरि दर्स हित, गौतमादि द्विजराज॥११३॥
देख द्विजन को सभा सब, खड़ी भयी तत्काल।
तिनके पद वंदन करा, सभा सहित गोपाल॥११४॥
यथायोग्य आसन दिये, बहु विध कर सत्कार।
धर्म वर्म ब्रह्मण्य प्रभु, बोले विनय उचार॥११५॥

श्रीकृष्ण-वचन हरिगीत छन्द

भा जन्म सफला आज हमरा, तास के फल हम लिये।
तव दर्स दुर्लभ सुरन को, निज नयन से हमने किये।
भव अल्प तप जन देव को, प्रति मान मात्रक ध्याव हैं।
नर सो मुनीश्वर दर्स भाषण, वंदनादि न पाव हैं॥११६॥

जल रूप तीरथ उपलमय सुर, शीघ्र नहि पावन करें।
निज तत्त्ववेत्ता ब्रह्ममय मुनि, दर्स से किल्विष हरें।
क्षिति नीर पावक पवन नभ उडु, उडुप भानु उपास्य हैं।
पर हरत नहि अज्ञान तम, विद्वान सपदि विनास हैं॥११७॥

त्रय धातु तनु को आतमा, ललनादि को निज जान हैं।
जो भूमि मय प्रतिबिम्ब को जन, पूज्य करके मान हैं।
पुन करत तीरथ बुद्धि जल में, वृषभ समता धरत हैं।
सुर पूज्यपद विद्वान् में यदि, चार भाव न करत हैं॥११८॥

अघ पुंज हरता तीरथों में, अज्ञ पाप मिलात हैं।
शुभ संत तीरथ तीरथों को, विमल करने जात हैं।
वर मुख्य फल यह तीरथों का, साधु दर्शन होत हैं।
मुनि दर्स कर मतिमान नर, अज्ञान मल को धोत हैं॥११९॥

नारद-वचन दोहा

श्रीपति के सुन वचन तब, प्राकृत पुरुष समान।
चकित भये कुछ नहि कहा, सर्व विप्र विद्वान॥१२०॥

जन शिक्षा हित कृष्ण के, वाक्य मुनीश्वर जान।
चिरतक हृदय विचार कर, पुन मुनि वचन बखान॥१२१॥

मुनि-वचन हरिगीत छन्द

नर नाट्य तव अवलोक कर प्रभु, मोह के वश मुनि परे।
अवितर्क्य चरित तुमार भूमन्, विज्ञ जनके मन हरे।

जगदीश केशव तुम कहाँ प्रभु, पतित पावन सद्गती।
सब विश्वकर्त्ता जगत हर्त्ता, लोक पालक श्रीपती॥१२२॥

अभिमान कर हम युक्त कर्म, विकार कायागार के।
बहु कर्म करे अनेक विध तव, काल का डर धारके।
निर्भय भये अब आपके पद, पद्म उर धारण करे।
ब्रह्मादि हम सब दास तुमरे, नाथ तुम सम को हरे॥१२३॥

तव वेद हृदय अगाध जामें, त्रिगुण मय संसार हैं।
स्वाध्याय संयम आदि से मुनि, ब्रह्मतत्त्व निहार हैं।
तिस वेद वेद्य स्वरूप अपना, देव तुम मन जान हो।
निज श्रुति प्रवर्त्तक विप्रकुल, इस हेत तुम सन्मान हो॥१२४॥

जिम सुप्त मानव तनु मनोमय, आतमा कर मान है।
प्रविभिन्न तिससे देवदत्त तनु, तास को नहि जान है।
तिम नाम मात्रक विषय सुख को, भ्रमित जन निज ध्याव हैं।
सब दृश्य से पर रूप तुमरा, मूढ़ नर नहि पाव हैं॥१२५॥

सफले भये तप नयन विद्या, आज तव दर्शन करा।
महिमा प्रछादक देव माया, जवनिका को प्रभु हरा।
तव भक्ति उपहत लिंग काया, बहुत मुनि सद्गति गये।
हम नमत तुमरे चरण जो, सुविपक्व योगी उर लये॥१२६॥

नारद-वचन दोहा

या विध कहकर विप्र सब, चलने भये तयार।
नमस्कार कर शूर सुत, तब यह वचन उचार॥१२७॥

वसुदेव-वचन चौपाई

सर्व देव मय विप्र नमामी। मम अभिशस्तिक सुनिये स्वामी॥
सुकृत कर्म अस कौन बखाना। जाकर मिटत कर्म अघ नाना॥१२८॥
मम अधिकार जान मुनिनायक। करो उचारण भव सुखदायक॥
जगत क्षेम हित तव अवतारा। वेद विदुष अनुकंपागारा॥१२९॥

नारद-वचन दोहा

शौरी के सुन वचन तब, मुनिन मौन धर लीन।
तब मैंने तिन सकल को, या विध उत्तर दीन॥१३०॥

देव ऋषि-वचन चौपाई

हे विप्रा कुछ चित्र न मानो। यहाँ दोष सन्निधि का जानो॥
दामोदर इसने सुत जाना। हमको पूछत निज कल्याना॥१३१॥
सन्निकर्ष मनुजन का जोई। सोउ अनादर कारण होई॥
गंगातीर वास जो ठानत। सो तिसकी महिमा नहि जानत॥१३२॥
पर्वन में तांको सो त्यागत। इतर तीरथों के हित भागत॥
सदन विदुषजन मूरख जानत। और मूढ को पंडित मानत॥१३३॥
काल पायकर जांका ज्ञाना। क्षय न होत उर्वारु समाना॥
विद्युत सम नहि स्वतो नसावत। घटसम परसें नहि क्षय पावत॥१३४॥
रूप नाश रूपान्तर कर हैं। तिस सम गुण हरि ज्ञान न हरहैं॥
राग कर्म सुख दुख गुण जोई। इनकर व्याहत होत न सोई॥१३५॥

निरावर्ण अद्वय भगवाना। तनु आवृत प्राकृत जन जाना॥
मेघ राह से जिम रवि न्यारे। पर मूरख जन ग्रसा उचारे॥१३६॥
जिनसे हम महानता पाई। सो तुमरे सादन सुर राई॥
तदपि आपने पूछा जोई। शूरतनय अब सुनिये सोई॥१३७॥
प्रथम धर्म से द्रव्य कमावे। पाप अंश लव मिलन न पावे॥
तिस धनकर मख में हरि पूजा। इस सम धर्म और नहि दूजा॥१३८॥
स्वर्ग प्राप्ति का सुगम उपाया। गृही द्विजातिन का श्रुति गाया॥
सुत वित लोक एषणा लागी। इनको त्यागत नर बड़भागी॥१३९॥
न्यायार्जित धन से मख करना। या कर धन इच्छा परिहरना॥
गृह आश्रम कर सुत उपजावे। सुत इच्छा इस रीति मिटावे॥१४०॥
जो स्वर्गादिक नश्वर ध्यावत। तांकी लोकेच्छा मिट जावत॥
देव पितर ऋषिऋण त्रय लागे। मख सुत विद्याकर सो त्यागे॥१४१॥
भये निवृत्त तोर ऋण दोऊ। मखकरतजअबसुरऋणजोऊ॥
जिसने त्रय इच्छा ऋण त्यागे। मोक्ष पंथ में सोई लागे॥१४२॥

नारद-वचन दोहा

या विध सुनकर शूर सुत, मख हित भया तयार।
मख शाला में वस्तु युत, करा प्रवेश सदार॥१४३॥
होता उद्गाता तथा, अध्वर्यू ब्रह्मादि।
ऋत्विज तिस मख में भये, ब्राह्मण सो व्यासादि॥१४४॥

ज्योतिष्टोम विधान से, दर्स सौर की रीति।
बाजे विविध बजाय के, कीना याग सप्रीति॥१४५॥

क्षौम वसन गो कटक भू, कनक रत्न बहुदान।
विप्र बंधु जन को दिये, मख भा मरुत समान॥१४६॥

याजक युत यजमान तब, कर यज्ञांत सनान।
विप्र श्वान चंडाल तक, दीना भोजन दान॥१४७॥

गमने निज निज देशमें, विप्र भूप संघात।
राम कृष्ण की कृपा बहु, मख शोभा को गात॥१४८॥

रत्न वसन से नन्द की, पूजा बहु बिध कीन।
राम कृष्ण ने प्रेम कर, तिनको जान न दीन॥१४९॥

नन्द हस्त को ग्रहण कर, हर्षित मन वसुदेव।
बाला तिसकी याद कर, राम कृष्ण की सेव॥१५०॥

वसुदेव-वचन चौपाई

हममें प्रीति अनुपम तुमारी। अति कृतघ्नता तात हमारी॥
प्रत्युपकार न हम से होई। तदपि न तुम त्यागत रति सोई॥१५१॥

पूरव हम अशक्त थे भाई। इससे सेवा नहि बन आई॥
श्रीमदांध अब दृष्टि हमारी। यांते बनत न सेवा थारी॥१५२॥

करूँ प्रार्थना श्रीपति ताहीं। जनको श्रीमद् देवे नाहीं॥
जाकर अंध दृष्टि नर होई। सन्मुख स्वजन न निरखत जोई॥१५३॥

नन्द-वचन चौपाई

तात तजो अस निज कदराई। भली भांति तुम प्रीति निबाई॥
क्या क्या सेवा तुम नहि कीनी। वस्तु कौन हमको नहि दीनी॥१५४॥
सब विध शौरे शक्ति तुमारी। तुम सबको जन प्रत्युपकारी॥
जो धर्मज्ञ रमापति दासा। श्रीमद तिसके आव न पासा॥१५५॥
हम ग्रामीण प्रीति क्या जाने। शाक छाछ गुड़ बहुकर माने॥
निज शक्ती का कर अनुमाना। कह न सकत तव गृह ले जाना॥१५६॥
स्वप्न विषे जो नहि दर्साये। सो वैभव हम तुमसे पाये॥
सुरपति कर्षक की रति जैसे। तव मम प्रेम असंभव तैसे॥१५७॥

नारद-वचन दोहा

या विध दोनो परस्पर, प्रेम युक्त संवाद।
करत भये गद्‌गद् गिरा, उर में बढ़ा हलाद॥१५८॥
राम कृष्ण वसुदेव ने, तांको प्रिय अति चीन।
अज कल करते मास त्रय, नंदहि जान न दीन॥१५९॥
पुत्र मित्र को पुनः पुन, नन्दराज गल लाय।
सह न सकत प्रिय विरह को, व्रज गमना दुख पाय॥१६०॥
कंठ लगाकर सुतन को, यशमति भई अधीर।
कर कठोर उर चली पुन, चलत नयन से नीर॥१६१॥

निज बंधुन का गमन लख, वर्षाऋतु को जान।
यादव बांधव सहित तब, भवन गये भगवान॥१६२॥

राम कृष्ण अथ एक दिन, मात पिता के पाद।
करी वंदना शूरसुत, विप्र वचन कर याद॥१६३॥

करत भया संकोच उर, तिनको ईश्वर जान।
ब्रह्म भाव तब सुतन का, तिसने करा बखान॥१६४॥

वसुदेव-वचन हरिगीत छन्द

श्री राम माधव आपको मैं, पुत्र कर नहि जान हूँ।
सब विश्व कारण प्रकृति पुरुष, तास से पर मान हूँ।
स्वस्वरूप से यह जगत जो, जिस करण कर्त्ता ने करा।
जिस भोगता के हेत वाऽपादान इसका जो वरा॥१६५॥

सुप्रयोज्य कर्तृ कर्म जो अधिकरण जोउ उचारिया।
पुन जास के सम्बन्ध कर यह, विश्व सब विस्तारिया।
सो सर्व तुम साक्षात भगवन्, प्रकृति पूरुष के पती।
जो जान है अस रूप तुमरा, पाव सो जन सद्गती॥१६६॥

निज रचित इस संसार में, परवेश कर तुम धारिया।
पुन जीव प्राण स्वरूप से, सब विश्व को प्रतिपारिया।
महतत्त्व सूत्र प्रधान में, जो शक्ति भव निर्माण की।
सो आपकी जिम वेधशक्ती, धन्वि की नहि बाण की॥१६७॥

महदादि तव परतंत्र जड़मय, निगम सन्त बखान हैं।
तव शक्ति पाकर शुष्क तृण सम, चेष्टता कर जान हैं।
शुभ कांति शशि की तेज शिखिका, स्थैर्यता गिरि ग्राम की।
जो दीप्ति विद्युत अर्क में, सो सर्व तुमरे धाम की॥१६८॥

नभ पवन जल वसुधादि मे पुन, शक्ति जो जो भास है।
सो सर्व तव तुम सकल व्यापक, ज्योति स्वयं प्रकास है।
घट कुण्डलादिक नष्ट होवत, हेम मृतिका रहत है।
तिम नाश होवत विश्व सब, तव अन्त वेद न कहत है॥१६९॥

महदादि रज तम सत्त्व गुण यह, सकल कल्पित मेश में।
प्रभु तुम विकल्पक सत्य हो जिम, स्वप्न जग स्वप्नेश में।
शिव निष्प्रपंच स्वरूप तुमरा, देव जिनें न ज्ञात है।
अज्ञान से संसार में सो, कर्मकर दुख पात है॥१७०॥

सर्वांग नर तनु पायकर, परमार्थ में जो नहि रता।
तव प्रकृति कर प्रावृत मती, मम व्यर्थ आयू सब गता।
निज देह में अहमिति सुतादिक, मांहि स्वत्व करायके।
सब विश्व बाँधा आपने, बहु प्रेम पाश बढ़ायके॥१७१॥

मैं शरण तव पद जलज जो, निज भक्त का भय हरत है।
भव विषय तृष्णा सर्प से, मम चित्त अच्युत डरत है।
जड़ देह में निज आतमा मति, भोग इच्छा ने करी।
जगदीश में सुतभाव पुन अब, रक्षणं कर मम हरी॥१७२॥

नारद-वचन दोहा

जनक वचन को श्रवणकर, हँसकर तब भगवान्।
कहत भये पुन तास को, निज सर्वातम ज्ञान॥१७३॥

श्रीकृष्ण-वचन हरिगीत छन्द

हे तात तुमरा कथन सब हम, योग्य सब विध जानिया।
हम सुतन को जो विषयकर तुम, तत्त्वग्राम बखानिया।
अविकारि व्यापक ब्रह्म चिद्घन, जिम हमें तुम जान हो।
तिम चर अचर अब विश्व को निज, सहित चिन्मय मान हो॥१७४॥

तुम एक स्वयं प्रकाश निर्गुण, आतमा को जानिये।
जगदीश जीव अभेद मत को, निगम मूलक मानिये।
निज रचित देह उपाधिगण में, ब्रह्म बहु विध भास है।
जिम सूर दर्पण सलिल में, बहु रूप होय प्रकास है॥१७५॥

नारद-वचन दोहा

सुन उपदेश मुकुन्द का, तजकर नाना बुद्धि।
जानत भा निज आतमा, एक अखंडित शुद्ध॥१७६॥

मृत तनूज को यादकर जनक देवकी मात।
बोली माधव राम को, स्त्रवत नयन जल जात॥१७७॥

देवकी-वचन हरिगीत छन्द

योगीश्वरेश्वर राम केशव, आद्य पुरुष विभो हरे।
भू भार रूप नरेश बध हित, कुक्षि मम तुम अवतरे।
निज अंशकर भव उदय पालन, करत तुम पुन हरत हो।
मैं शरण तुमरी शरण के सब, काम पूरण करत हो॥१७८॥

मृत तनय गुरुका लाय हो तुम, काल आलय जायके।
मम तनुज मारे दनुज नृपने, वैर तुमसे पायके।
सुत देखबे को चित्त अब मम, अर्थना यह जानिये।
तुम शक्त सब विध तात तिनको, पास हमरे आनिये॥१७९॥

नारद-वचन दोहा

जननी कर प्रेरित हुए, संकर्षण घनश्याम।
योग शक्ति कर गये तब, सुतल लोक बलि धाम॥१८०॥

निज नाथन को निरखकर, असुर राज हर्षाय।
सहित बंधु तत्काल तब, प्रभुपद सीस निवाय॥१८१॥

दिव्यासन तिनको दिया, धोये चरण सप्रीति।
पूजा कर कर जोरकर, बोला वचन विनीत॥१८२॥

बलि-वचन हरिगीत छन्द

श्रीराम चरण नमामि हम तव, कृष्ण केशव मम पते।
विज्ञान योग वितान ब्रह्मन्, सांख्य कर्त्ता सद्‌गते।

निज सत्त्व गुणमति मुनिन को, दुष्प्राप्य तुमरा दर्स है।
हम दनुज रज तम प्रकृति को किम, सुलभ तव पद पर्स है॥१८३॥

सब सुलभ भा अब तव कृपाकर, सुकृत नहि कुछ मैं किया।
को अमर मम सम आज जिसको, सदन में दर्शन दिया।
इदमित्थमिति तव योगमाया, योगिजन नहि जान हैं।
किस पर कृपा तव होत किम हम, असुर बुद्धि बखान हैं॥१८४॥

निरपेक्ष प्रिय पद कर कृपा तज, अन्धकूप स्वधाम को।
विचरूँ इकेला विपिन करहूँ, पर्णमय विश्राम को।
वन वृक्ष फलकर भैक्ष्य वृत्ती, शान्त निज मन को करूँ।
वा सर्व सौहृद सन्त से मिल, भूमि मंडल वीचरूँ॥१८५॥

हे सकल जीव निकाय स्वामी, दास को आज्ञा करो।
अपराध तव हम बहु करे अब, पाप हमरे परिहरो।
जो पुरुष श्रद्धा धार तव अनु, शासना स्वीकरत है।
सो भक्त तुमरा विधि निषेधहिं, वेद के परिहरत है॥१८६॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

सम्यक् निश्चित तव मति ताता। सर्व सत्य जो तुम व्याख्याता॥
अस विवेक विरतींद्रिय जोऊ। भवन विपिन सम तिसको दोऊ॥१८७॥

अजितेंद्रिय जन कानन माहीं। विषय वासना तजहै नाही॥
जो विरक्त विज्ञान विचारी। बंधित नहि सो राज्य मझारी॥१८८॥

मुनि मरीचि के षट् सुत हूए। द्रुहिण शापकर सो सब मूए॥
कनक कशिपु के भये कुमारा। देवकि उदर पुनर तनु धारा॥१८९॥

भोजराज ने शिशु सो मारे। अब सब वसहैं भवन तुमारे॥
ले जावेंगे हम अब तिनको। शोचत मात मान सुत जिनको॥१९०॥

जननी शोक निवार कुमारा। दुर्लभ पाय प्रसाद हमारा॥
अधुना शाप मोक्ष सो पाई। होंगे अमर त्रिविष्टप जाई॥१९१॥

नारद-वचन दोहा

बलि ने ते शिशु लायके, कृष्ण समर्पण कीन।
पुरी द्वारका जायके, जननी को तिन दीन॥१९२॥

हरि माया मोहित भयी, तिनको गोद बिठाय।
दुग्ध पिवाया प्रेम कर, हृदय परम सुखदाय॥१९३॥

केशव शेषामृत दुग्ध, कर तब पान कुमार।
माधव हस्त सपर्श से, दिव्य देह को धार॥१९४॥

मात पिता हरि राम के, कर पद पद्म प्रणाम।
सब लोकन के देखते, गये शक्र के धाम॥१९५॥

पुत्रागम निर्गमन पुन, देवक सुता निहार।
हर्ष शोक त्यागत भयी, हरि माया निर्धार॥१९६॥

नवाह्न-पारायण आठवाँ विश्राम॥८॥

अद्भुत रूप मुकुन्द के, अद्भुत चरित अनंत।
कह न सकत विधि शेष सब, कोटि कल्प पर्यंत॥१९७॥

बहुलाश्व-वचन चौपाई

तुम सम को कृपालु मुनिराया। जो प्रभु चरित पियूष पिवाया॥
ज्ञान विराग भक्तिकर साने। वचन सुनत नहिं चित्त अघाने॥१९८॥

हरि मिलने का मग हम जाना। हरि गुणगान श्रवण नहि आना॥
प्रभु गुण गात सुनत जो कोई। ज्ञान विराग पाव द्रुत सोई॥१९९॥

माधवगुण मिष ज्ञान बखाना। दिये प्रमाण युक्ति तुम नाना॥
मैं निज आतम शुद्ध स्वरूपा। जाना तव प्रसाद मुनि भूपा॥२००॥

अब मोको कुछ संशय नाही। एकातम मानूं सब माहीं॥
जो तुम अच्युत चरित उचारा। हरत एक सो चित्त हमारा॥२०१॥

यद्यपि हरिको आतम जानत। तदपि न मन धीरजता ठानत॥
पुरी द्वारका अब मैं जावूं। राम कृष्ण दर्शन कर आवूं॥२०२॥

स्वस्थ चित्त तब होगा मेरा। होवत हृदय हुलास घनेरा॥
नाथ आप जो करुणा कीनी। हरि चरित्र चिंतामणि दीनी॥२०३॥

तिसके सम कुछ प्रत्युपकारा। दीसत नहिं मैं बहुत निहारा॥
क्या करिये हम तुमरी सेवा। सब विधि तुम पूरण महिदेवा॥२०४॥

जिनके वचनामृत निधि पाई। तृण सम मोको राज्य दिखाई॥
और न कछु लायक हम स्वामी। तव पद पंकज युग्म नमामी॥२०५॥

नारद-वचन चौपाई

धन्य नृपाल विमल मति थारी। कृष्ण कथा जांको अति प्यारी॥
तत्त्वज्ञान पुन विषय विरक्ती। अच्युत चरणकमल में भक्ती॥२०६॥

शास्त्र सुनत जाको नहि होई। निष्फल श्रम जानो तुम सोई॥
होत परस्पर यह सहकारी। जिम सुतहित ऋतुक्षण नर नारी॥२०७॥

जहाँ एक का होत अभावा। तहाँ इतर नहि स्थिरता पावा॥
बिना भक्ति वैराग्य न पावत। बिन वैराग्य ज्ञान नहि आवत॥२०८॥

बिन विज्ञान न होत विरागा। नच सद्वस्तु विषे अनुरागा॥
कृष्ण कृपालु जास पर होई। यह त्रयमणि पावत जन सोई॥२०९॥

द्वारावति तुम जावो नाहीं। हरि आवेंगे तव गृह माहीं॥
द्विज श्रुतदेव कृष्ण अनुरागी। तुमरे नगर वसत बड़भागी॥२१०॥

बिन उद्यम जो गृह में आवत। तांको पत्नी युत सो खावत॥
सो बी अधिक न सादन धरहै। कर संतोष भजन नित करहै॥२११॥

नित प्रति याद करत जगदीश्वर। तुम दोनों को हे अवनीश्वर॥
व्यासादिक को लेकर साथा। आवेंगे तव पुर यदुनाथा॥२१२॥

इस मिष महाभाग द्विजराई। दर्शन देवेंगे गृह आई॥
हरिपुर जावोगे तुम जोई। संतन के नहि दर्शन होई॥२१३॥

गर्गाचार्य-वचन दोहा

या विध कहकर देव ऋषि, गावत गुण जगदीश।
गये यथेष्ट सुदेश में, वंदन कीन महीश॥२१४॥

सुनत सुनावत प्रेम से, जो कोई यह ताल।
बंधु मेल निज भक्ति धन, देवें तिसे गुपाल॥२१५॥

पैतृष्वस्त्रीय भक्ताय, स्वसारं स्वसृवत्सलः।
दास्यति श्रीपतिः किम्मे, श्रीदाम्ने च श्रियं ददौ॥२१६॥

इति श्रीमत्परमहंसोदासीनशिरोवतंसस्वामिकार्ष्णिज्ञानदास-शिष्येण स्वामिकार्ष्णिगोपालदासाह्वेन विनिर्मिते गोपाल-विलासे उत्तरविश्रामे श्रीदामसंगमकुरुक्षेत्रगमनादिवर्णनं नामाष्टादशस्तालः समाप्तः ॥१८॥

मास-पारायण सत्ताइसवाँ विश्राम॥२७॥

***

ॐ

श्रीवृन्दावनविहारिणे नमः।

अथ एकोनविंशस्तालः-१९

श्लोकः

योो गत्वा मिथिलापुरीं मुनिवरैर्व्यासादिभिः संयुतः
संवादैर्निजधर्ममोक्षविषयैरानन्दयद् दर्शनैः।
स्वं भक्तं श्रुतदेवमेव जनकं यस्याथ वेदैः कृतं
स्तोत्रं विश्वलयावसानसमये कृष्णाय तस्मै नमः॥१॥

गर्गाचार्य-वचन दोहा

व्यास कण्व मैत्रेय शुक, नारदादि मुनि साथ।
गये एक दिन बैठ रथ, मिथिलापुर यदुनाथ॥२॥

मारग में पुर ग्राम नर, करत भेंट हर्षात।
ग्रह युत रवि सम छबि निरख, पद में सीस नवात॥३॥

मुख सरोज मुसकान युत, कृष्ण सरोरुह नैन।
निज नयनन से पानकर, लेत नारि नर चैन॥४॥

हरि दर्शन कर नष्ट अघ, जनकी कर कल्यान।
दश दिगंत निज विशदयश, सुनत गये भगवान्॥५॥

निज पुर आये श्रवणकर, मिथिलापुर नर दार।
हर्षित उर उपहार धर, तिनको कीन जुहार॥६॥

जनकराज श्रुतदेव द्विज, कृष्ण कृपा अति जान।
कर प्रणाम हरि मुनि चरण, बोले कर सन्मान॥७॥

जनक-वचन चौपाई

देव देव खल गण अघ पावन। मुनियुत मम गृह करो सुहावन॥
बहुत दिवस मग देखूं थारे। आज भये गुरु भाग्य हमारे॥८॥

मो पर परम अनुग्रह कीना। जो प्रभु ने निज दर्शन दीना॥
तुमसे अधिक तुमारे संता। जिनके वश वर्तित भगवंता॥९॥

दुर्लभ योगीश्वर पद दर्शन। जो अनेक जनु कल्मष कर्षन॥
यह सब नाथ तुमारी करुणा। जो हम निरखे मुनिवर चरणा॥१०॥

तपसी तुमरे पद अनुरागी। निजानन्द पूरण भव त्यागी॥
अस मुनि जावत किसके धामा। बिन तव दया सजल घनश्यामा॥११॥

श्रुतदेव-वचन चौपाई

दीन बन्धु हरि करुणा करिये। पर्ण उटज पद पंकज धरिये॥
निष्किंचन प्रिय प्रभुकर नामा। पुन ब्रह्मण्य दया श्रीधामा॥१२॥

मैं गरीब कुछ लायक नाही। तव सेवा हित गृह कुछ नाही॥
मुनियुत धोकर पाद तुमारे। सफल होनगे जन्म हमारे॥१३॥

गर्गाचार्य-वचन दोहा

दोनों के प्रिय करण हित, उभय रूप प्रभु धार।
गये मुनिन युत सम समय, दोनों के आगार॥१४॥

जनक प्रेमकर हर्षयुत, क्षौमासन वर दीन।
चरण धोय जल शीश धर, पूजा बहु विध कीन॥१५॥

करवाये भोजन विविध, हृदय अनन्त प्रमोद।
बोला नृप कर जोर कर, प्रभुपद धर निज गोद॥१६॥

जनक-वचन हरिगीत छन्द

जय सर्व भूत निवास साक्षी, सर्व मय सर्वातमा।
आनन्द रूप अखंड पूरण, स्वप्रकाश चिदातमा।
मम भक्त के सम प्रेम नहिं, विधि शेष श्री निज देह में।
इस वचन को ऋत करण के हित, आय तुम मम गेह में॥१७॥

प्रभु देत तुम निज आतमा, निष्किंचनातम शरण को।
अस जान तुमको कौन मानव, भजन नहिं तव चरण को।
संसार सक्त पुमान के हित, वृष्णि कुल तुम तनु धरा।
त्रैलोक्य पाप विनाशकारी, विमल यश निज विस्तरा॥१८॥

सब मुनिन युत मम भवन में, कुछ दिवस पद पंकज धरो।
महिदेव निज पद पद्मरज कर, निमि कुलहिं पावन करो।

तव दर्स से नहिं तृप्त होवत, चित्त मम त्रिभुवन पते।
श्रीकृष्ण कल्मष हरण तव पद, नौमि मैं निज जन गते॥१९॥

गर्गाचार्य-वचन दोहा

जनक याचना श्रवण कर, द्विजन सहित भगवान।
कर निवास निज दर्स दे, नगर करा कल्यान॥२०॥

तैसे द्विज श्रुत देव बी, गृह में तिनको लाय।
पद धोवन निज सिर धरा, कुश आसन बैठाय॥२१॥

रोमांचित तनु हर्षकर, भूल गया सब काम।
प्रेम मग्न नाचन लगा, समुझाया पुन वाम॥२२॥

शीतल मधुरामृत सलिल, भैक्ष अन्न कुछ लाय।
बेर बिल्व आमल तथा, भोजन तिने कराय॥२३॥

भोजन कर बैठे जबी, यथा शक्ति कर सेव।
प्रभु पद पंकज परस कर, बोला द्विज श्रुतदेव॥२४॥

श्रुतदेव-वचन हरिगीत छन्द

नित दार सुत गृह अन्ध निर्जल, कूप में हम गिर रहे।
भव पूज्य ब्रह्म स्वरूप मुनिवर, सकल तीरथ मय कहे।
सुर मुनि अगम्य स्वरूप तुमरा, नाथ निगम बखान हैं।
किस पुण्य कर भा संग मोको, देव हम नहिं जान हैं॥२५॥

तव श्रवण अर्चन कीर्तनं पुन, वंदना जो करत हैं।
तुम प्रकट होवत हृदय तिनके, पाप जो परि हरत हैं।
पुन विविध कर्म विक्षिप्त मनको, दूर से तुम दूरि हैं।
मम दृष्टि गोचर होय सो तुम, भाग्य हमरे भूरि हैं॥२६॥

अध्यात्मवित् के आतमा तुम, मोक्ष सो जन पात है।
तनु आत्मवित् को काल हो तुम, नरक में सो जात है।
तुम वश्य राखत प्रकृति को, आवरण रहित तवातमा।
नित तोर माया वश्य वर्त्ती, जीव आवृत आतमा॥२७॥

यह भेद तुमसे जीव का, नहि वस्तु भेद उचारिया।
ते होय शुद्ध स्वरूप तव, आवरण जिनने टारिया।
जग जन्म मरण कलेश तब तक, दर्स तव जब नहि करे।
अब अस करो उपदेश भगवन्, प्रकृति निज जिम जन तरे॥२८॥

गर्गाचार्य-वचन सोरठा

प्रणतारति-हन् श्याम, वचन श्रवण कर विप्र के।
हँस बोले श्रीधाम, हस्त ग्रहण कर हस्त से॥२९॥

श्रीकृष्ण-वचन हरिगीत छन्द

मुनि कर कृपा तव भवन आये, संत क्षिति संचरत हैं।
हे विप्र निज पदरेणु कर, यह लोक पावन करत हैं।

सुर दान तप व्रत तीरथों, से संत सेवन श्रेष्ठ है।
सब प्राण धारी तनुन में, यह विप्र जन्म गरिष्ठ है॥३०॥

तप ब्रह्म विद्या युक्त द्विज को, सकल गुरु हम जान है।
यह श्याम सुन्दर देह मम नहिं, दयित विप्र समान है।
गुण दोष दृष्टी मन्द मति, अर्चादि उत्तम जानते।
गुरु रूप ब्रह्म स्वरूप द्विज, अपमान मानव ठानते॥३१॥

सब चर अचर इस विश्व को, मम रूप विप्र निहार हैं।
जग ऊच नीच विहार निज पर, भेद भाव निकार हैं।
हे ब्रह्म ब्रह्म ऋषीन को मम, भाव से पूजन करो।
नहिं इतर विध मम अर्चना यह, अर्हणोत्तम मम वरो॥३२॥

गर्गाचार्य-वचन दोहा

प्रभु वाणी को श्रवण कर, श्रुतदेवा तमवान।
ब्रह्मरूप लख विप्र सब, पूजे कर सन्मान॥३३॥

वेद वेद्य परब्रह्म का, तिनको कर उपदेश।
गये द्वारकापुरी में, मुनिन सहित विश्वेश॥३४॥

शौनक-वचन चौपाई

वेद विषय जो ब्रह्म बखाना। युक्ति विरुद्ध मुने हम जाना॥
त्रिविध वृत्तिकर शब्द प्रवृत्ती। शक्ति लक्षणा गौणी वृत्ती॥३५॥

शक्तिवृत्ति युगविध द्विज जानो। रूढ़ी योगा नाम बखानो॥
रूढ़ी त्रिविध बखानत वेदा। गुण व्यक्ती जाती कर भेदा॥३६॥
क्रम कर त्रिविध जानिये सोई। शुक्ल डित्थ गो आदिक होई॥
प्रकृति प्रत्ययारथ युत जोऊ। योगा वृत्ति मानिये सोऊ॥३७॥
पाचक पंकज आदिक जैसे। त्रिविध लक्षणा सुनिये तैसे॥
जहत् एक पुन अजहत् मानी। जहत् अजहत् तीसरी ठानी॥३८॥
जहत् सर्व स्वारथ तज देवे। निज तट शक्य अर्थ को लेवे॥
निज विशेष्य अजहत् ग्रहलेवत। शक्य अर्थ ग्रह बिन नहि देवत॥३९॥
तीजी ग्रहण त्याग करवावत। अब इनके दृष्टांत सुनावत॥
जहत् *'सरिति नगरी'* में जानो। *'शोणो धावति'* अजहत् मानो॥४०॥
जहत् अजहत् लक्षणा जोई। 'सोयं देव सुहृद्' में होई॥
उक्त अर्थ लक्षित गुणवान। ताही में द्विज गौणी जान॥४१॥
सिंहो देव सखा जिम भाखें। तामें गुण नृशंसता राखें॥
इनका ब्रह्म विषय नहि जैसे। विद्वन् अब मैं भाखूं तैसे॥४२॥
ब्रह्म जाति गुण व्यक्ति न होई। संज्ञा संज्ञी भेद न कोई॥
चित् अवाच्य पद वेद बखाना। रूढि विषय इस हेत न माना॥४३॥
कारज कारण आदि ने जामें। योगा वृत्ति बने नहि तामें॥
एक असंगी विभुचित् जोई। जहत् विषय नहि होवत सोई॥४४॥
न विशेष्य विशेषण चेतन माहीं। निर्विशेष्य में अजहत् नाहीं॥
ब्रह्म निरंश उपाधि न जामें। जहत् अजहत् बने नहि तामें॥४५॥

अगुण अनुपम असादृश जोऊ। गौणी वृत्ति विषय नहि सोऊ॥
त्रिगुणवृत्ति श्रुतिशब्द दिखावत। अस प्रभुको किस विध दर्सावत॥४६॥

गर्गाचार्य-वचन चौपाई

मायिक गुण वर्जित अविकारा। सदानंदमय सर्वाधारा॥
बुद्धि गिरा अविषय जो माना। निर उपाधि चिन्मात्र बखाना॥४७॥
दाहशक्ति जिमि शिखि में मानी। भिन्न अभिन्न न जात बखानी॥
तैसे माया शक्ती जोई। भिन्ना भिन्न न कहिये कोई॥४८॥
गुण विभाग जामें कछु नाहीं। रहित सदा सो चेतन माहीं॥
जब चेतन की इच्छा आवत। त्रिगुण प्रकृति को तब उपजावत॥४९॥
तिस उपाधि को जब प्रभु वरहैं। उत्पति पालनादि सब करहैं॥
पर तिसके आधीन न होई। निज स्वरूप में स्थित नित सोई॥५०॥
जिम वारिद रवि तेज न हरहैं। पद्म पत्र जल पर्स न करहैं॥
मायावी की माया जोई। निज पति को नहि मोहत सोई॥५१॥
सो सर्वज्ञ चिदानंद स्वामी। सर्व शक्ति सर्वान्तरयामी॥
कल्पित गुण उपाधि जब पावत। तब श्रुति तिसका ज्ञान करावत॥५२॥
नेति नेति कर प्रभु को गावे। सब निषेध अवधी बतलावे॥
अथवा जीव मोक्ष के कारण। तांको ब्रह्मभाव निर्धारण॥५३॥
जहत् अजहत् लक्षणा करके। द्विविध उपाधि संग परिहरके॥
एकातम का ज्ञान करावत। इसविध वेद्य ब्रह्मश्रुति गावत॥५४॥

शौनक-वचन चौपाई

कौन वाक्य में द्विजवर ज्ञानी। जहत् अजहत् लक्षणा मानी॥
इतर लक्षणा किम नहि होई। समुझावो मोको प्रभु सोई॥५५॥

गर्गाचार्य-वचन चौपाई

वाक्य 'तत्त्वमसि' त्रय पद जानो। ततूपद वाच्य महेश्वर मानो॥
त्वंपद अर्थ जीव को भाखत। असि-पद युग्म एकता राखत॥५६॥

कलश कुंभ एकारथ प्रापक। या विध यह न एकता ज्ञापक॥
वैश्वदेवि आमिक्षा जैसे। सम अधिकरण भाव नहि तैसे॥५७॥

तत्त्वं पद युग श्रुति में जोई। भिन्न-भिन्न के वाचक सोई॥
जैसे कंज नील पद माहीं। तथा विशेष्य विशेषण नाहीं॥५८॥

यदा विशेष्य विशेषण माने। तो याविध मुनि हानि बखाने॥
जीव धर्म ईश्वर में जावें। ईश्वर धर्म जीव में आवें॥५९॥

इस विधि अजहत् संभव नाहीं। होत उपाधि ग्रहणता माहीं॥
जहत् लक्षणा करिये जोई। शक्य अर्थ तब तजना होई॥६०॥

चेतन भिन्न अचेतन माहीं। परमारथ कुछ प्रापित नाहीं॥
जहत् अजहत् लक्षणा जोऊ। वाक्य *'तत्त्वमसि'* श्रुति में सोऊ॥६१॥

सविकारी में इच्छा होई। याविध शंका कर हैं कोई॥
इच्छा कर विकार जो मानत। बिन इच्छा जड़ क्यों नहिं जानत॥६२॥

इच्छा जहाँ न देत दिखाई। तहाँ तहाँ जड़ता हम पाई॥
जीव विषे इच्छा दर्सावत। चेतनता बी तिसमें पावत॥६३॥

घट पट में इच्छा नहिं होवत। तिनकी जड़ता सब जन जोवत॥
दोष रूप जीवेच्छा होई। जो पूरण नहि होवत कोई॥६४॥

सत्संकल्पक ब्रह्म बखाना। तांकी इच्छा में क्या हाना॥
करत चिदिच्छा का जो लोपा। वेद सूत्र का तिस पर कोपा॥६५॥

बिन इच्छा किस सृष्टि बनाई। तिस बिन जग कुछ कृत न दिखाई॥
शबल विषे सो इच्छा मानी। शुद्ध मांहि नहिं मानत ज्ञानी॥६६॥

इच्छा बिन शुध चेतन होई। इसमें युक्ति प्रमाण न कोई॥
जब लग होत न मोक्ष तुमारा। तब लग शबलाधीन विहारा॥६७॥

जब ज्ञानी जन मुक्ती पावत। शबल उलंघन कर नहि जावत॥
बिना उपाधि गमन नहि होई। सहित उपाधि मुक्ति नहि कोई॥६८॥

ज्ञानी के असु कहूँ न जावत। यहाँ होत लय वेद बतावत॥
भोग मोक्ष तव शबलाधीना। शुद्ध ब्रह्म से तुम क्या लीना॥६९॥

ईशोपाधि नित्य तुम मानी। तदाऽद्वैत की होगी हानी॥
यदी अनित्य शबल किस कीना। वेद बाह्य मत तोर नवीना॥७०॥

कहुँ कुतर्क की स्थिति नहि होई। ताते सुनो प्रकृत अब सोई॥
शौनक प्रश्न जौन तुम कीना। यथा योग्य उत्तर हम दीना॥७१॥

इसमें कहूँ एक इतिहासा। जिसकर तव संशय कर नासा॥
नर नारायण दर्शन हेता। नारद गये कलाप निकेता॥७२॥

हमसे पूछा तुमने जोई। नारद प्रश्न कीन तव सोई॥
नारायण ने भाखा जैसे। कहूँ विप्रवर तुमको तैसे॥७३॥

श्रीनारायण-वचन चौपाई

ब्रह्म सत्र जन लोक मझारी। करत भये सनकादिक चारी॥
जब तुम श्वेत द्वीप में गयए। सो संवाद सुनत नहिं भयए॥७४॥

हमसे प्रश्न कीन तुम जोई। यही प्रश्न तब तिन में होई॥
यद्यपि सम तव विद्या सारे। निस्संशय सब ब्रह्म विचारे॥७५॥

तदपि एक को वक्ता माना। तिसने कीना श्रुति व्याख्याना॥
मुने जान आगम की रीती। श्रोता भये इतर सह प्रीती॥७६॥

सनन्दन-वचन चौपाई

राज्य काज कर जिम दिन राजा। शयन करत निश तज सब काजा॥
प्रातः काल वन्दि समुदाया। स्तवन विविध कर भूप उठाया॥७७॥

पूरववत् सो करत विहारा। पुन निश सोवत राजकुमारा॥
सर्व नियंता ईश्वर जोई। सकल जगत् लय कर तिम सोई॥७८॥

स्थित होवत निज महिमा माही। निर उपाधि प्राकृत कुछ नाहीं॥
सृष्टि काल पुन जान अनंता। भव सृजना चाहित भगवंता॥७९॥

इच्छा प्रथम करत विभु जबहीं। वेद श्वास मय होवत तबहीं॥
हरिका स्तवन करत श्रुति सोई। सुनकर सृष्टि प्रवृत प्रभु होई॥८०॥

वेद-स्तुति सवैया

जय देव निजातम रूप महा, महिमा अमिता परिछिन्न तुमारो।
सुख छादक जो दुख दायक हैं, इन जीवन का अविबोध निवारो।
तुमरी करुणा बिन दीनन का, नहि और कछू तप ज्ञान सहारो।
तव सृष्टि विहार समे हमने, इनको तुमरा बहु बोध उचारो॥८१॥

बहु देव समर्चन भाखत जो हम, सो सब पूजन रावर जाने।
महि से भिन होत न मानव सो, द्रुम मन्दिर भूभृत में पद ठाने।
सबका उदयास्त भया तुमसे, क्षितिसे घट आदिक के सम माने।
नहि कारज कारण से भिन है, पर कारण को अविकार बखाने॥८२॥

सब लोक मलौघ विनाशक जो, तव शुद्ध यशोऽमृत सिंधु मझारे।
कर मज्जन पंडित भक्त क़वी, जनमांतर के दुख दूष्कृत डारे।
तव पाद उपासक जावत हैं, सुख रूप निरंतर धाम तुमारे।
तव आतम ज्ञान प्रचंड रवी, जनिमृत्यु महाभय मोह प्रजारे॥८३॥

सब अन्न मयादिक कोसन से, पर आश्रय सत्य स्वरूप तुमारा।
तनु पीन उपाधि निषेध किये, पर जोउ निषेधित शेष उचारा।
जिसकी करुणा कर लोक रचे, सुर जीवन ने तनु मानव धारा।
दृति के सम श्वास वृथा तिसका, जिसने तुमरा न स्वरूप निहारा॥८४॥

मणि पूरक चक्रविषे तुमको, जन पीवर ईक्षण ध्यावत हैं।
पुन कोठ हृदंबुज में तुमरे, तनु रूप विषे मन लावत हैं।

धमनी मग से पुन सीस विषे, मुनिराज समाधि लगावत हैं।
तव धाम अनामय पाय पुना, जिससे जग लौट न आवत हैं॥८५॥

निज निर्मित योनि अनेकन में, बहु रूप चिदातम दृष्टि परे।
बहु ईंधन में जिम एक शिखी, उरु अल्प प्रकार प्रकाश करे।
सब योनि मृषा गुण नाग यथा, तुम सत्य अखंड विभू उचरे।
निषकिंचन शुद्धमती जन जो, तुमरा अस रूप निजात्मवरे॥८६॥

जन कोविद दैहिक आतम को, तव अंश स्वरूप बखानत हैं।
पुन कारज कारण काय विषे, तिसको नहि आवृत मानत हैं।
भव मोक्ष प्रदायक जान तुमें,. तव पाद उपासन ठानत हैं।
निज कर्म कृतातम बंधन से, अनथा नहि मुक्ति विजानत हैं॥८७॥

दुर बोध निजातम ज्ञापन के, हित देव अलौकिक देह धरे।
अवतार चरित्र सुधा जलधी, अवगाहिन से श्रम दूर करे।
मुनि केचन मोक्ष न चाहित हैं, पुन इन्द्र पदादिक कौन वरे।
तुमरे पद पंकज हंसन की, कर संगति गेह कुसंग हरे॥८८॥

किरीट छन्द

ईश अराधन योग्य अरोग, सदा अनुकूल तनू प्रिय पावत।
आतम मित्र गुरू हितकारक, ईश्वर का नहिं जो पद ध्यावत।
संहननादिक लालन पालन, से नर आतम घाति कहावत।
दुष्ट मनोरथ मूढ़ करे, कुशरीर धरे पुन रौरव जावत॥८९॥

इन्द्रिय प्राण प्रसंयम से, दृढ़ योग करें जिसको मुनि ध्यावत।
जो निगमान्त विचार करें, सम बुद्धि सुविज्ञ महा पद जावत।
ध्यान प्रसाद अरी जनबी, क्रम से तव धाम स्वरूप समावत।
रूप मनोहर सक्त मती तव, योषित बी तिनकी गति पावत॥९०॥

विश्व समग्र सदा लय होवत, शेष रहे नहिं कारज कारण।
इन्द्रिय प्राण न शास्त्र रहें किम, जीव करे तव तत्त्व विचारण।
सृष्टि भये विधि होत पुनः सुर, मानव दानव गो हय वारण।
पूरव सिद्ध स्वतः तुमको, अबका किम देहि करे निरधारण॥९१॥

घनाक्षरी छन्द

मिथ्या विश्व उतपन्न, होत कहे कोई जन,
जीव विषे ब्रह्म भाव, जन्य कोऊ जाने हैं।
एक विंश दुःख हान, करें मोक्ष का बखान,
एक शुद्ध ब्रह्म विषे, भेद को बखाने हैं।
पुण्य पाप फल जोई, ताँको सत्य भाखें कोई,
निज मति भ्रम कर, सब वाद ठाने हैं।
बोध रूप माया पर, तुमरे अज्ञान कर,
त्रिगुण स्वरूप जीव जान भेद माने हैं॥९२॥

जीव ईश भेद जग, त्रिगुण स्वरूप सब,
तुमरे स्वरूप विषे सत्य सम भासे है।

आतम विज्ञानी जोई, ब्रह्मरूप जाने सोई,
कारण की सत्ताकर कारज विकासे है।
कनक विकार हार, कुण्डल कीरीट थार,
सब विषे सम जिम, हाटक प्रकासे है।
जिन कृत विश्व विषे पूरण स्वरूप ब्रह्म,
सत्य सुख रूप तुम, भव सब नासे है॥१३॥

मत्तगयन्द छन्द

प्रीति करे तुमरे पद जो जन, पूरण जान स्वरूप तुमारा।
सो यम के सिर पाद धरे सुख, साथ तरे भव सिंधु अपारा।
गोत्र समेत निजातम को पुन, पूत करे तव दास उदारा।
भक्ति विहीन कुपंडित को तुम, बाँधत सो पशु होत हमारा॥१४॥

इन्द्रिय शून्य स्वयंद्युति की, सकलेंद्रिय में सब शक्ति उचारी।
लोकन से उपधा ग्रह के विधि, आदि करें उपहार तुमारी।
प्राकृत वासव आदि सबी, अधिकार करें तुमरा भय धारी।
खण्ड धरित्रिपती अखिलावनि, नायक के जिम आयसुकारी॥१५॥

व्योम समान असंग अजापर, वृत्ति अगोचर शून्य समाना।
स्वीय अस्वीय न जास विषे, लयकाल प्रभू चितिमात्र बखाना।
ईक्षण मात्र अजा त्रिगुणातम, साथ विहार जबी तुम ठाना।
स्वीय अदृष्ट निमित्त लिये तब, होवत स्थावर जंगम नाना॥१६॥

वास्तव से यह जीव अनेक, विभू पुन नित्य कहें इम कोई।
एक शरीर विषे सब ही सम, तौ तनु प्रेरक सिद्ध न होई।
एक विभु प्रति देह विषे मति, काय नियामक हो तुम जोई।
सो तुम ज्ञेय न जो जन भाखत, जानत मैं नहि जानत सोई॥९७॥

कुन्दलता छन्द

प्रकृती पुन पूरुष की न जनी, युग को अज आतम वेद बतावत।
युग योग चराचर होत यथा, जल मारुत बुद-बुद को उपजावत।
मधु में रस ज्यों लय स्वाप विषे, जग जीव सबी तुममें लय पावत।
जल में जिम बिंदु विमोक्ष समे, पुन शुद्ध विषे निरुपाधि समावत॥९८॥

तुमरे अविबोध करे भ्रम से, जन जन्म पुनः पुन संसृति लेवत।
इम जान हृदे मतिमान सदा, भव भंजक ईश्वर के पद सेवत।
तुमरी शरणागत पूरुष के, भव भीति कबी न समीप गमेवत।
भ्रकुटी तव काल कराल महा, प्रभु वेमुख को नित साध्वस देवत॥९९॥

वश कीन हृषीक असू जिनने, पर चित्त तुरंग स्वतन्त्र प्रधावत।
तिसके वश हेत उपाय रचे, गुरु युक्ति बिना वश में नहि आवत।
मन के हित खेद अनेक सहें, गुरु की शरणी जन जो नहि जावत।
बिन नाविक वाणिज के समसो, जन संसृति सागर में दुख पावत॥१००॥

सुखरूप निजातम सत्य विभू, तुमको जन जोउ यथावत जानत।
सुत मंदिर बांधव देह बधू, धन को कुछ सो उपयोगि न मानत।

निज आतम को नहि जानत जो, इनमें सुख के हित सो रति ठानत।
मुद पाय नहीं भव भोगन को, दुखदायक नश्वर वेद बखानत॥१०१॥

मालती छन्द

मान मदादिक वर्जित जो, जिनके पद का जल पाप हरे है।
आतम नित्य सुखांबुधि में तव, पाद विषे क्षण चित्त धरे है।
धीरज बुद्धि विवेक विनाशक, योषित आदिक को न वरे है।
उत्तम तीरथ संत कुटी गुरु, आश्रम में मुनि वास करे है॥१०२॥

सत्य चिदातम से भव होवत, सत्य स्वरूप कहें जन कोई।
युक्ति विरुद्ध बखानत सो, गुण से पवनाशन क्या नहिं होई।
लोक विहार चले भ्रम से, सब अंध परंपर प्रापित सोई।
कंर्मठ को तव वाक भ्रमावत, कर्म फलामृत बोधक जोई॥१०३॥

मदिरा छन्द

विश्व सबी नहि आदि भया, न भविष्यत में कुछ होत हरे।
एक रसातम आप विषे, क्षण मध्य मृषा यह दृष्टि परे।
शस्त्रक हाटक कारण में, असि कुण्डल की समता स्वधरे।
विश्वमनोमय सत्य नही, कुछ मूढ़ मती अमृषा उचरे॥१०४॥

बोध बिना प्रकृती कर मोहित, सो तनु को निज रूप वरे।
प्रच्युत चेतन धर्मन से, जड़ कर्मन से पुन जन्म मरे।

नाग त्वचा सम देव अजा, तुमने गुण मायिक त्याग करे।
दिव्य अनंत महा महिमा, निज आतम वैभव नाथ धरे॥१०५॥

काम जटा न उखारत जो यति, भोगन को उर ध्यावत है।
विस्मृत कंठ मणी सम दुर्मति, सो तुमको नहि पावत है।
लोक उभे दुख भोगत भोगन, कारण द्रव्य कमावत है।
आतम ज्ञान बिना तिसको तव, काल स्वरूप चबावत है॥१०६॥

हरिगीतिका छन्द

जन ब्रह्मज्ञानी लोकबानी, विधि निषेध न मान हैं।
प्रभु दत्त सुख दुख कर्म फल को, धर्म निज नहि जान हैं।
गुरु परम पर उपदेश मगकर, श्रवण तव सो करत हैं।
अपवर्ग गति तव पाय कर, संसार दुख परि हरत हैं॥१०७॥

हे प्रकृतिनाथ अनन्त तव ब्रह्मादि अन्त न पात हैं।
सावरण बहु ब्रह्माण्ड तुमरे उदर मांहि भ्रमात हैं।
जिम पवन कर नभ धरणि कण इम निगम तुमको गाव हैं।
सब अनृत् जगत् निषेधकर अवसान तुममें पाव हैं॥१०८॥

श्रीनारायण-वचन दोहा

या विध सुन विज्ञान को, ब्रह्म पुत्र मति मान।
पूजत भये सुनन्दनहिं, निज आतम गति जान॥१०९॥

सर्व वेद का सार यह, विध सुत उद्धृत कीन।
विचर धरणि में ब्रह्म सुत, ब्रह्म तत्त्व को चीन॥११०॥

यह ब्राह्मी उपनिषद है, नास करत सब काम।
श्रद्धा कर उर धरत जो, सो पावत पर धाम॥१११॥

पूरव पूरव मुनिन ने, इसको धारण कीन।
गलित देह अभिमान सो, भये ब्रह्म में लीन॥११२॥

गर्गाचार्य-वचन दोहा

नारायण उपदेश सुन, निज कृत कृत्य निहार।
व्यासाश्रम नारद गये, कर हरि चरण जुहार॥११३॥

शौनक हम वर्णन करा, तोर प्रश्न अनुसार।
वेद वैद्य इम ब्रह्म है, सो तुम उर निर्धार॥११४॥

श्रद्धा कर जो ताल यह, सुनत कर्ण मन लाय।
ब्रह्म तत्त्व को जानकर, परम गती सो पाय॥११५॥

कवि-वचन मत्तगयन्द छन्द

जो भव का उतप्रेक्षक व्यापक, मध्य लयादि विषे प्रभु जोई।
ईश्वर जीव स्वरूप धरे जिस, से यह मायिक संसृति होई।

जोउ नियामक जानत जो सब, को तिसको नहि जानत कोई।
पाय जिसे जन पाव नहिं तनु, होय गती मम अच्युत सोई॥११६॥
शुकशंकरतोटकमस्करिभिर्विनतो विमतः श्रुतिवाद-कुले।
उरगादिधियां गुण एव यथा भवतु स्वयमेव स मे विषयः॥११७॥

मास-पारायण अट्ठाईसवाँ विश्राम॥ २८॥

पाक्षिक पारायण चौदहवाँ विश्राम॥१४॥

इति श्रीमत्परमहंसोदासीनशिरोवतंसस्वामिकार्ष्णिज्ञानदास-शिष्येण स्वामिकार्ष्णिगोपालदासाह्वेन विनिर्मिते गोपाल-विलासे उत्तरविश्रामे भगवज्जनकपुरगमनागमनवेदस्तुतिवर्णनं नामैकोनविंशस्तालः समाप्तः

ॐ

श्रीवृन्दावनविहारिणे नमः

अथ विंशस्तालः—२०

श्लोकः

श्रीभूम्नः सदनाद् दशद्विजसुतान् यः सार्जुनश्चानयद्
विज्ञानं स्वजनोद्धवे स्वविषयं यः स्थापयित्वा ततः।
वंशं शापमिषेण विप्रविदुषां स्वं घातयित्वा मिथः
स्वीयं धाम जगाम साग्रज इतः कृष्णाय तस्मै नमः॥१॥

शौनक-वचन दोहा

वेद वेद्य परब्रह्म में, मम संशय भा छीन।
कहो चरित अब कृष्ण के, आगे क्या प्रभु कीन॥२॥

गर्गाचार्य-वचन दोहा

एक दिवस द्वारावती, द्विज का भया कुमार।
विप्र जन्म से सो मरा, महि में पद को धार॥३॥

द्विज मृत सुत को साथ ले, भूप सभा में जाय।
द्वार पुत्र धर रुदन कर, या विध वचन सुनाय॥४॥

विप्र-वचप चौपाई

विषयासक्त लुब्ध नृप हूआ। जिसके दोष तनुज मम मूआ॥
हिंसक अजितेन्द्रिय नृप जोई। दुष्टशील शठमति द्विजद्रोही॥५॥
वसत प्रजा जो तिसके देशा। होत दरिद्री पाव कलेशा।
अस स्वभाव यदुकुल पति धारे। कैसे जीवें तनय हमारे॥६॥

गर्गाचार्य-वचन दोहा

या विध तिस महिदेव के, मरे बाल नव वार।
यही कथा द्विज भाखके, तजे तनुज नृप द्वार॥७॥
चरम वार द्विज के वचन, दुखमय सुन हरि तीर।
ब्राह्मण को तब धीर दे, बोला अर्जुन वीर॥८॥

अर्जुन-वचन चौपाई

ब्राह्मण क्या तव पुरी मँझारी। नहि कोई क्षत्रिय धनुधारी॥
यह यादव सब विप्र समाना। भये एकठे ऋत्विज नाना॥९॥
धन दारा सुत विरह कलेशा। पाव विप्र जिस नृप के देशा॥
भूप वेष क्षत्रिय सो धर है। नट सम देह जीव का कर है॥१०॥
तुम दंपति अति भये दुखारे। राखूंगा मैं तनय तुमारे॥
करूँ प्रतिज्ञा निज नहि जबही। अनल प्रवेश करूँगा तबही॥११॥

विप्र-वचन चौपाई

राम कृष्ण शंबर दनुजारी। पुन अनिरुद्ध महाधनुधारी॥
तथा इतर यादव बलवारे। करत न रक्षा जिसकी सारे॥१२॥
जगदीश्वर कर दुष्कर जोई। तू किम कर्म करेगा सोई॥
यह सब तुमरी मूरखताई। मम मन में श्रद्धा नहि आई॥१३॥

अर्जुन-वचन चौपाई

नहि मैं मन्मथ राम मुरारी। मैं गांडीव चाप कर धारी॥
मत तू कर अपमान हमारा। अर्जुन विदित धरा बलवारा॥१४॥
मम बल को शंकर ने चीना। संयुग कर शिव तोषण कीना॥
काल जीत रण तनय तुमारे। लावूंगा ऋत वचन हमारे॥१५॥

गर्गाचार्य-वचन दोहा

कर निश्चय तिसका वचन, गया विप्र निज द्वार।
पुन प्रसूत के दिवस में, बोला पांडु कुमार॥१६॥
दिव्य अस्त्र को याद कर, हस्त चाप ग्रह लीन।
दश दिश में द्विज सदन के, शर पंजर तिस कीन॥१७॥
विप्र वधू के उदर से, उत्पन भया कुमार।
रुदन करत तनु सहित तब, लोप भया सो बार॥१८॥
संकर्षण केशव सुनत, ब्राह्मण अति दुख पाय।
अर्जुन की निन्दा करी, बोला तिसे सुनाय॥१९॥

विप्र-वचन चौपाई

मोसम कौन मूढ़ जन प्रानी। क्लीब वाक जिस ऋत् कर मानी॥
धिक् धिक् पांडव का सरचापा। धिक् अर्जुन जो करत प्रलापा॥२०॥
जिसको दैव कठिन मति मारे। तिसको कौन जगत् रखवारे॥
इस भुजबल रण जयकर कालहिं। दुर्मति लावेगा मम बालहिं॥२१॥

गर्गाचार्य-वचन दोहा

निज निन्दा को श्रवण कर, गांडीवी तत्काल।
संयमनी में तब गया, तहाँ न पाया बाल॥२२॥

इन्द्र वरुण धनदादि सुर, लोक पाल आगार।
गया रसातल लोक में, पाया नहि द्विज बार॥२३॥

शिखि प्रवेश करने लगा, मृषा वचन निज मान।
गांडीवी को धीर दे, रोकत भा भगवान॥२४॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

मत करिये निज आतम घाता। तुमें दिखावूं द्विज सुत ताता॥
निन्दा करत हमारी जोई। कीरति विमल करेंगे सोई॥२५॥

गर्गाचार्य-वचन दोहा

अर्जुन को ले साथ तब, बैठ गरुड़ ध्वज यान।
सप्त द्वीप सागर गिरी, निकस गये भगवान॥२६॥

लोकालोक महीध्र को, लंघन कर तम जाय।
सुग्रीवादिक तुरग को, पंथ न तब दर्साय॥२७॥

प्रभु की आज्ञा पायकर, चक्र सुदर्शन आय।
मग में करा प्रकाश तब, चले अश्व सुख पाय॥२८॥

अर्जुन मूँदे नयन पुन, आगे तेज निहार।
कारणारणव देखिया, जहिं ब्रह्मांड अपार॥२९॥

तामें मणिमय सदन है, अद्भुत तेज महान्।
तहाँ शेष उत्संग में, स्थित भूमा भगवान॥३०॥

रत्न मुकुट कौशेय पट, चारु चतुर्भुज श्याम।
निज स्वरूप के पद करा, पांडव कृष्ण प्रणाम॥३१॥

निरख कृष्ण को हर्ष युत, भा भूमा भगवान।
मधुर गिरा गम्भीर प्रभु, बोले कर सन्मान॥३२॥

श्रीभूमा-वचन चौपाई

भगवन् दर्शन हेत तुमारे। द्विज सुत लाये दूत हमारे॥
नर नारायण तुम युग भ्राता। मम स्वरूप निज जन द्विजत्राता॥३३॥
धरणी भार उतारण कारण। निज इच्छा कर तव तनु धारण॥
पूरण काम भये अब थारे। आवो सपदि समीप हमारे॥३४॥

गर्गाचार्य-वचन दोहा

आगू कर प्रभु के वचन, द्विज सुत दश ले साथ।
हर्षित मन अर्जुन सहित, गृह आये यदुनाथ॥३५॥

दिये पुत्र तब विप्र को, सुन सब जन हर्षाय।
प्रभु प्रताप को निरख कर, अर्जुन विस्मय पाय॥३६॥

जो कुछ पौरुष नरन में, कृष्ण कृपा सो जान।
तज अभिमान मदादि को, प्रभु पद वन्दन ठान॥३७॥

शौनक इत्यादिक चरित, कीने बहु भगवान।
हयमेधादिक याग बहु, दीने वांछित दान॥३८॥

सुखी करे सब प्रजा जन, नाक निवास समान।
विविध भोग बरसाय के, हरि यश भया महान॥३९॥

निज भुज बल रक्षित यदू, कुल कर वसुधा भार।
भूपति पृतना मार कर, कीना कृष्ण विचार॥४०॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

भूतल भार रूप नृप जोही। मारे असुर धर्म द्विज द्रोही॥
तदपि न भूकर भार उतारा। जो महि में यदुवंश हमारा॥४१॥

इसको मार सकत नहि कोई। मम बलकर यह उन्नत होई॥
निजकर पोषण कीना जाका। स्वयं मारणा योग्य न ताका॥४२॥

यह अविसह्य मरे नहि जोऊ। दुख लेंगे इनसे सब कोऊ॥
श्रीमद अन्ध भये यह सारे। द्विज गुरु बंधु दुखी न निहारे॥४३॥

वंश गहन निज दहन जरावे। तिम यदु वंश कलह उपजावे॥
दाह करेगा इसको सोई। तब निज धाम गमन मम होई॥४४॥

गर्गाचार्य-वचन दोहा

केशव सत्संकल्प तब, मख हित विप्र बुलाय।
दुर्वासा भृगु अंगरा, नारदादि ऋषि आय॥४५॥
विप्र शाप को कलह का, कारण लख भगवान।
शाप हेतु पुन जानकर, विप्र संत अपमान॥४६॥
हरि प्रेरे यादव तनय, गये मुनिन के पास।
पिंडारक तीरथ विषे, करन हेत उपहास॥४७॥
युवति वेष कर सांब का, कर तनु विविध शृंगार।
हृदय कुटिल ऊपर विनय, बोले वचन कुमार॥४८॥

यदुकुमार-वचन चौपाई

तुम त्रिकाल दर्शी सब जानत। ललना सन्मुख लज्जा मानत॥
प्रसव समय इसका अब आया। यह पूछत तुमको मुनिराया॥४९॥
तुम सब मिलकर करो विचारी। क्या उत्पन्न करेगी नारी॥
सुत होगा वा कन्या होई। सत्य सत्य भाखो प्रभु सोई॥५०॥

गर्गाचार्य-वचन दोहा

हरि कर प्रेरे विप्र सो, तिनका लख उपहास।
बोले वचन सकोप तब, यदुकुल जाकर नास॥५१॥

विप्र-वचन चौपाई

मंद मनीषा भयी तुमारी। विप्रन से जो हांसि उचारी॥
इसके मूसल उत्पन होई। नाश करेगा यदुकुल जोई॥५२॥

गर्गाचार्य-वचन दोहा

शाप श्रवण कर द्विजन का, भय युत भये कुमार।
उदर खोल कर देखिया, मूसल लोहाकार॥५३॥
गये गेह तिसके सहित, त्रासा गुरुन का मान।
विह्वल होकर सभा में, नृप से करा बखान॥५४॥
जान अमिट द्विज वचन को, सब पुरने भय पाय।
नृप चूरन कर मुसल को, सागर में पटकाय॥५५॥
चूरण सोउ तरंग कर, वारिधि तट में लाग।
भये एरका तृण सकल, जनु कृपाण का बाग॥५६॥
काल रूप हरि हर्ष युत, भये वंश क्षय जान।
शाप निवारण नहि करा, यदपि शक्त भगवान्॥५७॥
अथ विधि सनकादिक प्रजा, पति रुद्रादिक साथ।
पितर प्रभाकर अप्सरा, साध्यदेव सुरनाथ॥५८॥
श्रीपति के पद वंदना, करी द्वारिका जाय।
नाक कुसुम के हार बहु, प्रभु के गल पहराय॥५९॥

सकल लोक मल हरण यश, जिस तनुकर विस्तार।
मदन मनोहर वदन को, इस टक रहे निहार॥६०॥
प्रभु के दर्स सपर्श से, जन्म सफल निज मान।
चित्र पदारथ वचन कर, कीना स्तवन महान्॥६१॥

देवता-वचन हरिगीत छन्द

मन वचन काय प्रणाम प्रभु पद, पद्म में हम करत हैं।
जिनको मुमुक्षू ध्येयता कर, हृदय पंकज धरत हैं।
गुरु त्रिगुणमय निज प्रकृति कर, इस जगत् को तुम करत हो।
अवितर्क्य भवको पालकर पुन, प्रलय में प्रभु हरत हो॥६२॥

इन कर्मकर कुछ लेप नहिं तव, आतमा अव्यवहित है।
हे पर अजित स्वस्वरूप में स्थित, रागकर तुम रहित है।
तप होम विद्या दान कर मन, शुद्ध होवत नहि तथा।
उर धार श्रद्धा विमल यश तव, श्रवण करणे कर यथा॥६३॥

तव चरण हृदय कुवासना मम, अनल सम भर्जन करे।
जो मोक्ष हित भव विरति मुनिने, प्रेम कर निज उर धरे।
तव सम विभूती हेत जिसको, भक्त जन नित ध्याव हैं।
तव रसिक जिसको पूज कर, वैकुंठ पद को पाव हैं॥६४॥

करमेल हवि कर धार आहव, नीय में जो ध्यात हैं।
मख वेद उक्त विधान से सो, कर्मठी स्वर जात हैं।
पुन जास को योगीश जन, अणिमादि हित चिन्तन करे।
भव मुक्त पर प्रेमासपद, चैतन्य मय जिसको वरे॥६५॥

जगदंड को पुम्प्रकृति रच है, शक्ति तुमरी पाय के।
पुरुषोत्तमोत्तम करिय रक्षा, देव सुर अपनाय के।
ब्रह्मादि तनु धर जास वश तुम, प्रकृति पूरुष से परे।
जिम वृषभ नथित स्वनासिका निज, नाश वश सेवा करे॥६६॥

जन करत पावन सरित युग, त्रैलोक्य में जो विस्तरी।
तव पाद सलिल प्रवाहिनी इक, अंग संगत अघहरी।
अवतार चरित अपार मनहर, यश सुधारस धरत है।
वह दूसरी वर निम्नगा तव, श्रवण कर अघ हरत है॥६७॥

गर्गाचार्य-वचन दोहा

या विध स्तुतिकर सुरन युत, चतुरानन कर जोर।
नमस्कार कर हरि चरण, बोला वचन बहोर॥६८॥

ब्रह्मा-वचन चौपाई

भू कर भार उतारण हेतू। करी याचना हम खग केतू॥
अवनी भार सर्व प्रभु हरिया। धर्म धरा में स्थापित करिया॥६९॥
दश दिश में कीरति विस्तारी। सकललोक कलि कल्मषहारी॥
यदुकुल धर मनहर अवतारा। कीने चरित अनेक प्रकारा॥७०॥
साधु मनुज कलियुग में होई। गायन श्रवण करेंगे जोई॥
तरहैंगे भव बिना प्रयासा। मंगल मय तव शुभ गुणरासा॥७१॥
सुर कारज अब रहा न कोई। विप्र शाप कुल क्षय शम होई॥
जब से कीन धरा प्रभु वासा। भयो व्योम नभ शर भू मासा॥७२॥

जो इच्छा अब होय तुमारी। परम धाम की करो तयारी॥
करिये पावन लोक हमारे। नारायण हम किंकर थारे॥७३॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

हे विबुधेश्वर जो तुम भाखा। सो सब हमने निश्चय राखा॥
कीना कारज सकल तुमारा। वसुधा कर उरु भार उतारा॥७४॥
यदुवंशी बल युक्त अपारे। शौरय श्रीमद कर मत वारे॥
जग रक्षा हित रोके हम किम। सरितापति को रोकत तट जिम॥७५॥
इनके नाश भये बिन जोई। मम निज धाम गमन अब होई॥
तो तुम नष्ट भया जग जानो। बिन तट रोक समुद्र समानो॥७६॥
यदुकुल नाश उपक्रम कीना। द्विज कुल द्वार शाप हम दीना॥
अब इसका कर नाथ सुरेशा। होगा मम निज धाम प्रवेशा॥७७॥

गर्गाचार्य-वचन दोहा

याविध सुनकर वचन विधि, कर हरि चरण प्रणाम।
तैसे त्रिदिवौकस सकल, गमने निज निज धाम॥७८॥
परम भक्त उद्धव तदा, घोर अरिष्ट निहार।
बोला जाय इकांत में, कर हरि चरण गुहार॥७९॥

उद्धव-वचन चौपाई

देव देव श्रीपति भगवाना। पुण्य श्रवण मंगल गुण गाना॥
निज कुलका अब कर संहारा। तुम क्षिति तजने भये तियारा॥८०॥

तव पद सरसिज युग को स्वामी। तज न सकत मैं प्रभु अनुगामी॥
मोको बी लेवो निज साथा। शरणागत वत्सल यदुनाथा॥८१॥
मंगल मूरति दर्शन थारा। एक वार जिस हृदय निहारा॥
तृण समसो सब जग को त्यागे। तव चरणन में स्थिर मन लागे॥८२॥
हम नयनन से दर्शन कीना। परम इष्ट मय प्रभु को चीना॥
शय्या अटन अशन तव साथा। हम कीना किम त्यागें नाथा॥८३॥
स्त्रक् चन्दन वसनालंकारा। मैं तव भुक्त भोगने वारा॥
अब मत त्याग करो प्रिय मोको। निजजन प्रिय श्रुति भाखत तोको॥८४॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

महा भाग जो तुमने चीना। सोई हम अब निश्चय कीना॥
लोक पाल ब्रह्मादिक जोई। मम महि तजना चाहित सोई॥८५॥
देव काज हमने सब कीना। नर अवतार हेत जिस लीना॥
कलह परस्पर कर यह सारे। नाश होनगे बंधु हमारे॥८६॥
सप्त दिवस में पारावारा। पुरी द्वारिका डोबन हारा॥
अवनी त्यागेंगे हम जबही। मंगल नष्ट होनगे तबही॥८७॥
तात काल तब कलियुग आये। सकल लोक को लेव दबाये॥
इससे आगे जीव निकाया। प्रिय होवनगे पापी प्राया॥८८॥

उद्धव-वचन चौपाई

हे जगदीश्वर अन्तर्यामी। कलियुग लक्षण भाषो स्वामी॥
वक्ता तीन लोक के माहीं। तव समान मम दीसत नाही॥८९॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

कलि लक्षण सुन परम सुजाना। कहूँ समास सुनो धर ध्याना॥
धर्म शास्त्र तज के नर मानी। मलेछ शास्त्र पढ़हिं रति ठानी॥१०॥

पुण्यवान पापिन को गावें। इन्द्रिय जित लम्पट कहलावें॥
ज्ञान विराग रहित कलि माहीं। चोर जार ठग सन्त कहाहीं॥११॥

तीन वर्ण शुचि जो भव आहीं। शूद्रन के सेवक कलि माहीं॥
शुभ सन्तन की हासी निन्दा। सन्तत कर मन होहिं अनन्दा॥१२॥

सकल काल जग में नर नारी। रोग युक्त दुख सहें अपारी॥
यवन मलेछ भूप कलि माहीं। धर्म विहीन सन्त रति नाही॥१३॥

जनक मार कलियुग में कोई। स्वयं भूप बन बैठें सोई॥
पाप पुण्य को जाने नाहीं। स्वयं धर्मात्मा हैं मन माहीं॥१४॥

दोहा

विप्र किरिया शूद्र करे; शूद्रन की भू देव।
शुभ कुल बुद्धि सुरूप बल, नष्ट होय गुरु सेव॥१५॥

चौपाई

चन्दन पान फूल फल चीरा। पूप पूरि दधि माखन खीरा॥
आन देहि जारन को नारी। दुखित पती को अन्न न वारी॥१६॥

पुत्र बधू भगिनी जग जोई। कन्या गमन करे नर कोई॥
सपत्नि मात सास लघु नारी। गमन करेंगे धर्म विसारी॥१७॥

मेघ नीर बिन कलियुग माहीं। बून्द बून्द वर्षें कहिं काहीं॥
खेती रहित खेत जग सारे। पड़े रहिनगे कलि में प्यारे॥९८॥

खेत तालाब नदी में जाई। नदी तड़ाग नीर बिन भाई॥
देख दुखी होंगे नर नारी। अन्न नीर बिन मरे दुखारी॥९९॥

वित्त निमित्त नाम हरि केरे। बेचेंगे मति हीन घनेरे॥
दुराचारिणी पतिव्रत माने। भक्ति विहीन भगत निज जाने॥१००॥

दोहा

धेनु क्षीर बिन होयगी, सर्पि रहित पय होय।
बट पीपल छेदी सबे, दोष न माने कोय॥१०१॥

चौपाई

डाकू चोर दुष्ट जन जोई। पीड़ित करें सन्त को सोई॥
शूद्र करें द्विज नारिन संगा। शूद्र बाम सह विप्र प्रसंगा॥१०२॥

देहातम वादी नर होई। पशू बुद्धि होंगे सब कोई॥
मात पिता की सेव न कर हैं। नारि देव सम पूजन कर हैं॥१०३॥

विप्र करेंगे कलि में खेती। पर शव दाह करें धन हेती॥
यज्ञ सूत्र सन्ध्या शुच हीना। शूद्र अन्न भोजी रति कीना॥१०४॥

वेद शास्त्र के धर्म बिसारी। वर्ण आश्रम मलेछा चारी॥
शिष्य करेंगे गुरु अपमाना। प्रजा भूप का करे न माना॥१०५॥

कन्या का धन लेकर प्यारे। विवाह करेंगे धर्म विसारे॥
यश हित दान करेंगे कोई। देकर पछतावें पुन सोई॥१०६॥

दोहा

देव वृत्ति द्विज वृत्ति पुन, गुरु कुल वृत्ती जोय।
निज पर दीनी जगत में, हरण करेंगे सोय॥१०७॥

चौपाई

पति को ताड़न कर हैं नारी। भृत समान देवहिं तिस गारी॥
काम हेतु पति काट गिरावहिं। जारिनके सह अति सुख पावहिं॥१०८॥
दुराचार व्यापे सब माहीं। सद्भाषण कर है को नाहीं॥
वामन सम नर कलि में सारे। रोम सफेद युवा में प्यारे॥१०९॥
देह पलित युत षोडश माहीं। बीस वर्ष में वृद्ध कहाहीं॥
आठ वर्ष रजसुल हो कोई। गर्भ धरे सुत उत्पन होई॥११०॥
कीट समान जने सुत सोई। सहस विषे वन्ध्या को होई॥
वर्ष षोडषहिं जरा कहावें। रोग ग्रस्त जलदी मर जावें॥१११॥
कुटनी कुलटा जो विभचारी। रजो धर्म युत जग में नारी॥
इत्यादिक द्विज सदन मझारे। करें रसोई कलि में प्यारे॥११२॥

दोहा

उद्धव कलियुग घोर में, अलप आयु नर नारि।
पांच वर्ष की कन्यका, उतपन करे कुमार॥११३॥

चौपाई

महा घोर कलयुग में भाई। म्लेछ होय सब धर्म विहाई॥
अंगुष्ठ तुल मानव सब जानो। हस्त मान तरु महि में मानो॥११४॥

पनस नारियल नग है जोई। सरसों सम इनके फल होई॥
फल विहीन तरु महि में प्यारे। दंपति प्रीति न मनमें धारे॥११५॥
तात दोष निधि कलियुग आहीं। गुण तिस एक महा जगमाहीं॥
शुभ कृत मानस पुण्य महाना। दुषकृत पाप न होय सुजाना॥११६॥

दोहा

सतयुग त्रेता द्वापरहिं, ध्यान यजन फल जोय।
सो हरि कीर्तन कलियुगे, फल पावे सब कोय॥११७॥

चौपाई

ये कलियुग के धर्म बखाने। धरो हृदय में निज हित जाने॥
तुम बुद्धिमान सर्व विध स्याने। धरो धीर मम आज्ञा माने॥११८॥

मास-पारायण उन्तीसवाँ विश्राम॥२९॥

मम पद त्यक्त मही तल माहीं। उद्धव तुमने बसना नाहीं॥
जो तुम धाम गमन मम चावो। तो इस मारग से तुम आवो॥११९॥

हरिगीत छन्द

गृह बन्धु स्वजन स्वदेह में, अहमिति ममत्व न ठानिये।
जो बुद्धि वाणी श्रवण गोचर, सो मनोमय जानिये।
इस लोक सम पर लोक के सब, भोग नश्वर मानिये।
संसार सब दुख रूप है, सुख लेश नाहिं बखानिये॥१२०॥

इम जान इन्द्रिय ग्राम मन निज, वश्य उद्धव कीजिये।
गन्धर्व धाम समान लख जन, संग सब तज दीजिये।
त्रय देह प्रकृति विकार मय को, नाश रूप निहारिये।
आधार सबका आतमा निज, ब्राह्म रूप विचारिये॥१२१॥

नित सच्चिदानन्द आतमामय, तात मोको जोवना।
इम ज्ञान पुन विज्ञान युत तुम, अंध सम भव होवना।
जग चर अचर सब जीव को निज, आतमा मय ध्यायिये।
सन्तुष्ट मन निर्विघ्न इम मम, धाम में तुम आयिये॥१२२॥

यह मग ममातम धाम का नहि, इतर पंथ बखानिया।
अब सृति इसी हम जात है नहि, अन्य साधन ठानिया।
इस पंथ को तुम शोधकर सब, एषणा तज डारिये।
सुख रूप मम गति पाय के पुन, देह को नहि धारिये॥१२३॥

यह पदवि अति तनु जानिये मिल, साथ कोउ न जात है।
एकाकि गमने बहुत मुनिवर, निगम अयन बतात है।
जिस अध्व में मिल जात युग सो, सरणि नहि मम धाम का।
सो मानिये प्रिय पंथ कोई, लोक पति के ग्राम का॥१२४॥

उद्धव-वचन चौपाई

हे योगीश्वर सर्वाधारा। जो प्रभु ज्ञान विराग उचारा॥
विषयासक्त पुरुष जग जोई। तिसको दुष्कर जानूं सोई॥१२५॥

तव माया निर्मित निज प्रानी। इनमें मैंने ममता ठानी॥
अहमिति कुणप काय में कीना। प्रभु तव आतम को नहि चीना॥१२६॥
सुगम उपाय कहो मम कोई। जाकर तव जन की गति होई॥
ज्ञान विराग जास कर पावूँ। देह गेह में मन नहि लावूं॥१२७॥
तुम सर्वज्ञ सर्वदा ज्ञानी। वेद श्वास तव निर अभिमानी॥
मनुज सिद्ध त्रिदिवेशन माहीं। तुम सम वक्ता जानूं नाहीं॥१२८॥
तव माया कर मोहित सारे। ब्रह्मादिक भव विषय निहारे॥
जग दुखतप्त खिन्न मति मेरी। श्रीपति मैं शरणागति तेरी॥१२९॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

जब लग ज्ञान विराग न होई। तब लग भक्ति करे सब कोई॥
यह निष्कंटक पंथ निहारो। इस सम नहि मग इतर उचारो॥१३०॥
सांख्य योग तप आदिक जेते। करत न निज वश मोको तेते॥
एक भक्ति कर जन वश करहै। खग सम मन पंजर में धरहै॥१३१॥
भोजन करत यथा प्रति ग्रासा। तुष्टि पुष्टि अरु भूख विनासा॥
तथा भक्तिकर ज्ञान विरागा। होवत द्रुत मम पद अनुरागा॥१३२॥
मोर भक्ति सो बहुत प्रकारा। तदपि कछुक अब करूँ उचारा॥
मम प्रतिमा हित गृह बनवावे। तिसमें विविध कुसुम लगवावे॥१३३॥
मन्दिर लीपन करे बुहारी। यह पद सेवा मोर उचारी॥
निजकर मूरति पूजन ठाने। मम बिन दूसर भाव न आने॥१३४॥

माला पुष्प सुगन्ध चढ़ावे। बहु विध भोजन भोग लगावे॥
मम प्रसाद संतन को देवे। पुन कुछ किंचित निज बी लेवे॥१३५॥

जन्म दिवस मम कर उपवासा। त्यागे तिस दिन हास्य विलासा॥
बहु विध मम हित उत्सव ठाने। लोभादिक नहिं मन में आने॥१३६॥

यह मम भक्ति समर्चन नामा। पुनर करे अष्टांग प्रणामा॥
मोको निज स्वामी कर माने। भवन वस्तु सब हमरी जाने॥१३७॥

अपनी ममता करे न कोई। इस विध दास भाव मम होई॥
परम दयित जो मोको मानत। इतर विषे नहि प्रीती ठानत॥१३८॥

मम वचनों में कर विश्वासा। अन्य मनुज की करत न आसा॥
योग क्षेम उद्यम नहि कर है। मोको सखा भाव कर वर है॥१३९॥

मात पिता धन वनिता जोई। भजन विघ्न कारक जो होई॥
तिनको जन मुमुक्ष परिहरि हैं। सर्व समर्पण या विध कर हैं॥१४०॥

मम गुण कर्म श्रवण नित करना। लोक गीत में चित्त न धरना॥
चरित सुनत जब बढ़त सुप्रेमा। गान करन का करत सुनेमा॥१४१॥

मम गुण गावत पुलकित होवत। लोक लाज तज हसत प्ररोवत॥
निश दिन मम पद बढ़त सुप्रीती। छूटत लौकिक वैदिक रीती॥१४२॥

पुन मम ध्यान मगन जब होवत। तनु धर्मन को कछु नहि जोवत॥
सर्व विश्व मम रूप निहारत। कामादिक सब मन से टारत॥१४३॥

नवधाभक्ति जास उर आवे। ज्ञान विराग सपदि सो पावे॥
सब साधन कर कारण जोई। श्रुति संमत अब भाखूं सोई॥१४४॥

हरिगीतिका छन्द

सतसंग सम नहि जान उद्धव, योग जप तप ज्ञान को।
मख त्याग सांख्य विचार विद्या, नियम यम व्रत दानको।
सत संग दुस्संग हरत पुन मम, धाम पंथ दिखाव है।
मम साधु सेवा करता जो द्रुत, मोक्ष पद सो पाव है॥१४५॥

अस हम प्रसन्न न होत मखकर, हवन क्षेत्र सनान से।
भव संत मम तनु जानिये जस, होत सत्सन्मान से।
दैत्येय राक्षस देव अप्सर, सिद्ध चारण वन मृगा।
विद्याधरोरग वैश्य वनिता, शूद्र क्षत्रिय द्विज खगा॥१४६॥

रज तम स्वभाव विभीषणादिक, व्याध हनुमत जानिये।
भव मुक्त भये अनेक यह सत, संग महिमा मानिये।
सब साधनों से हीन बी जन, साधु संगति तरत हैं।
सत्संग बिन सुर मनुज पसु सम, नरक में सो परत हैं॥१४७॥

उद्धव-वचन चौपाई

भक्त संत की बहु प्रभुताई। भगवन् श्रीमुख से तुम गाई॥
तिन के लक्षण करो बखाना। जाकर मोको होवे ज्ञाना॥१४८॥

अपनी समुझ संत सब बन हैं। पर पैसा हित गो द्विज हन हैं॥
दीसत बहु विध भक्त तुमारो। इनके बी प्रभु भेद उचारो॥१४९॥
ब्रह्मज्ञान की प्रभुता भारी। श्रुति आगम पुन नाथ उचारी॥
ज्ञानी के लक्षण प्रभु कहिये। मम मन संशय मल को दहिये॥१५०॥

त्रिविध भक्त लक्षण

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

मोमें सर्व जगत् को जानत। सब में मोको पूरण मानत॥
जाका मन न विषय में जावत। जोउ कदाचित् ऐन्द्रिय पावत॥१५१॥
द्वेष हर्ष नहिं तामें ठाने। सकल विश्व मम माया जाने॥
तनु इंद्रिय असुमन मति धर्मा। जनि श्रम क्षुध भय तृष्णा कर्मा॥१५२॥
इन संसार धर्म कर जोई। ईश्वर भक्त विकल नहि होई॥
काम वासना जाके नाहीं। कर्म अहंकृत नहि जिस माहीं॥१५३॥
जन्म कर्म वर्णाश्रम जाती। इनकी मदमति नहि जिस आती॥
निज पर भेद न जिसके होई। शान्त सर्व समदर्शी जोई॥१५४॥
त्रिभुवन लक्ष्मी के हित लागे। जो मम भजन ध्यान नहीं त्यागे॥
मोसे इतर सार नहि ध्यावत। इत उत क्षण भर मन नहि जावत॥१५५॥
मम पद नख मणि शीतलताई। जास भक्त के मन में आई॥
ताके ढिग भव ताप न आवे। चंद्र उदय रवि ताप नसावे॥१५६॥

जपत नाम जो मम कल्मषहर। मोको बांधत प्रेम डोर कर॥
जाके हृदय वास मम होई। उत्तम भक्त जानिये सोई॥१५७॥
जो जन जोको प्रियकर मानत। मम सन्तन से मैत्री ठानत॥
दुखी जनों के दुख परिहर हैं। रिपु में बैर प्रीति नहि करहैं॥१५८॥
सो जन मध्यम भक्त उचारा। चतुर्भेद के देखन वारा॥
श्रद्धाकर जो पूजा ठानत। प्रतिमा मात्र देवकर मानत॥१५९॥
मम संतन को कुछ नहि जाने। तिनको मेरा रूप न माने॥
सबमें मोको जिस नहि जाना। सो जन प्राकृत भक्त बखाना॥१६०॥

अथ साधु-लक्षण हरिगीतिका छन्द

जो अति कृपालू अचर चर में, द्रोह लव नहिं करत है।
अपराधि जन में क्षांति युत नित, क्रूरता परिहरत है।
निन्दादि वर्जित सत्यवादी, सकल जग उपकार का।
सुख खेद में सम बुद्धि जाकी, दान्त इन्द्रिय धार का॥१६१॥
नित विषय कर अक्षुभित मन जो, हृदय कोमल भजत है।
आचारसत् निष्किंचनातम, दंभ इच्छा तजत है।
सन्तोष युत आहार जिसका, शान्त अन्तःकरण है।
निज धर्म में स्थिर रहत जो मम, चरण की नित शरण है॥१६२॥
नित सावधान गंभीर मन, उपदेश शक्ति धरत है।
पुन क्षुत्पिपासा शोक जनि मृति, मोह को वश करत है।

पर मान दाता मान वर्जित, मित्र सबका मानिये।
विज्ञान युत दुख काल धीरज, संत सो जन जानिये॥१६३॥

अथ ज्ञानी-लक्षण हरिगीतिका छन्द

सर्वत्र जानत आतमा निज, भेद भाव न मान है।
निज बन्धु सेवक शत्रु को पुन, तुल्य करके जान है।
पुन सत्त्व रज तम गुणन कर, जो क्षुभित चित्त न होत है।
सुख शुभ अशुभ दुख पायकर, पुन हँसत नहि न च रोत है॥१६४॥

संस्तवन निन्दा मान पुन, अपमान को सम जान है।
पाषाण मृतिका कनक बल्कल, क्षौम पट सम मान है।
धनधाम वाम अराम कुटि, आरंभ कुछ नहि करत है।
पुन भव उदास स्वरूप में जो, सर्वदा स्थिति धरत है॥१६५॥

भय राग द्वेष न क्रोध जाके, कामना सब तजज है।
नित ब्रह्म सुखकर तुष्टमति सुख, साथ महि में ब्रजत है।
देहादि को भ्रमरूप लख निज, योग क्षेम न करत है।
सो जानिये विज्ञानयुत जो, काल से नहि डरत है॥१६६॥

निज बंधु नाश कलेश को, अब तात तुम न निहारिये।
तव मरण समय समीप है, निज मोक्ष पंथ विचारिये।
यह देश बास न योग्य अब, तुम बदरिकाश्रम जायिये।
श्रीअलकनन्दा तीर में, मम ध्यान में मन लायिये॥१६७॥

हमसे सुना जो ज्ञान तुमने, मनन तांका कीजिये।
निज आतमा को जानकर इस, देह को तज दीजिये।
सब वासना को त्यागकर, चिद् रूप में स्थिति पायिये।
इस रीति मोको पायकर, पुन जगत् में नहिं आयिये॥१६८॥

गर्गाचार्य-वचन दोहा

या विध सुन प्रभु के वचन, विरह विकलता धार।
बोला उद्धव जोर कर, उर में प्रेम अपार॥१६९॥

उद्धव-वचन चौपाई

देव देव प्रभु विरह तुमारा। सह न सकत अब चित्त हमारा॥
तदपि नाथ की आज्ञा पाकर। जावतहूँ मैं तव आश्रम पर॥१७०॥
जब वियोग होगा प्रभु थारा। नहि कुछ बनना ध्यान विचारा॥
कुछ आलम्बन देवो स्वामी। पाहि पाहि मैं तव अनुगामी॥१७१॥

गर्गाचार्य-वचन दोहा

या विध कहकर विकल हो, गिरा गोत्रधर पाद।
रुदन करत धीरज रहित, मन में प्रेम विषाद॥१७२॥
करुणा कर तब कृष्ण ने, ताको हृदय लगाय।
दिये पादुके धीर दे, नयन नीर से छाय॥१७३॥

कर प्रदक्षिणा कृष्ण को, पुन पुन वंदन ठान।
नयन नीर कर हरि चरण, धोकर भक्त प्रधान॥१७४॥

दुस्त्यज केशव पद कमल, पादुक शिर में धार।
गमना आतुर विरह कर, पुन पुन प्रभुहिं निहार॥१७५॥

अथ तब द्वारावती में, लख उत्पात महान।
यदुकुल वृद्ध नृपादि को, बोले श्री भगवान॥१७६॥

श्रीकृष्ण-वचन हरिगीत छन्द

उत्पात बहु विध आत यह, सब ओर से दरसात हैं।
द्विज शापने यदुवंश घेरा, मोघ जो नहि जात हैं।
जो जीवने की आस तो, न निवास पुर में ठानिये।
अब वास योग्य प्रभास को, तुम पुण्य तीरथ जानिये॥१७७॥

युग प्रथम दक्ष प्रजेश के शशि, शापकर क्षय युत भया।
आप्लाव कर जिस क्षेत्र में, राकेश का सो रुज गया।
तिस क्षेत्र मांहि सनान कर, अब पितर अमर मनायिये।
आपूप पायस अन्न कर पुन, विदुष विप्र जिमायिये॥१७८॥

गो वसन भूषण रत्न शय्या, दान तिनको दीजिये।
बहु जन्म अर्जित कष्ट बर्धक, पाप भर्जन कीजिये।
शुभ समय तीरथ प्रेम कर वर, पात्र में जो दान है।
सो पुण्य करत विनाश किल्विष, अल्प बी सु महान है॥१७९॥

गर्गाचार्य-वचन दोहा

यादव गये प्रभास में, हरि की आज्ञा मान।
जलयानों में बैठकर, तथा राम भगवान॥१८०॥

विप्र शाप कर भ्रष्ट मति, कीना मदिरा पान।
भये बावरे सकल तब, उपजा कलह महान॥१८१॥

शस्त्र अस्त्र से करा रण, बंधु बंधु के साथ।
टूट गये आयुध सकल, लिये एरका हाथ॥१८२॥

सो तृण हूए कुलिश सम, पिता पुत्र को मार।
कोटिन यादव एक दिन, भये सर्व संहार॥१८३॥

सिंधु तीर में बैठकर, राम समाधि लगाय।
मनुज भाव को त्यागकर, परमधाम निज पाय॥१८४॥

बंधु गमन तब निरख कर, भये कृष्ण उपराम।
पीपल नीचे धरणि में, बैठे श्री घनश्याम॥१८५॥

बिना धूम पावक सदृश, तेज पुंज उर हार।
गल कौस्तुभ मणि चतुर्भुज, मुकुट सीस में धार॥१८६॥

हरि वियोग नहि सह सका, उद्धव प्रेम निधान।
गमना उलट प्रभास में, जहाँ रहे भगवान॥१८७॥

कीनी प्रभु पद वन्दना, पुलकावलि युत गात।
स्त्रवत नयन गद्‌गद् गिरा, निकसत नहि मुख बात॥१८८॥

हस्त जोड़ ठाड़ा भया, इकटक रहा निहार।
देख दशा तिसकी हरी, बोले करुणागार॥१८९॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

तात सौम्य तव दशा निहारी। होत अधीरज बुद्धि हमारी॥
कर विचार मानस थिर करिये। विरह विकलता को परिहरिये॥१९०॥

तनु कर योग सदा नहि होई। कहत वेद जानत सब कोई॥
आतम एक सर्व तनु माहीं। यामें भेद भाव कुछ नाहीं॥१९१॥

तिसमें योग वियोग न होई। निज मम रूप जानिये सोई॥
देह दृष्टि को तात उठावो। निज आतमकर मोको ध्यावो॥१९२॥

गोचर में जो जन मन लावत। सो भव नाना दुख को पावत॥
दृश्यमान सब बिनसन वारो। आतम एक सत्य निर्धारो॥१९३॥

कोटिन ये सब बंधु हमारे। क्षण में अब शव भये विचारे॥
यह ही गति सबकी तुम जानो। तनुकर थिर नहि कोई मानो॥१९४॥

अब तुम तात देर नहि लावो। मम बदरी आश्रम में जावो॥
प्राकृत तनु को तज कर ताता। पावो मम स्वरूप अवदाता॥१९५॥

गर्गाचार्य-वचन दोहा

सुनकर वचन दयालु के, कर पद-पद्म प्रणाम।
रुदन करत उद्धव गया, नर-नारायण धाम॥१९६॥

जैसे हरि उपदेशिया, तैसे ही तिस कीन।
तीन तनू को त्यागकर, भया ब्रह्म में लीन॥१९७॥

दारुक हरि का सारथी, स्यन्दन को ले साथ।
खोजत खोजत गया तब, जहाँ रहे निज नाथ॥१९८॥

उतर यान से सपदि सो, प्रभु पद कीन जुहार।
नयन नीर गद्गद् गिरा, दारुक वचन उचार॥१९९॥

दारुक-वचन चौपाई

प्रभु पद पंकज बिना निहारे। भये तिमिर युत नयन हमारे॥
आशा भेद नाथ नहि जानूं। तम व्यावृत सब भवको मानूं॥२००॥
जिम निश वारिद में शशि आवत। निज अवयव भी नहि दर्सावत॥
इस उत मैं भटका सुर राई। बिन प्रभु चरण शांति नहि पाई॥२०१॥

गर्गाचार्य-वचन दोहा

या विध कहते सूत के, स्यन्दन अश्व समेत।
चक्रादिक आयुध सकल, गये विकुण्ठ निकेत॥२०२॥

विस्मय युत दारुक भया, उड़ा देख हरियान।
निज बंधुन को याद कर, बोले तब भगवान॥२०३॥

श्रीकृष्ण-वचन चौपाई

सूत द्वारका में तुम जावो। सब बंधुन का मरण सुनावो॥
आरज का महि त्याग बखानो। हमरी भी तैयारी जानो॥२०४॥

मात पिता शिशु बंधु हमारे। इन्द्रप्रस्थ जावें द्रुत सारे॥
पुर में रहन न पावे कोई। सिंधु डुबावेगा अब सोई॥२०५॥

दारुक तुम मोमें मन धरिये। बांधव देह मोह परिहरिये॥
मम माया रचना जग जानो। मोको निज आतमकर मानो॥२०६॥

ज्ञान नेष्ठता मन में धरिये। कर विचार मति उपशम करिये॥
या विध दारुक मोको पावो। पुन संसार उलट नहि आवो॥२०७॥

गर्गाचार्य-वचन दोहा

प्रभु वचनामृत श्रवण कर, नमस्कार कर पाद।
कर प्रदक्षिणा पुर गया, हृदय वियोग विषाद॥२०८॥

हरिगीतिका छन्द

विधि शंभु देवी वासवादिक, देव सिद्ध प्रजेश्वरा।
विद्याधराप्सर यक्ष चारण, पितर गन्धर्वेश्वरा।
यदुनाथ के निर्याण उत्सव, आय सब निरखन लिये।
निज निज विमान प्रचार कर तब, व्योम तल संकुल किये॥२०९॥

हरि जन्म कर्म विशाल गुण गण, गात पुलकित गात हैं।
नन्दन वनांघ्रिप कुसुम विकसित, कृष्ण पर बरसात हैं।
जय जय उचारत प्रेमकर निज, भाग्य बहु कर मान हैं।
प्रभु दर्स कर नहिं तृप्त होवत, स्वर्ग सुख लव जान हैं॥२१०॥

तब होय अन्तर्धान अच्युत, सुरन ने नहिं जानिया।
अज्ञात गति लख कृष्ण की, ब्रह्मादि विस्मय मानिया।

दुन्दुभि बजाई हर्ष कर सुर पुष्प वृष्टी पुन करी।
सब देव गये स्वधाम में मुख, कहत जय जय श्रीहरी॥२११॥

दोहा

दारुक पहुँचा द्वारका, कृष्ण विरह दुख पाय।
उग्रसेन वसुदेव के, गिरा चरण में जाय॥२१२॥

रुदन करत तिनको तदा, कहा सकल का हाल।
सुनकर सब मूर्छित भये, रहा न तनु का ख्याल॥२१३॥

पुन उठकर रोने लगे, उर मुख पीटत दार।
गमने तुरित प्रभास में, शव समुदाय निहार॥२१४॥

सुत पति बांधव कंठ लग, कर हैं रुदन अपार।
निज निज पति के साथ तब, जरीं चिता में दार॥२१५॥

देवक तनया रोहिणी, शौरी भये बिहाल।
राम कृष्ण देखे बिना, प्राण तजे तत्काल॥२१६॥

कर विलाप बहु रुक्मिणी, आदि हरि की दार।
कीना अनल प्रवेश द्रुत, माधव पद उर धार॥२१७॥

अर्जुन केशव विरह कर, मरणान्तक दुख पाय।
गीता वचन विचारकर, हठ से मन ठहराय॥२१८॥

दाह क्रिया कर सकल की, गया स्वकीय अगार।
साथ लिये सब बचे जो, वनिता वृद्ध कुमार॥२१९॥

वज्रनाभ अनिरुद्ध सुत, तांको निज सुत चीन।
धर्म तनय ने नेह कर, मथुरा का नृप कीन॥२२०॥

हरि वियोग को पांडु सुत, मरे हिमालय जाय।
बिन हरि मन्दिर द्वारका, सागर लीन डुबाय॥२२१॥

इत्यादिक हरि चरित बहु, को कवि पावे पार।
मैं कुछ वर्णन करे द्विज, निज प्रज्ञा अनुसार॥२२२॥

शौनक-वचन चौपाई

मुने आप अति कीनी दाया। हरि चरितामृत पान कराया॥
त्रिदिवेशन को दुर्लभ जोई। जासु सुनत नहि संसृति होई॥२२३॥

ब्रह्मानन्द तुल्य सुख दाता। जो श्रोता को भव दुख त्राता॥
श्रवण करत प्रभुपद उर आवत। ज्ञान विराग भक्ति द्रुत पावत॥२२४॥

क्या करिये हम तव उपहारा। बारम्बार प्रणाम हमारा॥
इसके सम नहि वस्तू कोई। यह निर्मोल रत्न सम होई॥२२५॥

दामोदर निज तंत्र विहारी। निज इच्छा कर नर तनु धारी॥
काल मृत्यु यम कर्म स्वभावा। इनके वश प्राकृत जन आवा॥२२६॥

यह सब अच्युत के आधीना। प्रभु प्राकृत गुण बंधन हीना॥
भक्त ध्येय तनु हरि ने धारी। पर लावण्य धाम मनहारी॥२२७॥

संसृति सागर में जो तरणी। दर्शन मात्र मनुज अघ हरणी॥
किम नहि राखी तनु महि माहीं। हरि का शास्ता दूसर नाहीं॥२२८॥
जो केशव की होवत आसा। कोटिकलपक्षितिकरतनिवासा॥
मृत गुरुसुत को जो प्रभु लाये। दग्ध परीक्षित पुन जीवाये॥२२९॥
सत्य धर्म श्री कीरति साथा। परम धाम गमने यदुनाथा॥
भक्तन के लोचन मन प्राना। हरे स्व मूरति कर भगवाना॥२३०॥

गर्गाचार्य-वचन चौपाई

जब पृथिवी अघकर दुख पावत। तब अच्युत धरणी में आवत॥
पाप प्रवर्त्तक जन संहारत। पुन श्रीपति निजधाम पधारत॥२३१॥
सदा न ईश्वर का महिवासा। इतर मनुज मत करियो आसा॥
तनुका धारण अति दुख मूला। देत शोक मोह संसृति शूला॥२३२॥
जन विराग के कारण हेतू। तजत धरा को खग पति केतू॥
गमनागमनादिक कृत जोई। यह समस्त हरि लीला होई॥२३३॥
सर्व विश्व को उत्पन्न कर है। पालन कर पुन निज संहर है॥
बालक सम प्रभु लीला ठानत। हर्ष शोक नहि मन में आनत॥२३४॥
जाके निजपर भेद न कोई। किस हित महि तनु राखे सोई॥
जस हरि भक्त भावना कर हैं। तस अच्युत निज विग्रह धर हैं॥२३५॥
कर विचार देखिये जोई। ग्रहण त्याग नहिं तामें होई॥
निराकार चिति पूरण माहीं। गमनागमन योग्यता नाहीं॥२३६॥

जिम नट माया जाल फिलावत। निज में नाना रूप दिखावत॥
पुन जब मेटत सो निज माया। एक रूप कर नट दरसाया॥२३७॥

तैसे श्रीपति लीला जानो। इसमें कुछ विस्मय नहि मानो॥
करत प्रकृति कर ब्रह्म विहारा। स्वयं शुद्ध चेतन अविकारा॥२३८॥

कृष्ण भक्त विज्ञानी जोई। सदा तिनें हरि प्रापित होई॥
कबी अगोचर होवत नाहीं। वसत सदा तिनके मन माहीं॥२३९॥

यदपि सकल को प्रापित सोई। सर्वातम पूरण प्रभु होई॥
गल गत मणि विस्मृत सम जानो। अज्ञन को हरि दूर बखानो॥२४०॥

जिस प्रभु ने निज प्रकृति पसारी। जाकर मोहित सुर नर नारी॥
हम तुम पर सो करुणा करिये। माया बंधन को परि हरिये॥२४१॥

ग्रंथकार-वचन दोहा

या विध कहकर गर्गद्विज, माधव को कर याद।
पुलकित तनु गद्गद् गिरा, हृदय अनन्त हलाद॥२४२॥

शौनक को पुन भाख के, गये गर्ग निज धाम।
सर्व द्विजन ने तास पद, कीने दंड प्रणाम॥२४३॥

नारद पुन द्विज गर्ग ने, कीना हरि गुण गान।
यथा बुद्धि तिस चरित से, मैं कुछ करा बखान॥२४४॥

सकल ग्रंथ का सार त्रय, हरि पद पंकज ध्यान।
उभय लोक वैराग्य पुन, एकातम कर ज्ञान॥२४५॥

सुनत सुनावत प्रेम से, जो कोई यह ताल।
भक्ति ज्ञान निज मोक्ष पद, देत तिसें गोपाल॥२४६॥

कवि कठोर मति कुलिश सम, इनमें क्या नहिं होय।
इष्ट मित्र गुरु विरह को, लिखत काव्य कर जोय॥२४७॥

ग्रंथ समापित भया तिथि, कृष्ण त्रयोदशि नाम।
अंक बाण ग्रह चन्द्र में, शुचि गर्गालय ग्राम॥२४८॥

प्रथम वास कर मधुपुरी, अब गर्गालय वास।
जानो मथुरा परगना, गोकुलजी के पास॥२४९॥

जो हरि भक्त विरक्त उर, तत्त्व निष्ठ जग मीत।
तिनके चरण सरोज में, वंदन करूं सप्रीत॥२५०॥

संस्कृत श्लोकाः

प्रायो भागवताब्धितो यदुपते चारित्र्यरत्नानि ते
गर्गाचार्य्यकृतान्निजानुभवतो बुद्ध्युद्धृतानीह तैः।
ग्रंथाद्रेर्गजमस्तकादितरतो वैश्यापणात्पुस्तकाद्-
धारा-कृत्य समर्पितस्तव गले स्वं दर्शनं देहि मे॥२५१॥

अज्ञानोत्थमनादिकं खलमनश्शार्दूलविक्रीडितं
संसाराख्यवनं स्मरादिभुजगं नारीपिशाचीगृहम्।

आशातोयदवृष्टिपुष्टमफलं शब्दादिपुष्पं मम
हे दामोदर भक्तवत्यलहरे ज्ञानाग्निना नाशय॥२५२॥

रामं रामानुजं वन्दे याभ्यां खर-नृपात्मजौ।
दैत्यौ हतावयोध्यायां मथुरायां निवासिनौ॥२५३॥

नो इन्द्रवज्रायुधशूलिशूलैर्नो चक्रिणश्चक्रसुदर्शनेन।
नो पाशिपाशैश्च विनात्मदृष्टिं याचे गुरो तां किल शत्रुनाशः॥२५४॥

भाषा संस्कृतछन्दांसि, तापानलगुणाग्नयः।
आकाशनेत्रतालाश्च, मानं सर्वमिहोच्यते॥२५५॥

इति श्रीमत्परमहंसोदासीनशिरोवतंसस्वामिकार्ष्णिज्ञानदास-
शिष्येण श्रीरामकृष्णपदाम्बुरुहचिन्मकरन्दमधुपेन
कार्ष्णिगोपालदासाह्वेन विनिर्मिते गोपालविलासे
उत्तरविश्रामे विंशस्तालः समाप्तः॥२०॥

मास पारायण तीसवां विश्राम॥३०॥

पाक्षिक पारायण पन्द्रहवाँ विश्राम॥१५॥

नवाह्न पारायण नवम विश्राम॥९॥
साप्ताहिक परायण सातवाँ विश्राम॥७॥

अथ श्रीकृष्ण बलराम-नीराजनम्

राम कृष्ण कीरति भवहरणी॥ टेक॥
भक्ति ज्ञान विज्ञान प्रकाशक जन्म-जन्म अघ ओघ विनाशक॥
आधि व्याधि यम अनुचर त्रासक संसृति सागर विस्तृत तरणी॥१॥
मोह मदादिक कंज निशाकर कुमति कुमुद कुल पुंज दिवाकर॥
सुख संपद सद्‌गुण रत्नाकर संकर्षण केशव वश करणी॥२॥
कीरति ललित अमल श्री कारण रागद्वेष भय तिमिर निवारण॥
कामादिक तस्कर गण मारण महिमा निगम पुराणन वरणी॥३॥
विघ्न विनाशक जिम गण नायक प्रभु पद पंकज प्रीति विधायक॥
श्रीगोपाल अभय पद दायक मोक्ष धाम की निर्भय सरणी॥४॥

इति श्रीबलरामकृष्ण नीराजनम् उदासीनशिरोवतंस
श्रीकार्ष्णि गोपालदासविनिर्मितं समाप्तम्॥

अथ प्रीतिपञ्चकम्

गुणी ज्ञानी ख्याता द्रविण बहु दाता तनुमती
श्रुती शास्त्रं ज्ञाता विधुवदन भाता गुरु गती।
सखा साले माता करत हित ताता क्षिति पत
भया तो क्या भ्राता हरिपद न जाता यदि रती॥१॥

धनू खड्गों वारे करत सुर सारे नर नती।
बली बीरा पारे समर शर मारे रण पती॥
युवा प्राणागारे सरितपति क्षारे प्रपिबती।
भया तो क्या प्यारे हरि पद न धारे यदि रती॥२॥

यमी योगी यागी विबुध सुख त्यागी द्विज यती।
वसू स्वामी रागी जगति यश जागी मृदु अती॥
प्रभा भानू आगी सम तनु अदागी सत व्रती।
भया तो क्या भागी हरि पद न लागी यदि रती॥३॥

मिली श्यामा नारी विधु वदन वारी पति व्रती।
सदा स्वामी प्यारी गुण गण अगारी गज गती॥
पती आज्ञाकारी विशद तनु वारी अति नती।
सुखी क्या धी थारी हरि पद न धारी यदि रती॥४॥

मृदू शय्या शायी कर जन बड़ाई ऋत वती।
सिता युक्ता खाई घृत पय मलाई नित प्रती॥
मणी माला छाई तनु सुरभि आई प्रिय अती।
भया तो क्या भाई हरि पद न पाई यदि रती॥५॥

इतिश्रीमद्उदासीनस्वामिकार्ष्णिगोपालदासविर्निमतं
प्रीतिपञ्चकं संपूर्णम्।

॥ श्री गुरु आरती ॥

कार्ष्णि वृन्द मिल आरति कीजै, गुरु गोपाल चरण चित दीजै।
गुरु विधि ईश्वर विष्णु बखाना, गुरु बिन जन को होत न ज्ञाना॥
वेद पुराण करत इम गाना, गुरु सेवा कर जनि फल लीजै।
कार्ष्णि वृन्द मिल आरति कीजै, गुरु गोपाल चरण चित दीजै॥
राम कृष्ण गुरु सेवा कीनी, सो मानो प्रभु शिक्षा दीनी।
कार्ष्णि गुरू गुरु करुणा चीनी, तन, मन, धन गुरु अर्पण कीजै॥
कार्ष्णि वृन्द मिल आरति कीजै, गुरु गोपाल चरण चित दीजै।
ब्रह्मरूप कर गुरु को जाने, जीव भाव नहिं उर में आने॥
गुरु आज्ञा निश दिन जन माने, गुरु उपदेश श्रवण भव छीजे।
कार्ष्णि वृन्द मिल आरति कीजै, गरु गोपाल चरण चित दीजै॥
जप तप संयम तीरथ दाना, योग याग व्रत गंग सनाना।
इन कर फल गुरु भक्ति बखाना, उभय लोग सुख गुरु वर दीजै॥
कार्ष्णि वृन्द मिल आरति कीजै, गुरु गोपाल चरण चित दीजै।
कृष्णानन्द अनन्द समावे, जो गुरु आरति प्रति दिन गावे॥
सो यदुनन्दन उर अति भावे, भाव सहित गुरु भक्ति करीजै।
कार्ष्णि वृन्द मिल आरति कीजै, गुरु गोपाल चरण चित दीजै॥

❋ ❋ ❋

सकल ग्रन्थ का सार त्रय, माधव गुणगणगान।
उभय लोक वैराग्य पुन, ऐकातम कर गान।।
कृष्ण चरण रति जो चहे, अथवा पद निर्वान।
भाव सहित सो यह कथा, करे श्रवण पुट पान।।

।। वासुदेवः सर्वम् ।।

ॐ क्लीं

कार्ष्णि प्रकाशन

हरि प्रापति कर मुख यह कारण।
प्रेम सहित हरि चरित उचारण।।